॥ श्रीः ॥

श्रीकेदारकल्पः ।

भाषा टीका सहितः ।

देव, यक्ष, गंधर्व, किन्नर, कुबेरादिक पुरियों का विचित्र आख्यान; कैलास के मनमोहक मार्गों का अद्भुत वर्णन ; सिद्ध और साधकों का अघोरमंत्रबल से सदेह कैलासगमन इत्यादि, इत्यादि अनेक गुप्त रहस्यों से विभूषित ग्रंथ—रत्न ।

जिसको

पं० रामचंद्र नम्बूरी शर्म्मा अध्यक्ष कैलासकीर्ति-आश्रम, बद्रिकाश्रम गढ़वाल ने

सर्वसाधारण लोगों के हितार्थ यत्नपूर्वक संग्रहकर प्रकाशित किया ।

बी. एल. पावगी द्वारा, हितचिन्तक प्रेस,
रामघाट, बनारस सिटी में मुद्रित ।

प्रथमबार १०००) (सन १९१३ ईसवी ।

भूमिका ।

सम्पूर्ण सनातनधर्म्मानुरागी तीर्थसेवी परमश्रद्धालु राजा, महाराजा, सेठ साहूकार चारो वर्णाश्रम मर्य्यादाओं के रक्षक श्रीमानों को विदित हो कि शास्त्र पुराणों में इस उत्तराखण्डस्थ केदार तीर्थ की समान और किसी तीर्थ की महिमा नहीं कही है, इसमें सन्देह नहीं कि बड़े बड़े तपस्वी, ज्ञानी, ध्यानी सब इसी स्थान में आनकर तपस्या करके सिद्धि और शान्ति को प्राप्त हुये हैं, भगवान श्रीकृष्ण ने अपने परम सखा उद्धव को इसी स्थान में गमन का उपदेश देकर दुर्वासाजी के कठिन शाप से मुक्त किया, पांचों पांडव विदुरजी भी इसी मार्ग से स्वर्गारोहण करचुके हैं, कलिमल के शमन के निमित्त शंकर केदार नाम से यहां विराजते हैं, इसी क्षेत्र में तीर्थत्व ज्यों का त्यों अबतक विद्यमान है, यही उत्तराखण्ड है, यही तपोवन है, यही योगियों का परमाधार है, यही हमारे पुरुषाओं का गौरवस्थान है, यही लक्षों मनुष्यों के पापसमूहों का विनाशक है, यही भगवति गंगा की पवित्र धाराओं से वेष्ठित है, यही सुर किन्नरों की क्रीड़ाभूमि है, यही इन्द्रादि देवताओं के गमनागमन का स्थल है, चारों धामों में यही प्रथम है, यही सब तीर्थों का शिरोरत्न है, यही चन्द्रचूड़ामणि शंकर का परमरम्य कैलास है, परन्तु जिस तीर्थराज की इतनी महिमा और इतनी विभूति है, उसका वास्तविक आनन्द बिना ग्रंथ शास्त्र के प्रकाशित हुये सर्व साधारण को प्राप्त नहीं होसक्ता इसहेतु ही हमने बड़े परिश्रम और खोज से मंदिर श्रीबद्रीनारायण के ग्रंथकोष से प्राचीन हस्तलिखित प्रति केदारकल्प की प्राप्त कर ब्राह्मणश्रेष्ठ डिमरीकुलभूषण पंडितवर हरिकृष्ण डिमरी महाशय से चंद्रप्रभा टीका कराकर प्रकाशित किया है, यह ग्रंथरत्न क्या है सो तो पाठकों को पढ़ने से ही मालूम होगा किन्तु इसमें कैलास महापथ को सिद्ध और साधकों का मृत्युलोक से जाना बीच बीच में उन्हें कुबेर, इंद्र, वरुण, विष्णु,

ब्रह्मा, शिव, यमपुरि आदिकों का मिलना, देवकन्याओं का मोहित करना, यक्षों से भयभीत होकर किस मंत्रोपचार से साधकों ने प्रत्येक पुरियों में प्रवेश किया है उसका वर्णन कैलास पुरियों की अपूर्व रचना और सौन्दर्य्य का विवरण और अगम्यागम मार्गों का वृत्तान्त पढ़कर तो प्रत्यक्ष स्वर्गीय आनन्द प्राप्त होता है, इस ग्रंथरत्न को पढ़ने व सुनने से कैलास शिवलोक के गुप्त मार्गों के वृत्तान्त को जानने के अतिरिक्त बड़ा माहात्म्य मिलता है, नास्तिकों का नास्तिकत्व इस ग्रंथ के पाठ करने से अवश्य ही नष्ट होता है क्योंकि अब भी यदि इन मार्गों से मनुष्य महापथादिकों को गमन करे तो इस ग्रंथरत्न में उसकी क्रिया मंत्रादि बड़ी युक्ति दर्शाकर लिखेगये हैं, केदार तीर्थ से कुछ आगे के मार्ग तक जो महात्माजन जाते हैं ठीक ही ग्रंथ में लिखे हुये मार्ग और स्थानों का वर्णन करते हैं, इसीसे उन पुरियों का भी वर्णन यथार्थ ही ग्रंथानुसार सिद्ध हो सक्ता है। यह आर्ष ग्रंथ है, व्याकरण विरुद्ध जहांपर विद्वान जन त्रुटि पावें आर्ष ग्रंथ की ओर ध्यान आकर्षित कर संतोष करें। यदि प्रमाद वश कहीं भूल भी रह गई हों तो वह द्वितीयावृत्ति में ठीक कर दी जायंगी।

सज्जनों का शुभचिन्तक—

पं० रामचन्द्र नम्बूरी

बद्रिकाश्रम तीर्थ।

श्रीगणेशाय नमः ।

श्रीकेदारकल्पः

यस्माद्विश्वमुदेति यत्र रमते यस्मिन्पुनर्लीयते । भासा यस्य जगद्विभाति सहजानन्दोज्ज्वलं यन्महः ॥ शान्तं शाश्वतमक्रियं यम पुनर्भावाय भूतेश्वरं । द्वैतध्वांतमपास्य यांति कृतिनः प्रस्तौमि तं पूरुषम् ॥ १ ॥

दोहा—गिरिजापती गिरीश प्रभु, निज भक्तन के प्रान ।
शिव शिव दायक विश्व के, सुमिरहुं नित हिय आन ॥

ईश्वर उवाच । शैलराजस्य पृष्ठे तु शृणु स्थानानि यानि मे ॥ अस्ति पुण्या महादेवि नदी वैतरणी शुभा ॥ २ ॥ पितॄणां तोयदानेन तृप्तिर्भवति पुष्कला ॥ तत्रापि परमं देवि पश्येद्रुद्र-हिमालयम् ॥ ३ ॥ हिमालये तु चेद्दत्तं त्रुटिमात्रं हि कांचनम् ।

जिससे संपूर्ण जगत् उत्पन्न होता है और जिसमें जगत् रमता है और जिसमें फिर लय होता है जिसके प्रकाश से जगत् प्रकाश होता है जिसका तेज स्वाभाविक आनंद उज्ज्वल है शांत नित्य निष्क्रिय क्रियारहित है विद्वान लोग मोक्ष के लिए जिसका सेवन कर द्वैतरूपी अंधकार को छोड़ जिस भूतेश्वर महादेव को प्राप्त होते हैं उस महादेव को मैं स्तुति करता हूं ॥ १ ॥ श्रीभगवान् शिव पार्वतीजी के पास कहते हैं कि शैलराज जो कैलास है उसमें जो मेरे स्थान हैं उनको सुन, वहां मंगल को देनेवाली पुण्यनदी वैतरणी है ॥ २ ॥ उस वैतरणी नदी के जल से तिलतर्पण करने से पितरों को बड़ी तृप्ति होती है वहां भी हिमालय पर्वत को देखे ॥ ३ ॥ हिमालय पर्वत में त्रुटिमात्र भी सोना दान किया तो उसने संपूर्ण सातों द्वीप सहित

शम्भोदेवीरिती मन्त्रस्य दध्यङ्ङाथर्व ऋषि आपोदेवता
गायत्री छन्द शान्तिप्रीतये शान्तिमन्त्रजपे विनियोग

तेन दत्ता भवेद्देवि सप्तद्वीपा वसुंधरा ॥ ४ ॥ आत्मानं घातये-द्यस्तु भृगुतुंगेषु मानवः । इन्द्रेण धृतछत्रः सन् रुद्रलोकं सगच्छति ॥ ५ ॥ गत्वा हिमालयं पुण्यं दृष्ट्वा माहेश्वरं पदम् । वंश्यान् संतारयेत्सद्यो दशपूर्वान् दशापरान् ॥ ६ ॥ द्वितीयं मध्यमं स्थानं तत्र मध्ये कृतं मया । तत्रोपास्या नदी पूज्या महापुण्या सरस्वती ॥ ७ ॥ तत्तुंगे सा प्रणष्टाऽपि प्रभाते दृश्यते पुनः । सरस्वती नदी चेयं देवगंधर्वसेविता ॥ ८ ॥ मध्यमस्योदकं पीत्वा गणो भवति निश्चयम् । ब्रह्मसूत्रं समासाद्य सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ९ ॥ श्रीदेव्युवाच । मनुष्याणां हितार्थाय त्वया सृष्टं महेश्वर । तन्मे कथय माहात्म्यं यत्र मे संशयो महान् ॥ १० ॥ श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन युष्मद्वक्त्राद्विनिर्गतम् । स्वभावात्परमं धाम महत्पुण्यतमं प्रभो ॥ ११ ॥ ईश्वर उवाच ।

पृथिवी दी ॥ ४ ॥ जो पुरुष कैलास के भृगुशिखरों से अपना घात करे वह इन्द्र करिके छत्र धारण करता हुआ रुद्रलोक को जावे ॥ ५ ॥ पुण्य हिमालय पर्वत को जाकर श्रीशिव भगवान् के पद को देखकर अपने वंश के दश आगे और दश पीछेवालों को तत्काल तारे ॥ ६ ॥ उस कैलास में दूसरा एक बीच में मैंने मध्यम नाम करिके स्थान बनाया जो मध्यमेश्वर करके प्रसिद्ध है वहां सरस्वती पुण्यनदी पूजने योग्य है ॥ ७ ॥ उस ऊंचे कैलास में वह नदी कभी अदृश्य हो जाती है और प्रभात सदा देखने में आती है देवता गंधर्वादि सब इस सरस्वती नदी का सेवन करते हैं ॥ ८ ॥ मध्यमेश्वर भगवान् का उदक पीकर मनुष्य भगवान् का गण निश्चय कर होता है वहां ब्रह्मसूत्र नामा स्थान संपूर्ण पापों को नाश करनेवाला है ॥ ९ ॥ श्रीपार्वतीजी कहती हैं, कि हे प्रभो ! मनुष्यों के कल्याण के लिए तुमने यह स्थान बनाया इस में जहां मुझे संदेह हो उसको कहिए ॥ १० ॥ यह धाम स्वभाव से परम पुण्य है आप के मुख से इस का माहात्म्य सुनना चाहती हूं ॥ ११ ॥ हे पार्वती ! सुनो मैं / ९६

शन्नोदेविरभिष्टय आपो भवन्तु पितये। शंयोरभिस्रवन्तु न

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तीर्थमाहात्म्यमुत्तमम्। तृतीयं तन्मम स्थानं केदारं चेति विश्रुतम् ॥ १२ ॥ मच्छरीराद्विनिष्क्रांतं शुक्राख्यं पानमुत्तमम्। केदारस्योदकं देवि ये पिबंति महाजनाः ॥ १३ ॥ मम तुल्यबलाः शर्वे सर्वे स्वच्छंदगामिनः। त्रिशूलाङ्कितहस्ताश्च सर्वे वै शूलपाणयः ॥ १४ ॥ त्रिनेत्राश्च गणा भक्ताः सर्वे स्कन्दपराक्रमाः। भवंति देवदेवेशि नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥ मंदाकिन्यां नरः स्नात्वा चार्चयित्वा वृषध्वजम्। गणाधिपत्यं लब्ध्वा च कुलानामुद्धरेच्छतम् ॥१६॥ तत्र मंदाकिनी पुण्या नदीनामुत्तमा नदी। द्रावयेत्सर्वपापानि स्तुतिभिर्बहुधाऽन्विता ॥ १७ ॥ तस्यां स्वर्गाच्च्युतायां तु शुचिः स्नातो हि मानवः। यः पिबेत्तत्र देवेशि वामहस्तेन वै जलम् ॥ १८ ॥ अंकितः स्यात्त्रिशूलेन ललाटे नयनेन च।

माहात्म्य को कहता हूं तीसरा एक मेरा स्थान केदार नाम से प्रसिद्ध है॥१२॥ हे पार्वती! मेरे शरीर से निकला शुक्र नाम बड़ा उत्तम पान है इस केदार के उदक को जौन लोग पीते हैं ॥ १३ ॥ वह लोग मेरे तुल्य बलवाले होते हैं और वह सब स्वच्छंदगामी अर्थात् अपनी इच्छानुसार चलनेवाले होते हैं हाथ उनके त्रिशूल से चिन्हित होते हैं और शूल धारण करनेवाले होते हैं ॥१४॥ वह सब तीन नेत्रों को धारण करनेवाले मेरे गण और भक्त स्कंद के तुल्य पराक्रमी होते हैं हे देवि! इस में विचारणा न करनी चाहिए ॥ १५ ॥ मनुष्य मंदाकिनी नदी में स्नान करिके और भगवान् केदारेश्वर को पूजन कर गणाधिपत्य को पाके अपने एक सौ कुल को उद्धार करे ॥ १६ ॥ तहां पुण्यनदी मंदाकिनी नदियों में उत्तम नदी बहुत स्तुतियों करके युक्त होती हुई सब पापों को दूर करे ॥१७॥ स्वर्ग से छूटी हुई तिस नदी विषे स्नान कर पवित्र होता हुआ मनुष्य जो बांएं हाथ करिके तहां जल पीवे ॥ १८ ॥ वह त्रिशूल से चिन्हित हो ललाट में तीसरा नेत्र होकर निश्चय कर मेरा गण होवे फिर पृथिवी मे न आवे॥१९॥

गणो हि स भवेन्नूनं पुनर्नावर्तते भुवि ॥ १९ ॥ सर्वधर्मपरो भूत्वा सत्यां च लभते गतिम् । गाणपत्यमवाप्नोति यत्र तत्र मृतो नरः ॥ २० ॥ यस्य देहं च तत्तोयं मल्लिंगान्निसृतं स्पृशेत् । यत्र कुत्र मृतो वाऽपि स्कंदस्य सदृशो भवेत् ॥ २१ ॥ केदारं प्रस्थिता देवि म्रियंते यत्र कुत्रचित् । तेऽपि मद्गणतां यांति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २२ ॥ भस्मनोधारणं नित्यं शिवमंत्रं जपेन्नरः । प्रदक्षिणां च कुर्वीत शिवध्यानपरायणः ॥ २३ ॥ केदारोदकपानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् । अनेकानि सहस्राणि क्रतूनां तु विशेषतः ॥ २४ ॥ दिव्यवर्षसहस्राणि तपस्तप्त्वा तु पुष्करे । न लभंते गति मर्त्याः केदारेण तु या भवेत् ॥२५॥ केदारस्योदकं पीत्वा यत्र देशे प्रपद्यते । सोऽपि देशो भवेत्पूतः किं पुनस्तस्य बांधवाः ॥ २६ ॥ अंकितस्तु त्रिशूलेन सर्वदेवैश्च संस्तुतः । ब्राह्मणो वेदवेदांगतत्ववेत्ता भवेद्ध्रुवम् ॥२७॥

सर्व धर्म में तत्पर होके परमगति को प्राप्त होवे और कहीं भी मरे परंतु मेरे गणों का मालिक होवे ॥ २० ॥ मेरे लिंग से निकला हुआ वह जल जिसके शरीर को लगे वह जहां कहां मरे तौ भी स्कंद कार्त्तिकेय के तुल्य होवे ॥२१॥ हे पार्वती ! जौन केदार को प्रस्थित होते हुए जहां कहीं मरजावें वह भी मेरे गण होजावें सत्य समझना संशय नहीं ॥ २२ ॥ नित्य भस्म को धारण करे शिवमंत्र को जपे और शिव के ध्यान में तत्पर होता हुआ प्रदक्षिणा करे ॥२३॥ केदार के उदक पान के बराबर अनेक सहस्र यज्ञ का फल नहीं है ॥ २४ ॥ हजारों दिव्य वर्ष पुष्कर में तप करके वह गति नहीं प्राप्त होती जो केदार के दर्शन से मनुष्यों को होती है ॥ २५ ॥ मनुष्य केदार के उदक को पीकर जिस देश में जावे वह देश भी पवित्र हो जाता है फिर उस के बंधु को क्या कहना ॥ २६ ॥ त्रिशूल करके चिन्हित होता हुआ और देवतों करिके स्तु[illegible] होता हुआ ब्राह्मण निश्चय कर वेद वेदांग का तत्ववेत्ता होवै ॥ २७ ॥

पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च । केदारोद-
कपानस्य कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ २८ ॥ अंते वा यदि वा
मध्ये ये मृता हिमवद्गिरौ । ते ध्रुवं दिवि तिष्ठंति यावदिंद्रा-
श्चतुर्दश ॥ २९ ॥ आत्मानं घातयेद्यस्तु प्रत्यक्षं वा हुताशने ।
न तां गतिमवाप्नोति केदारेण तु या भवेत् ॥ ३० ॥
सकृत्पीत्वा तु कैदारमुदकं तु जगद्गुरोः । ब्रह्मविद्यां सकृज्जप्त्वा
लभते परमां गतिम् ॥ ३१ ॥ विषमे दुर्गमे घोरे प्रविश्य
हिमवद्गिरौ । केदारस्योदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥ ३२ ॥
अदृश्यः सर्वभूतानां विचरेच्च यदृच्छया । दिव्यंतरिक्षपाताले
यत्र यत्रैव चेच्छते ॥ ३३ ॥ मम देवि प्रसादेन क्रीडते
कामरूपधृक् । केदारस्य कथां दिव्यां पवित्रां पापनाशिनीम्
॥ ३४ ॥ ये स्मरंति सदा भक्त्या ते च वै दिवि देवताः ॥

पृथिवी में जौन पुण्य तीर्थ और स्थान हैं केदार के उदकपान के बराबर नहीं हैं ॥ २८ ॥ हिमालय पर्वत के विषैं अन्त्य मध्य में जो मरते हैं वह जब तक चौदह इंद्र हैं तब तक स्वर्ग में वसते हैं ॥ २९ ॥ जो कोई अपने शरीर को अग्नि में जलावे या तीर्थ में अनशन व्रत कर त्याग करे उस पुरुष को जो गति प्राप्त होती है वह केदार के दर्शन से प्राप्त होती है ॥ ३० ॥ केदार में जगत् के गुरु श्रीशिव भगवान् के उदक को एक बार पीकर और एक बार ब्रह्मविद्या का जप कर परम गति को पाता है ॥ ३१ ॥ घोर कठिन दुःख करके जाने को शक्य ऐसे कैलास में जाकर केदार के उदक को पीकर फिर जन्म नहीं पाता है ॥ ३२ ॥ सब प्राणियों से अदृश्य होता हुआ स्वर्ग मृत्यु पातालों में जहां विचरने की इच्छा हो विचरे ॥ ३३ ॥ हे देवि ! मेरे प्रसाद से इच्छानुरूप शरीर को धारणकर क्रीडा करता है केदारनाथजी की पवित्र दिव्य और पापों को नाश करनेवाली कथा को ॥ ३४ ॥ जो मनुष्य भक्ति करके स्मरण करते हैं वह स्वर्ग में जाकर देवता होते हैं हे देवि ! यह परम गुह्य मैंने तुम्हारे

एतच्च परमं गुह्यं तव देवि ह्युदाहृतम्॥३५॥यश्च धारयते नित्यं यश्चैव शृणुयान्नरः। मुच्यते सर्वपापेभ्यो रुद्रलोकं सगच्छति ३६

इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं स्वर्गारोहणं नाम प्रथमः पटलः॥१॥

श्रीदेव्युवाच ॥ क्षेत्राणां परमं क्षेत्रं तीर्थानामुत्तमं तथा। प्रमाणं तस्य मे ब्रूहि श्रोतुमिच्छामि तत्वतः॥ १॥ ईश्वर उवाच। दक्षिणोत्तरतश्चैव योजनत्रयमायतम् । तस्मिंस्तु पर्वते देवा ऋषयश्च तपोधनाः ॥ २ ॥ क्षेत्रस्य बाह्यतः सर्वे तपः कुर्वंति पुंगवाः। सिद्धगंधर्वयक्षाश्च किन्नराश्चाप्सरो गणाः ॥ ३ ॥ केदारकांक्षिणः सर्वे समाराधनतत्पराः। न लभंते सुरा देवा ये चान्ये दिव्यजातयः ॥ ५ ॥ यक्षैस्तु रक्षितं स्थानं नंदिस्कंद-पुरोगमैः। विनायको महाकाल ईशानश्च महाबलः॥६॥ जया च विजया चैव मोहिनी स्तंभिनी तथा। मम रूपधरास्सर्वे

पास कहा ३५॥ जो पुरुष इसको धारण करता है और सुनता है वह सब पापों से छूटकर रुद्रलोक को जाता है॥ ३६॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां प्रथमः पटलः॥१॥

श्रीपार्वतीजी कहती हैं कि हे प्रभो! क्षेत्रों में परम उत्कृष्ट और तीर्थों में उत्तम तीर्थ जो है इसके तत्व प्रमाण को अर्थात् लंबाई चौड़ाई मैं सुनना चाहती हूं॥ १ ॥ श्रीभगवान् शिव कहते हैं। बारह कोस लंबा दक्षिण की ओर बारह कोस चौड़ा उत्तर की ओर है उस पर्वत में देवता और तप ही है धन जिन का ऐसे ऋषिलोग ॥२॥ क्षेत्र के बाहर सब सिद्ध गंधर्व यक्ष किन्नर अप्सरा के झुंड श्रेष्ठ लोग तप करते हैं ॥ ३ ॥ केदार को चाहते हुए और आराधना में तत्पर होते हुए और दिव्यजाति देवता लोग उस स्थान को नहीं पासक्ते हैं ॥५॥ नंदि स्कन्द आदि और विनायक, महाकाल, ईशान, महाबल, जया, विजया, मोहिनी, स्तंभिनी, जितने हैं ये सब मेरे रूप को धारण

क्षेत्रं रक्षंति सर्वशः ॥ ७ ॥ षष्टिकोटयो गणानां च क्षेत्रपालाः प्रकीर्तिताः । नंदी चैव महाकालः सततं क्षेत्ररक्षकौ ॥ ८ ॥ अहं तत्र स्थितो देवि त्वया सह वरानने । दुष्प्राप्यं चैव केदारं देवानामपि दुर्लभम् ॥ ९ ॥ क्षेत्राणां परमं क्षेत्र तीर्थानामपि चोत्तमम् । तत्र स्नात्वा दिवं यांति मुक्ताः संसारबंधनात् ॥ १० ॥ अक्षयाः परमाश्चैव मत्प्रसादाद्भवंति ते । ब्रह्महत्या कृता यैश्च ये चान्ये पापकारिणः । न पश्यंत्यशुभं देवि शुद्धाश्चापि भवंति ते ॥ ११ ॥ येषु येषु च कार्येषु यांति मामपि सुव्रते । तेषु तेषु च कार्येषु सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥ १२ ॥ तावत्ते बहवो वर्णाः सर्वे केदारकांक्षिणः । केदारं चैव संप्राप्ताः सर्वे वर्णाद्विजातयः ॥ १३ ॥ तत्र यांति परं देवि पूर्वं शप्तास्तु ये मया । पूर्वशप्तास्तु ये देवि ते भवन्ति गणेश्वराः ॥ १४ ॥ तदर्थं निर्मिता देवि केदारोदकमुत्तमम् । तेन पीतेन मुच्यन्ते

करते हुए सब प्रकार से मेरे क्षेत्र की रक्षा करते हैं ॥ ७ ॥ साठ क्रोड़ क्षेत्रपाल गण कहे गये हैं और नंदी, महाकाल, ये क्षेत्र की रक्षा करनेवाले हैं ॥८॥ हे वरानने, हे देवि! मैं भी तहां तुझ करके सहित स्थित रहता हूं केदारक्षेत्र कठिन से मिलने योग्य है देवताओं को भी दुर्लभ है ॥९॥ यह क्षेत्र सब क्षेत्रों में उत्तम है और तीर्थों में उत्तम तीर्थ है तहां स्नान कर मनुष्य संसाररूपी बंधन से छूटकर मुक्त होते हैं ॥१०॥ और अक्षय नाशरहित परम श्रेष्ठ मेरे प्रसाद मे हो जाते हैं ब्रह्महत्या भी जिनों ने किई है और भी जितने पापकर्म करनेवाले हैं नरक को नहीं देखते हैं हे देवि ! वह अत्यंत शुद्ध हो जाते हैं ॥ ११ ॥ हे सुव्रते, हे सुचरित्रे ! लोग जिन जिन कार्यों को उद्देश कर मेरी सेवा करते हैं उन २ कार्यों में उनको सिद्धि प्राप्त होती है ॥ १२ ॥ सब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र केदार को चाहते हैं केदार को प्राप्त होकर सब वर्ण ब्राह्मण हो जाते हैं ॥ १३ ॥ हे देवि! पहले मैंने जिनको शाप दिया है वह यहां केदार में प्राप्त होकर गणों

जन्मसंसारबंधनात् ॥ १५ ॥ त्रिनेत्राः शूलहस्ताश्च शशांकांकितमस्तकाः । व्याघ्रचर्मधराः सर्वे मम पुत्रा महाबलाः । मम वीर्यसमुत्पन्नाः सर्वे ते मत्पराक्रमाः ॥ १७ ॥ ये पिबंति नराः सर्वे ते भवंति गणेश्वराः । न तस्य सदृशं पुण्यं त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ १८ ॥ पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च । केदारस्य तु तोयस्य कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ १९ ॥ इदं क्षेत्रं समासाद्य चैकरात्रिं वसेत्तु यः। वासस्तस्य भवेद्देवि सार्वकालं शिवालये ॥ २० ॥ मंदाकिन्यां नरः स्नात्वा दद्यात्पुण्योदकं पितॄन् । तारितास्तेन तेनैव वंश्या एकोत्तरं शतम् ॥ २१ ॥ इदं क्षेत्रं परं देवि देवानामपि दुर्लभम् । दृष्टं पीतं जलं चात्र संसारभयभेदकम् ॥ २२ ॥ न विंदते पुनर्जन्म येन तत्र प्रदक्षिणम् । कृता प्रदक्षिणा तेन सप्तद्वीपा

में मुख्य गण होते हैं ॥ १४ ॥ उनही के लिए केदार का उदक बनाया गया उसके पीने से हे देवि! जन्म संसार से छूट जाते हैं ॥ १५ ॥ त्रिनेत्र तीन नेत्र वाले होते हुए हाथों में शूल लिये चंद्रमा करके चिन्हित हुए हैं शिर जिनके और वाघ के चर्म को धारण करते हुए सब मेरे पुत्र बड़े बलवान् मेरे वीर्य से उत्पन्न हुए मेरे तुल्य पराक्रम वाले हुए हैं ॥ १७ ॥ जौन लोग केदारनाथ में उदक को पीते हैं वे गणेश्वर गणों के अधिपति होते हैं इस उदक के तुल्य तीनों लोकों में पुण्य वस्तु कोई नहीं है ॥ १८ ॥ पृथिवी में जितने पुण्य तीर्थ और क्षेत्र हैं वह केदारनाथ के उदक के बराबर नहीं हैं ॥ १९ ॥ इस क्षेत्र को पाकर इसमें जो पुरुष एक रात्रि वास करता है हे देवि! उसका शिवालय में सदा वास हुआ जानना ॥ २० ॥ मंदाकिनी नदी में स्नान कर जो अपने पितरों को इस पुण्योदक को देवे उसके एक सौ एक वंश के पितर अपने तार दिये जानना ॥२१॥ यह सर्वोत्तम क्षेत्र देवतों को भी दुर्लभ है जिसने देखा और संसार भय को दूर करनेवाला उदक पान किया ॥ २२ ॥ और

वसुंधरा ॥ २३ ॥ यत्फलं सर्वतीर्थानां सर्वयज्ञेषु यत्फलम् । यत्फलं चाश्वमेधेन दक्षिणासहितेन च ॥ २४ ॥ तत्फलं कोटिगुणितं लभते नात्र संशयः। तप्तकांचनवर्णाभाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ २५ ॥ विचरंति गणा देवि सर्वभूतविमर्दकाः । ऋषीणां चैव देवानां यक्षगंधर्वरक्षसाम् ॥ २६ ॥ ग्रहाणां भूतसंघानां ये च केचिद्विरोधकाः । इन्द्रो वा यदि वा ब्रह्मा विष्णुर्वाऽपि प्रजापतिः ॥ २७ ॥ एतेषां चैव सर्वेषां स वध्यो नात्र संशयः । ये देवि मम भक्ताश्च मृताः केदारचिंतकाः॥२८॥ तेऽपि सर्वे गणा मां वै प्रपद्यन्ते न संशयः। एककालं द्विकालं वा त्रिकालं नित्यमेव वा । ये स्मरंति च केदारं शिवभक्ता जितेन्द्रियः ॥ २९ ॥ न तेषां विद्यते पापं सहस्रगुणितं फलम्। यत्फलं लभते यज्ञैरश्वमेधैः सदक्षिणैः ॥ ३० ॥

प्रदक्षिणा किया उसने संपूर्ण सातों द्वीप सहित पृथिवी की प्रदक्षिणा कियी जानना ॥ २३ ॥ जो फल सर्व तीर्थों के सेवन करने से और यज्ञ और दक्षिणा सहित अश्वमेध करने से ॥ २४ ॥ जो फल मिलता है उससे क्रोडा गुणा फल श्रीकेदारनाथजी के दर्शन से मिलता है तपाये हुए सोने के बराबर है कांति जिनों की और संपूर्ण आभरणों करके भूषित ॥ २५ ॥ ऐसे गण जो हैं यही-सर्व प्राणियों को त्रास देनेवाले ऋषि देवता यक्ष किन्नर राक्षस गंधर्वों के ॥ २६ ॥ संपूर्ण प्राणी समूह और ग्रहगण जो कोई विरोधी जितने हैं यदि इन्द्र और ब्रह्मा विष्णु प्रजापति ॥ २७ ॥ इन सबका वह वध के योग्य होवै इसमें संशय नहीं हे देवि हे पार्वति! जौन मेरे भक्त केदारचिंतक मरें तो ॥ २८ ॥ वह सब मेरे गण होके मुझ में प्राप्त होते हैं इसमें संशय नहीं एक काल दो काल तीन काल अथवा नित्य जो मेरे भक्त इन्द्रियों को जीते हुए केदार को स्मरण करते हैं वह मुझ में प्राप्त होते हैं इसमें संदेह नहीं है ॥२९॥ उनको कभी पाप नहीं लगता है दक्षिणा सहित अश्वमेध यज्ञ करने से जो

इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

ईश्वर उवाच । अतःपरं प्रवक्ष्यामि केदारस्य तु यत्फलम् । मम वीर्यस्थितं देवि केदारं तीर्थमुत्तमम् ॥ १ ॥ तत्र पीत्वा न शोचंति जन्मसंसारबंधनात् । तिर्यग्योनिगतिं देवि न लभन्ते कदाचन ॥ २ ॥ इदं तीर्थमिदं तीर्थं किं भ्रमंति च साधवः । नराः पीत्वा तु केदारं भवंति मत्समा ध्रुवम् ॥ ३ ॥ तथैव मम भक्ता ये मत्कथारजिताश्च ये । केदारस्योदकं पीत्वा न तेषां विद्यते भयम् ॥ ४ ॥ यथाऽहं सर्वलोकेषु पूज्यमानः सुरासुरैः । तथैव ते विशालाक्षि पूज्यंते दिवि चामरैः ॥ ५ ॥ यथा नंदी च स्कंदश्च महाकालो विनायकः । तथा ते मम पुत्राश्च विचरंति न संशयः ॥ ६ ॥ क्रीडंते सर्वदा देवि काम-

फल प्राप्त होता है उससे सहस्र गुणा फल उनको मिलता है ।

इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

शिव भगवान् कहते हैं । अब इसके अनंतर हे पार्वती ! मेरे वीर्य से स्थित ऐसा उत्तम तीर्थ जो केदार है इसके फल को मैं कहता हूं ॥ १ ॥ तहां केदार में मेरा वीर्य जो उदक है उसको पीके जन्म और संसार बंधन से छूट जाते हैं और कभी नरक गति को प्राप्त नहीं होते हैं ॥ २ ॥ साधु लोग जो यह तीर्थ है यह तीर्थ है करके क्यों घूमते फिरते हैं मनुष्य जो केदार में मेरे उदक को पीते हैं वह मेरे सदृश होते हैं ॥ ३ ॥ तिसही प्रकार मेरी कथा में रंजित मेरे भक्त जो हैं केदार के उदक पान कर उनको कोई भय नहीं है ॥ ४ ॥ हे विशालाक्षि ! देवासुरों करके तीनों लोकों में जैसा मैं पूजा जाता हूं तैसेही वह स्वर्ग में देवतों करके पूजे जाते हैं ॥ ५ ॥ जैसे नंदी कार्तिकेय महाकाल विनायक मेरे पुत्र हैं तैसे वह विचरते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ ६ ॥ हे दे[illegible] इच्छानुरूप शरीर को धारण करते हुए मेरे गण होते हुए मेरे प्रसाद से स[illegible]

रूपधराश्च ते । गणा मे मत्प्रसादेन वर्द्धन्ते मम तेजसा ॥७॥ यत्राहं ते गणास्तत्र विचरंति न संशयः । तैरेव च गणैर्नित्यं सर्वैः परिवृतस्त्वहम् ॥ ८ ॥ तीर्थानां परमं तीर्थं ज्ञानानां परमं तथा । मोक्षदं च मुमुक्षूणां स्वर्गे भुवि च दुर्लभम् ॥९॥ अपूर्वं सर्वतीर्थानां मनसोभीष्टदायकम् । क्षेत्रं तु परमं देवि क्षेत्राणामुत्तमोत्तमम् ॥ १० ॥ कालंजिरे महाकर्णे वाराणस्यां हरालये । अनशनमृतानां तु यत्फलं जायतेऽगने ॥ ११ ॥ तत्फलं निश्चयेनैव केदारेश्वरदर्शनात् । प्राप्यते मनुजैर्देवि सत्यं सत्यं न संशयः ॥१२॥ सर्वावस्थां गतस्यापि भुजतो विषयानपि । पिबतश्चोदकं देवि पापं नश्यत्यसंशयम् ॥१३॥ अन्यतीर्थे च यो देवि प्राणान् परित्यजेज्जनः। न तां गतिमवाप्नोति केदारे यां गतिं लभेत् ॥ १४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम

खेलते हैं और मेरे तेज से बढ़ते हैं॥ ७ ॥ हे पार्वति ! जहां मैं रहता हूं वहीं वह गण विचरते हैं संदेह नहीं है और नित्य मैं उन्हीं गणों करके युक्त हो रहता हूं॥८॥ तीर्थों में श्रेष्ठ और ज्ञानों में परम श्रेष्ठ और मोक्ष चाहनेवालों को मोक्ष देनेवाला ऐसा स्वर्ग और पृथिवी में दुर्लभ है ॥ ९ ॥ हे पार्वति ! यह सब तीर्थों में अपूर्व तीर्थ है मन की इच्छा को पूर्ण करनेवाला है और सब क्षेत्रों में बड़ा उत्तम क्षेत्र है ॥ १० ॥ हे देवि ! कालंजिर में और महाकर्ण में और वाराणसी में अनशन व्रत करके मरनेवालों को जो फल मिलता है ॥ ११ ॥ हे पार्वति ! निश्चय करके वह फल केदारनाथ के दर्शन से मनुष्यों को मिलता सत्य है संदेह नहीं है ॥ १२ ॥ सब अवस्था को प्राप्त हुआ और सब विषयों को भोगता हुआ भी केदार के उदक पीते हुए मनुष्य का सब पाप नष्ट होता है संशय नहीं ॥ १३ ॥ हे देवि ! जो मनुष्य और तीर्थ में प्राणत्याग करे उसको केदार में जो गति मिलती है वह गति नहीं मिलती है ॥ १४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे

तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच। अतः परं प्रवक्ष्यामि तस्योदकफलं शुभे। सारात्सारतरं पुण्यं नृणां पापविनाशनम् ॥ १ ॥ देवतानां यथा मध्ये प्रधाना त्वं वरानने। तथा सर्वेषु तीर्थेषु केदारोदकमुत्तमम् ॥ २ ॥ साधूनां च क्षमा यद्वल्लवणं भोजने यथा। तद्वत्सर्वेषु तीर्थेषु केदारोदकमुत्तमम् ॥ ३ ॥ धेनूनां कामधुग्यद्वत्सर्वासामुत्तमोत्तमा। तद्वत्सर्वेषु तीर्थेषु केदारोदकमुत्तमम् ॥ ४ ॥ वेदानां सामवेदस्तु यथा वै मुख्य उत्तमः। तद्वत्सर्वेषु तीर्थेषु केदारोदकमुत्तमम् ॥ ५ ॥ सर्वरत्नेषु यत्सारं कौस्तुभं तु यथोत्तमम्। तद्वत्सर्वेषु तीर्थेषु केदारोदकमुत्तमम् ॥६॥ घृतं सारं यथा दध्नः पुष्पसारं यथा मधु। संक्षेपेण मया प्रोक्तं केदारसलिलं तथा ॥ ७ ॥ दक्षयज्ञे महादेवि त्वन्निमित्तेन ये पुरा। पूर्वं शप्ता मया देवि तेऽभवंश्च गणेश्वराः ॥ ८ ॥ इति श्रीकेदारभाषाटीकायां तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

श्रीभगवान् शिवजी कहते हैं ॥ अब इसके अनंतर सार से भी सार मनुष्यों के पाप को नाश करनेवाला पुण्य उदक के फल को कहता हूं ॥ १ ॥ हे वरानने! जैसी संपूर्ण देवतों मध्ये तुम प्रधान हो वैसा सब तीर्थों में केदार का उदक उत्तम है ॥ २॥ साधुओं की जैसी क्षमा और भोजन में जैसा लवण उत्तम है वैसा सब तीर्थों में केदार का उदक उत्तम है ॥३॥ गायों में जैसी कामधेनु उत्तम है वैसाही सब तीर्थों में केदार का उदक उत्तम है ॥ ४ ॥ वेदों में सामवेद जैसा मुख्य और उत्तम है वैसा सब तीर्थों में केदार का उदक उत्तम है ॥ ५ ॥ सब रत्नों में सार उत्तम जैसा कौस्तुभ मणि है वैसा सब तीर्थों में केदारोदक उत्तम है ॥ ६ ॥ दही का सार जैसा घी है और पुष्प का सार जैसा मधु (सहद) है वैसा केदार जल है यह संक्षेप से मैंने कहा ॥ ७ ॥ हे देवि ! दक्षप्रजापति

कल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

श्रीदेव्युवाच । पर्वतोनैव दृष्टो यैर्नैव पीतं तु तज्जलम् । तेषां गतिः का देवेश ब्रूहि तन्मे हि शंकर ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच । शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तीर्थं केदारमुत्तमम् । तत्र पीत्वा विमुच्येत जंतुः संसारबंधनात् ॥ २ ॥ अप्राप्ताः मां मृता ये च पथि देशान्तरेऽपि वा । ते भवन्ति गणा देवि मम लोके सुरेश्वरि ॥ ३ ॥ पर्वते दृष्टमात्रे तु सर्वपापक्षयो भवेत् । पीतमात्रे जले देवि गणो भवति शूलधृक् ॥ ४ ॥ अवध्यः कामरूपी च सर्वभूताभयप्रदः । गच्छतीश्वरलोके च हेमकुंडलमंडितः ॥ ५ ॥ जन्मान्तरसहस्रेषु यत्फलं यज्ञयाजिनाम् । केदारोदकपानेन तत्फलं तु

के यज्ञ में मैंने जिनको शाप दिया था वही यहां गणाधीश्वर हुए ॥ ८ ॥

इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

श्री पार्वतीजी कहती हैं । हे देवेश हे शंकर ! जिनोंने कैलास पर्वत देखा और उदक नहीं पिया उनकी कौन गति होती है मुझे कहिए ॥ १ ॥ भगवान् शिव कहते हैं । हे देवि ! केदार का उत्तम तीर्थ जो उदक है उसको पीके जंतु संसार बंधन से छूट जावे ॥ २ ॥ हे सुरेश्वरि हे देवि ! जिनोंने उदक पिया वह मेरे दर्शन को न पायके भी रास्ते में या कहीं देशांतर में भी मरण को प्राप्त होजावें तो भी मेरे गण होते हैं ॥ ३ ॥ कैलास पर्वत देखतेही सब पाप नष्ट होजाता है उदक पीने मात्र शूल को धारण करता हुआ मेरा गण हो जाता है ॥ ४ ॥ और अपनी इच्छानुरूप शरीर को धारण करनेवाला होके किसीसे मारा नहीं जावै वही सब प्राणियों को भय देनेवाला होता हुआ सुवर्ण के कुंडलों को धारण करता हुआ शिवलोक को जाता है ॥५॥ सहस्र जन्मों में यज्ञ करनेवालों को जो फल मिलता है वह केदार के उदक पीने से कहा है ॥६॥ उदकपान किया जिनों ने ऐसे जो मेरे भक्त हैं जो कुछ कर्म करें

प्रकीर्त्तितम ॥ ६ ॥ कर्माणि यानि कुर्वंति मम भक्तास्तु ये नराः । यत्र तत्र गता वाऽपि गाणपत्यं लभेद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥ ये पिबंति नरा युक्ता मनः कृत्वा तु यंत्रितम् । तेऽपि गच्छंति वै मुक्तिं संसारभयबंधनात् ॥ ८ ॥ स्वच्छंदगामिनो नित्यं रमंते च सुरैः सह । देवदानवभूतेषु पूजनीयः समंततः ॥९॥ यथैवेक्षुरसेदध्नः सारं मधु घृतं तथा । सर्वलोकेषु तद्वद्वै तीर्थमेतत्प्रतिष्ठितम् ॥ १० ॥ तिलेषु च यथा तैलं पुष्पेषु च यथा मधु । तद्वत्केदारतीर्थं च सर्वसारसमुच्चयम् ॥ ११ ॥ मृतके सूतके चैव ह्यन्येष्वशुचिकर्मसु । रजोदोषादिषु वर्ज्यं भोजनं हिमवत्सुते ॥ १२ ॥ यस्तु रत्नवतीं दद्यात्सागरां तां वसुंधराम् । लभते न गतिं या तु केदारेण हि या भवेत् ॥ १३ ॥ केदारं तु पिबेत्तोयं षण्मासां तं सुसंयतः । तेन वृकूणं भवेद्देवि संसारभयबंधनं ॥ १४ ॥ भूमिशायी ब्रह्मचारी ह्येकभुक्तश्च तिष्ठति ।

जहां तहां रहैं वह निश्चय कर गणों के पति होते हैं ॥ ७ ॥ जौन मनुष्य संयम में रहकर मनको स्थिर कर उदक पान करे वह संसार भय बंधन से छूटजावे ।८॥ और अपनी इच्छा के अनुकूल विचरनेवाले होते हैं और नित्य देवतों के साथ क्रीड़ा करें और सर्वत्र देव दानवों में पूजा के योग्य होते हैं ॥ ९ ॥ जैसा ईख के रस में मधुर सार है और दही का सार घृत है तैसा ही सब लोकों में यह केदार तीर्थ श्रेष्ठ सार है ॥ १० ॥ तिलों में जैसा तेल पुष्पों में जैसा मधु, तैसा यह केदार तीर्थ सब तीर्थों का सार है ॥ ११ ॥ जन्म मरण सूतक में और भी अपवित्र रजोदोषादियों में स्पर्श हुआ तो भोजन नहीं करना ॥ १२ ॥ रत्नवाली समुद्र तक पृथिवी को देनेवाले को वह गति नहीं मिलती है जो केदार से मिलती है ॥ १३ ॥ जो केदार का उदक संयम से छः मास तक पीवे उससे संसार का भयबंधन कटजावे ॥ १४ ॥ भूमी में सोनेवाला ब्रह्मचर्य में रहनेवाला नित्य विधान करके स्नान करनेवाला भगवान् का ध्यान जप

नित्यस्नायी विधानेन ध्यायते जपते सदा ॥ १५ ॥ उदकं च पिबेन्नित्यं षड्रात्रं नियमेन च। तेन सर्वं कृतं देवि कर्त्तव्यं न हि विद्यते ॥ १६ ॥ ये व्रजंति नरास्तत्र कृतज्ञास्ते न संशयः। सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु सुन्दरि ॥ १७ ॥ एतत्ते कथितं देवि चाऽऽख्यातं वरवर्णिनि। तीर्थराजप्रभावस्ते मया तु समुदाहृतम् ॥ १८ ॥ केदारस्य च ह्याख्यानं स्वर्गारोहणमुत्तमम्। य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चेदं पठते नरः। मुच्यते सर्वपापेभ्यो शिवलोकं स गच्छति ॥ १९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम पञ्चमः पटलः ॥ ५ ॥

ईश्वर उवाच। अतः परं प्रवक्ष्यामि केदारफलमुत्तमम्। तत्पीत्वा यद्भवेत्पुण्यं तन्मे निगदतः शृणु ॥ १ ॥ एककालं द्विकालं वा नित्यं केदारचिंतकाः। न ते पापेन लिप्यंते पद्मपत्र-

करनेवाला ॥ १५ ॥ हे देवि ! जो छः रात्रि तक नियम से केवल उदकपान करके रहे उसने संपूर्ण काम करलिये समझना कोई काम करना बाकी नहीं रहा ॥ १६ ॥ हे सुंदरी ! जो केदारनाथ की यात्रा करते हैं वे लोग कृतज्ञ होते हैं इसमें संदेह नहीं है सब तीर्थों में जो पुण्य और सब यज्ञों में जो पुण्य वह उसको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ हे देवि हे वरवर्णिनि ! यह व्याख्यान मैंने तुझे कह दिया इस तीर्थराज का प्रभाव मैंने भले प्रकार कह दिया ॥ १८ ॥ केदार का आख्यान स्वर्गारोहण को जो सुने पढ़े वह सब पापों से छूटकर शिवलोक को जाता है ॥ १९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां पञ्चमः पटलः ॥ ५ ॥

श्रीभगवान् शिवजी कहते हैं कि अब यहां से आगे केदार का जो उत्तम फल है उसको कहूंगा उस उदक को पीकर जो पुण्य होता है मुझसे सुन ॥ १ ॥ एक बार अथवा दो बार या नित्य जो केदार को चिंतन करते हैं वह जैसा कमल का पत्ता जल से लिप्त नहीं होता है तैसा पाप से लिप्त नहीं होते हैं

मिवांभसा ॥ २ ॥ न केदारात्परं स्थानं न केदारात्परं तपः । न केदारात्परो मोक्षः स्वयं देवेन भाषितम् ॥३॥ पृथिव्यां यानि लिंगानि ससमुद्रचराचरम् । केदारस्य तु सर्वाणि कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ ४ ॥ कामयेत्स्त्री सहस्राणि पिबेत्केदारशंबरम् । पीतमात्रे जले देवि किमर्थं परितप्यते ॥ ५ ॥ ज्ञानशक्त्याऽपि संस्पृष्टो लीयते परमं पदे । काले वा यदि वाकाले किं करिष्यति तच्छृणु ॥६॥ जन्मांतरसहस्रेषु लक्षकोटिशतेषु च । प्राप्नोति धर्मयुक्ताऽत्मा शिवभक्तिं तु मानवः ॥७॥ मासे तथा श्रावणे च शुक्ले शंभुतिथिर्यदा । मध्यंदिनं गते सूर्ये तदा शुष्यति तज्जलम् ॥८॥ शुष्के वै जलरेखा तु दृश्यते चतुरंगुला । इदं स्रोतः प्रवृत्ते तु चैत्रे सितदले शिवे ॥ ९ ॥ शिवरेतो जलं तत्र प्रत्यक्ष कुंडमध्यतः।आषाढे श्रावणे चैव कार्त्तिके च तथैव च ॥१०॥

॥ २ ॥ केदार से विशेष और कोई स्थान नहीं है न केदार से विशेष कोई तप है और न केदार से विशेष कोई मोक्ष है यह श्रीशिवजी ने स्वयं कहा है ॥ ३ ॥ पृथिवी में जितने लिंग हैं और समुद्र सहित चराचर स्थावर जंगम सब केदार के सोलवें हिस्से बराबर नहीं ॥ ४ ॥ हे पार्वति ! हजार स्त्रियों की इच्छा कर जो केदार का उदक पीवे पीनेही मात्र उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है क्यों दुःखी हो ॥ ५ ॥ ज्ञानबल से भी जल स्पर्श करे तो परम पद में लय होता है समय असमय में क्या करेगा सुन ॥ ६ ॥ धर्मयुक्त है अंतःकरण जिसका ऐसा जो मनुष्य हजारो लाखो क्रोड़ों जन्मों में शिवजी की भक्ति को पाता है ॥७॥ श्रावण महिने में शुक्लपक्ष चतुर्दशी जब आती है उसी दिन दो प्रहर में वह जल सूख जाता है ॥ ८ ॥ सूखने पर वह जलरेखा चार अंगुल दीख पड़ती है हे पार्वति ! यह स्रोत चैत्र मास के शुक्लपक्ष में प्रवृत्त होता है ॥ ९ ॥ श्रीशिवजी का वह रेतसुजल वहां प्रत्यक्ष कुंड के बीच में दिखाई देता है और आषाढ़ श्रावण कार्त्तिक मास में ॥१०॥

त्रिभिर्मासैर्महत्पुण्यं कथितं तव सुव्रते । स्नात्वा मंदाकिनीं पुण्यां पितृभ्यः पिंडमावहेत् ॥ ११ ॥ ईशानायतनं गत्वा चार्चयित्वा वृषध्वजम् । स्थित्वा कुंडसमीपं च भावयुक्तेन चेतसा ॥ १२ ॥ तच्चारु प्राप्नुयाद्यस्तु शास्त्रदृष्टेन कर्मणा । पंचरत्नसमायुक्तं तरुं मानसमन्वितम् ॥ १३ ॥ उदकेन च मिश्रं यत् ततः पंचात्मकं परम् । आचार्यः सर्वशास्त्राणां न्यासं कुर्याद्विधानतः ॥ १४ ॥ दशाक्षरीं पठेद्विद्यां परमाक्षरसंयुताम् । तेनाभिमंत्रितं तोयं ददाति ज्ञानमुत्तमम् ॥ १५ ॥ ज्ञात्वा देवं तथा देवि नंदीस्कंदविनायकान् । जयं च विजयं चैव मोहिनी स्तंभिनीस्तथा ॥ १६ ॥ ईशानाभिमुखो भूत्वा पिबेद्वामेन पाणिना । दक्षिणेन च तत्पीत्वा पीतोऽसौ वृषभो भवेत् ॥१७॥ भूमिभागं स्वजानुभ्यां हस्तयुग्मं प्रसार्य च । पक्षमात्रं त्रिवारं चांगुलिस्फोटं तु कारयेत् ॥ १८ ॥ अहं ब्रह्माप्यहं विष्णुरहं

इन तीन मासों में हे सुव्रते! बड़ा पुण्य कहा है पुण्य नदी मंदाकिनी में स्नान कर पितरों के लिए पिंडदान देवे ॥ ११ ॥ श्रीशिवजी के मंदिर में जाकर भगवान् शिव को पूजकर उस कुंड के निकट भावयुक्त चित्त हो ॥ १२ ॥ जो पुरुष उस रमणीय को पावै और शास्त्रविहित कर्म करके पंचरत्नों से युक्त मान सहित वृक्ष को रोपे ॥ १३ ॥ जल युक्त पंचरत्न वह जो है उससे सब शास्त्र का जाननेवाला न्यास विधान से करे ॥ १४ ॥ परमाक्षर संयुक्त दशाक्षर मंत्र को पढ़े उससे मंत्रित जल उत्तम ज्ञान को देता है ॥ १५ ॥ हे देवि ! शिव भगवान् को नंदी को विनायकों को और जय विजय को मोहिनी स्तंभिनी देवियों को जानकर अर्थात् स्मरण कर ॥ १६ ॥ ईशान दिशा को अभिमुख होकर वाम हाथ से और दाहिने हाथ से उदक को पीके बैल होता है ॥ १७ ॥ जमीन में जंघों को रखकर दोनों हाथों को फैलाय तीन बार तीन स्फोट करे ॥ १८ ॥ मैं ब्रह्मा हूं मैं विष्णु हूं मैं रुद्र हूं इस प्रकार

रुद्रस्तथैव च । इत्थं पीत्वा नरा यांति विधिना परमं पदम् ॥१९॥ ईशानं तु नमस्कृत्य कृतांजलि पुटो नतः । पीत्वा तु लभते ज्ञानं तीर्थस्नानात्परां गतिम् ॥२०॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेय संवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम षष्ठः पटलः॥६॥

ईश्वर उवाच । अतः परं प्रवक्ष्यामि केदारफलमुत्तमम् । किमधीतैस्तपो वेदैर्यज्ञैर्बहुसदक्षिणैः ॥ १ ॥ किं तप्तेनापि तपसा किं व्रतेन जपेन वा । किं च तीर्थाभिषेकेन किमिंद्रियदमेन च ॥ २ ॥ पीत्वा केदारमुदकं स्वच्छंदं क्रीडते सदा । यस्य देशस्य मध्ये तु पुण्यभागः स गच्छति ॥ ३ ॥ सोऽपि देशो भवेत्पुण्यः किं पुनस्तस्य बांधवाः । एतत्ते कथितो देवि केदारस्य च संभवः ॥ ४ ॥ ज्ञातेन यत्फलं तेन तत्सर्वं कथितं मया । न मुच्यंते नरा देवि न दैत्या न च राक्षसा ॥५॥ न नागा नापि गंधर्वा न यक्षा नैव किन्नराः । विद्याधरगणा

विधि से उदक पीने वाले परम पद को प्राप्त होते हैं ॥ १९ ॥ शिव भगवान् को अंजलि बांध नम्र हो नमस्कार करके उदक को पीकर परमज्ञान को पाता है तीर्थ में स्नान करने से परमगति मिलती है ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

शिव भगवान् कहते हैं । अब इससे आगे केदार के उत्तम फल को कहता हूं वेदों के अध्ययन करके और तप से दक्षिणा सहित बहुत यज्ञों करिके क्या फल है ॥ १ ॥ बड़े तप करके क्या है और व्रत करके जप करके क्या तीर्थों में स्नान करके और इंद्रियों को रोककर क्या है ॥ २ ॥ केदार के उदक को पीकर पुरुष स्वाधीन सदा खेलता है वह पुण्यभागी जिस देश के बीच में जाता है ॥ ३ ॥ वह देश भी पुण्य होजाता है उसके बांधवों को तो कहना ही क्या, हे पार्वति! यह केदार के फल को कहा ॥ ४ ॥ हे देवि ! इसको जानने से जो फल है वह मैंने सब कह दिया दैत्य और राक्षस ॥ ५ ॥ नाग गंधर्व

देवि योगिन्योऽप्सरसां गणाः ॥ ६ ॥ सिंहेन पालिताः सर्वे सप्तकोटिगणेश्वराः । न तेषां मोचनार्थाय दर्शितं तीर्थमुत्तमम् ॥ ७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम सप्तमः पटलः ॥ ७ ॥

श्रीदेव्युवाच । कीदृशी चापि सा विद्या चाक्षराणि कति प्रभो । आख्याहि देवदेवेश रहस्यं परमं महत् ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच । ॐकारद्वयसंयुक्ता क्षूंकारत्रयभूषिता। रूंकारपंचकोपेता दशबिंदुप्रपूरिता ॥ २ ॥ अथशिवाघोरमंत्रः । ॐ रूं क्षूं रूं क्षूं रूंक्षूं रूंरूं ॐ ॥ अथ मंत्रन्यासः ॥ अंगन्यासं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथाविधि । वामांगुष्ठात्समारभ्य न्यसेद्बीजैर्दशांगुलीः ॥ ३ ॥ करन्यासो मया प्रोक्तो ह्यंगन्यासं तथा शृणु । ॐ शिखायां रूं शिरसि क्षूं नेत्रयोः रूं वक्त्रे क्षूं भ्रुवोः रूं हृदये क्षूं नाभौ रूं बाह्वोः रूं गुह्ये ॐ रूं पादयोः अंगन्यासो मया प्रोक्तो

यक्ष किन्नर विद्याधर योगिनी अप्सरों के समूह कोई भी दुःख नहीं दे सकते ॥ ६ ॥ सिंह से पले सब सात करोड़ गणेश्वरों के रक्षण के लिए यह उत्तम तीर्थ दिखाया है ॥ ७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां सप्तमः पटलः ॥७॥

श्रीपार्वतीजी कहती हैं । हे प्रभो ! वह विद्या कैसी है उसके अक्षर कितने हैं इस बड़े गुप्त को कहिए ॥ १ ॥ श्रीशिव भगवान् कहते हैं । दो ॐकार से युक्त और तीन क्षूंकार से भूषित और पांच रूंकार करके युक्त दश बिंदुओं से पूरित ॥ २ ॥ यह शिव अघोर मंत्र है इसका न्यास यह है। अंगन्यास को कहता हूं । हे देवि ! जैसी विधि है सुन, बाएं अंगूठे से लेकर दश अंगुलियों में बीजों को स्थापन करे ॥३॥ करन्यास मैंने कह दिया । अब अंगन्यास कहता हूं सुन । ॐकार को शिखा में रूंकार को शिर में क्षूंकार को नेत्रों में रूंकार को मुख में क्षूंकार को भौंवों में रूंकार को हृदय में क्षूंकार को नाभि में रूंकार को बाहुओं में रूं गुह्य में रूं को पावों में यह मैंने अंगन्यास कह दिया अब दिशों

दिक्षुन्यासमिमं शृणु ॥ ४ ॥ ॐकारं पूर्वदिग्भागे रूंमाग्नेये तथैव च । क्षूंकारं दक्षिणे चैव रूं नैर्ऋते ततो न्यसेत् ॥ ५ ॥ क्षूंकारो वारुणे चैव रूंकारं वायुगोचरे क्षूंकारमुत्तरे चैव रूमीशान्यां च वै न्यसेत् ॥ ६ ॥ रूंकारं चाधःक्षिप्य क्षिपेदोंकारमूर्द्धतः । दिक्षुन्यासो मया प्रोक्तो येन धर्मस्थितिर्भवेत् ॥७॥ कुण्डन्यासं प्रवक्ष्यामि ये वै कुर्वंति साधकाः । ॐकार कुंडमध्ये च रूंकारं पूर्वतो न्यसेत् ॥ ८ ॥ क्षूंकारं चाग्निदिग्भागे रूंकारं याम्यतो न्यसेत् । क्षूंकारं नैर्ऋते न्यस्य रूंकारं वारुणे न्यसेत् ॥९॥ रूंकारं वायुकोणे तु रूंकारमुत्तरे न्यसेत् । ईशानकोणे रूंकारमोंकारं व्यापकं न्यसेत् ॥ १० ॥ एतत्कृत्वा विधानेन केदारं सलिलं पिवेत् । कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यामेवं विद्याभिमंत्रितम् ॥ ११ ॥ यः पिवेदुदकं देवि केदारसदृशो भवेत् । अज्ञात्वा च पिवेद्देवी विद्याहीनस्तु मानवः ॥ १२ ॥

के न्यासों को सुन ॥४॥ पूर्व दिशा में ॐकार को आग्नेय में रूंकार को दक्षिण में रूंकार को नैऋत्य में रुंकार को स्थापन करे ॥५॥ क्षूं को पश्चिम में रूंकार को वायव्य में क्षूंकार को उत्तर में रूंकार को ईशान में ॥६॥ रूंकार को नीचे ॐकार को ऊपर स्थापन करे यह दिशों का न्यास कहा जिससे धर्म की स्थिति हो ॥७॥ अब कुंडन्यास को कहता हूं जो साधक लोग करते हैं ॐकार को कुंड के बीच में और रूंकार को पूर्व में रखे ॥ ८ ॥ क्षूंकार को आग्नेय दिशा में रूंकार को दक्षिण दिशा में क्षूंकार को नैऋत दिशा में रखकर रूंकार को पश्चिम दिशा में रखे ॥ ९ ॥ रूंकार को वायव्य कोण में रूंकार को उत्तर में स्थापन कर ईशान कोण में रूंकार को रखे ॐकार को व्यापक में रखे ॥ १० ॥ इस न्यास को विधान से कर कृष्ण पक्ष की अष्टमी में या चतुर्दशी के दिन इस प्रकार मन्त्रों से मन्त्रित केदार के उदक को पीवै ॥ ११ ॥ हे देवि ! इस प्रकार जो पीवै वह केदार के तुल्य हो जावे अनजान मनुष्य मंत्र विना न पीवे ॥१२॥

विद्यायुक्तो भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा । मंदाकिन्यां तु तत्तोयं पिबन्वै वेदविद्भवेत् ॥ १३ ॥ कैदारमुदकं पीत्वा गृहे चैव समागतान् । क्षमापयित्वा चाचार्यांञ्छास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ १४ ॥ मुद्रिकां छत्रिकं चैव पादुकां तत्र दापयेत् । स्नात्वा नन्यमना भूत्वा दद्याद्गां च पयस्विनीम् ॥ १५ ॥ तांबूलं च विशेषेण ततो दत्वा क्षमापयेत् । त्वत्प्रसादात्कृतार्थोऽहं भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ १६ ॥ दद्याच्छक्त्यनुसारेण विना शास्त्रं न कारयेत् तस्मिंस्तुष्टेऽप्यहं तुष्टो मम तुल्यो ह्यसौ यतः ॥ १७ ॥ तस्मिन्दत्तं हुतं जप्तं सर्वं चाक्षयमाविशेत् । पश्चात्संपूजयेद्देवि शिवं भक्तपरायणम् ॥ १८ ॥ एष देवो यथा शक्त्या प्रीयतां मे त्रिलोचनः । कुर्याद्वित्तानुसारेण शास्त्र-दृष्टेन कर्मणा ॥ १९ ॥ एतत्सर्वं यथान्यायं कथितं तव सुव्रते । केदारस्य महाख्यानं मद्भावप्रदमुत्तमम् ॥ २० ॥ यस्त्विदं

हे देवि ! मंत्रित जल पीने से मनुष्य विद्यायुक्त होता है इसमें विचारणा नहीं करना मंदाकिनी में जो जल पान करे वह वेदवेत्ता होवै ॥ १३ ॥ केदार के उदक को पीकर घर में आके अपने आचार्य पुरोहितों को शास्त्रानुसार कर्म कर उन से क्षमा मांगे ॥ १४ ॥ जो मनुष्य अनन्य मन अर्थात् चित्त लगाकर स्नान करके दूध देने वाली गौ को देवै और अँगूठी छत्री खाड़ऊ देवे ॥१५॥ विशेष तांबूल देके क्षमापन करे कि आप के प्रसाद से जन्म २ में कृतार्थ होऊं ॥ १६ ॥ शक्ति के अनुसार देवे, शास्त्र के विरुद्ध न करै शिवजी बोले आचार्य प्रसन्न होने पर मैं प्रसन्न होता हूं जिस से वह मेरे तुल्य हैं ॥ १७ ॥ उसको दिया हवन किया जप किया सब अक्षय को प्राप्त होवे हे देवि! पीछे श्रीशिवजी का पूजन करै ॥ १८ ॥ यह त्रिलोचन श्रीशिवजी प्रसन्न होवे शास्त्र के अनुसार और अपने वित्त के अनुसार काम करे ॥ १९ ॥ हे सुव्रते हे देवि ! केदार के बड़े आख्यान को मैंने तुमको कहदिया यह आख्यान

पठते नित्यं यश्चैव शृणुयादपि । मुच्यते सर्वपापेभ्यो रुद्रलोकं स गच्छति ॥२१॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम अष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

श्रीदेव्युवाच । अप्राप्यैव मृता देव गृहान्निर्गम्य मानवाः । नैव दृष्ट्वा च केदारं नैव पीतं तु तज्जलम् ॥ १ ॥ तेषां च का गतिर्देव श्रोतुमिच्छामि तत्वतः । श्रीशिव उवाच ॥ अप्राप्ता ये मृता देवि गृहान्निर्गत्य मानवाः ॥ २ ॥ विचिन्त्य हृदि केदारं क्रोशमात्रं च भक्तितः । तेऽपि देवि नराः सर्वे भुंजंते परमं पदम् ॥ ३ ॥ संसारं नोपपद्यन्ते जन्ममृत्युविवर्जिताः । त्रिनेत्रा वृषभारूढाः यथाहं शंकरः स्वयम् ॥४॥ गच्छंति रुद्रभवने हेमकुण्डलमण्डिताः । मद्विधास्ते गणाः सर्वे शशांकांकितशेखराः ॥ ५ ॥ यदा संदृश्यते देवि मत्समानो

कैसा है कि मेरे भाव को देनेवाला है ॥ २० ॥ जो इसको नित्य पढ़ता है और सुनता है वह सब पापों से छूटता है और रुद्रलोक को जाता है ॥२०॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां अष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

देवी कहती है, कि हे देव! केदार की यात्रा को घर से निकलकर केदार को न देख और न उदक पिया हो, मार्ग ही में मरण को प्राप्त हो ॥ १ ॥ हे देव ! उनकी कौन गति होती है मैं तत्व से सुनना चाहती हूं। श्रीशिव भगवान् बोले कि, हे देवि! घर से निकल केदार को न पाकर जो मरजाते हैं॥२॥ केदार को हृदय में ध्यान कर भक्ति से एक कोश मात्र भी जो लोग जावें हे देवि ! वह मनुष्य परम पद को भोगते हैं ॥ ३ ॥ और संसार को प्राप्त नहीं होते हैं जन्म मरण से छूट जाते हैं तीन नेत्र वाले होकर जैसा स्वयं शंकर मैं हूं वृषभ में चढ़े वैसे वह भी हो जाते हैं ॥ ४ ॥ सुवर्ण के कुण्डलों से मंडित होतेहुए और चंद्रमा से चिन्हित शिर होते हुए वे सब मुझ सरीखे गण होते हुए रुद्रलोक में जाते हैं ॥ ५ ॥ हे देवि ! जब वह पुरुष श्रेष्ठ मेरे तुल्य देखा जाता

नरोत्तमः । तदा सर्वाणि चिन्हानि लक्ष्यंतेऽस्य सुरेश्वरि ॥ ६ ॥ पूर्ववृत्तकथां देवि तथा च कथयाम्यहम् । कश्चिद्द्विजः पुरा देवि धनधान्यसमृद्धिमान् ॥ ७ ॥ तस्य पुत्रो महाभक्तश्चिंतयस्तु दिवा निशम् । केदारं हि गमिष्यामि तच्च संभाव्यते सदा ॥ ८ ॥ न मन्यते पितानैव तदा माता विशेषतः । हृदयेनैव केदारं व्रजाम्येष न पश्यतु ॥ ९ ॥ एतद्विचिंतयामास गतोऽसौ मनसा गिरिम् । ततः संसारविरतः प्रस्थितो रात्रिमध्यतः ॥ १० ॥ दृष्टोऽसौ कोटपालेन हतो वै स शरेण च । सोऽथ दृष्टोऽप्यभिज्ञातस्तत्क्षणाद्ब्राह्मणीसुतः ॥ ११ ॥ तेन भीतेन देवेशि तदोपायं विचिन्वता । प्राकारस्य समीपे तु श्वविष्ठायामपश्यताम् ॥१२॥ स्थापितोऽसौ यदा विप्रः कोटपालेन धीमता । ततः प्रभाते विमले पुत्रोऽसौ च न दृश्यते ॥ १३ ॥ इतश्चेतश्च धावंतौ तौ गृहाश्रमवीक्षकौ । तत्र दुःखेन संतप्तौ ब्राह्मणी ब्राह्मणश्च

है तब उसके सब चिन्ह देखे जाते हैं ॥ ६ ॥ हे देवि ! पहले की कथा कहता हूं । कोई ब्राह्मण पहले समय में धन धान्य और बड़ी समृद्धि वाला था ॥७॥ उसका बड़ा भक्तिमान् पुत्र था वह रात्रि दिन विचारता था कि मैं केदार को जाऊंगा ॥ ८ ॥ किन्तु उसका पिता और माता उसका कहना नहीं मानते थे वह अपने अंतःकरण से केदार जाने की इच्छा करता था कि अवश्य जाऊंगा ॥ ९ ॥ यह विचार कर वह कैलास को संसार से डरता हुआ मध्य रात्रि में चल पड़ा ॥ १० ॥ रात्रि में वह कोतवाल ने देखा और बाण से उसको मारा तब उसके समीप में आके देखा तो ब्राह्मणी का पुत्र मालूम हुआ ॥ ११ ॥ हे देवेशि ! उस कोतवाल ने डरकर उपाय विचारकर प्राकार के निकट जहां कुत्ते की विष्ठा पड़ी थी ॥ १२ ॥ उस जगह उसको गाड़ दिया इस पीछे जब प्रातःकाल हुआ तब ब्राह्मण और ब्राह्मणी ने पुत्र को न देखा ॥ १३ ॥ तहां ब्राह्मण और ब्राह्मणी दोनों पुत्र के दुःख से दुःखित

तौ ॥ १४ ॥ पृच्छन्तौ पथिकांल्लोकान्पुत्रपुत्रेतिवादिनौ । स्मृत्वा पुत्रस्य वाक्यं तु केदारगमने सदा ॥ १५ ॥ विप्रास्ताभ्यां विसृष्टाश्च पुत्रान्वेषणकारणात् । पुत्रमातापितरौ द्वौ च पुत्रदुःख-प्रपीडितौ ॥ १६ ॥ पृच्छंतस्ते तदा विप्राः केदारे च महापथे । न दृष्टो न श्रुतश्चायं निराशैस्तैर्विसर्जितः ॥ १७ ॥ संप्राप्ते मोक्षमार्गे च केदारेऽथ नभोध्वनिः । सर्वे च स्वगृहं प्राप्ताः श्रुतंस्तैस्तावदध्वनिः ॥ १८ ॥ तावत्कस्यापि भूतस्य ध्वनि-र्दृष्ट्वैककंद्विजम् । भूत उवाच । कथयस्व महाभाग प्रेषितः केन कर्मणा ॥ १९ ॥ विप्र उवाच । प्रेषितोऽस्मि द्विजेनात्र कार्यार्थं तु ततः शृणु । ब्राह्मणस्य सुतो नष्टस्तस्यान्वेषणआग-ताः ॥ २० ॥ भूत उवाच । को दृष्टः केन चैवात्र कस्यासौ ब्राह्मणः सुतः । विप्र उवाच । न दृष्टो न श्रुतश्चैव मृतो भ-

होते हुए इधर उधर घरों में देखते फिरते रहे ॥ १४ ॥ आते जाते पथिकों को पूछते थे और पुत्र हे पुत्र कहते हुए उसका कहना याद आया कि वह नित्य केदार जाने को कहता था ॥ १५ ॥ उसके मा बाप ने खोज के लिये कई ब्राह्मण भेजे और आप बड़े दुःख से व्याकुल हुए ॥ १६ ॥ वह ब्राह्मण लोग जो ढूंढ़ते गये थे केदार के मार्ग में उन्हों ने पूछा खोज किया तो कहीं न देखा सुना इससे आशा छोड़ लौट आये ॥ १७ ॥ इतने में ब्राह्मण का पुत्र मोक्षमार्ग में प्राप्त हुआ करिके केदार में आकाशवाणी का शब्द सुना ॥ १८ ॥ इतने में किसी भूत का शब्द सुनाई दिया तब वह एक ब्राह्मण को बोला कि हे महाभाग तुम किस काम के लिये यहां आये हो ॥ १९ ॥ ब्राह्मण बोला कि मैं किसी एक ब्राह्मण ने काम को भेजा हूं सुनो एक ब्राह्मण का पुत्र नष्ट हुआ है उसको ढूंढ़ने के लिए हमलोग आये हैं ॥ २० ॥ भूत बोला किसने देखा किस ब्राह्मण का पुत्र है । ब्राह्मण बोला कि हमने कहीं देखा न सुना कहां मरगया क्या हुआ ॥ २१ ॥ ब्राह्मण का पुत्र बोला कि हे विप्र ! गंधर्वों करिके

स्मनि कुत्र सः ॥ २१ ॥ पुत्र उवाच । स्वर्गे तिष्ठाम्यहं विप्र गंधर्वगणसेवितः । रुद्रकन्या महाभोग भोगी च सततं स्थितः ॥२२॥ अक्षयं च पदं प्राप्तं हृदि केदारचिंतनात् । विप्र उवाच । केन कर्मविपाकेन संप्राप्तमक्षयं पदम् ॥ २३ ॥ पुत्र उवाच । अहं केदारकं चात्र प्रस्थितो रात्रिमध्यतः । दृष्टोऽस्मि कोटपालेन हतो रात्रौ शरेण च ॥ २४ ॥ तत्क्षणान्मे गताः प्राणास्ततो रूपं प्रवर्तते । सद्यो विमानमारुह्य द्वादशादित्य भास्वरम् ॥ २५ ॥ अप्सरोगणसंकीर्णं सर्वाभरणभूषितम् । तेन कर्मविपाकेन संप्राप्तोऽस्मि शिवालयम् ॥ २६ ॥ एकोत्तरं कुलशतं समस्तं तारितं मया । मातरः पितरश्चैव तथा स्वजनबांधवाः ॥ २७ ॥ तथा ह्यशीतिमान्याश्च बंधून् वाक्यमुदीरयेत् । ममोपरि द्विसहस्रमुद्धरेत्तु कुलं तथा ॥ २८ ॥ अत्रैव तु मया दृष्टं यादृशं सर्वमेव तु । अन्यन्मातुश्च मे वाच्यं मा

सेवित होता हुआ शिवलोक की कन्याओं को भोगता हुआ यहां शिवलोक में स्थित हूं ॥ २२ ॥ मन में केदार के चिंतन करने से अक्षय पद मुझे प्राप्त भया । ब्राह्मण बोला किस कर्म के परिपाक से तुम को अक्षयपद प्राप्त भया ॥ २३ ॥ पुत्र बोला मैं मध्यरात्रि में केदार को आया कोतवाल ने देखा रात्रि में बाण से मारा ॥ २४ ॥ उसी समय मेरे प्राण निकल गये और यह रूप हो गया बारह सूर्य के समान प्रकाशमान विमान में चढ़कर ॥ २५ ॥ अप्सरों के समूह से युक्त संपूर्ण आभरणों से भूषित होता हुआ केदार का चिंतन करने से शिवजी के स्थान को प्राप्त हुआ ॥ २६ ॥ संपूर्ण एक सौ एक कुल को और माता पिता अपने भाई बंधुओं को तारा ॥ २७ ॥ यह सब वृत्तांत कृपा कर मेरे सब बंधुओं से कह देना ॥ २८ ॥ यहीं मैंने जो कुछ देखा है मेरी माता से कहना कि तुम कुछ दुःख मत करो ॥ २९ ॥ मैंने भोगार्थ संपूर्ण उत्तम भोग

दुःखं कुरु चांबिके ॥ २९ ॥ मया समुपभोगार्थं संप्राप्तः काम उत्तमः । मृत्युशोको न मे कार्यः एतत्सर्वं वदाम्यहम् ॥ ३० ॥ विप्र उवाच । यदि पुत्रस्य वाच्यं तु तन्मे सत्यं प्रकाशय । ज्ञाति ज्ञानं दर्शय त्वं येन निःसंशयो भवेत् ॥ ३१ ॥ तदहं प्रत्यायिष्यामि पितरं ते समंततः । पुत्र उवाच । नचेत्पिता विश्वसति तदाख्येयो द्विजोत्तम ॥ ३२ ॥ ज्ञानस्य च पराभूतो मम देहे समुद्भवः । केदारप्रस्थितोऽहं वै निशिमध्ये यदा ततः ॥ ३३ ॥ दृष्टोऽस्मि कोटपालेन निहतस्तच्छरेण च । दृष्टस्तावदहं तेन तदा विस्मयचेतसा ॥ ३४ ॥ निक्षिप्तः सहसा चैव प्राकारस्य समीपतः । अग्नौ निक्षिप्य देहं मे दहन्तु मुदिताजनाः ॥ ३५ ॥ यतंतं पितरं विप्र शीघ्रं दर्शय मामुत । कुरुते येन संसार अग्निदाहं हुताशने ॥ ३६ ॥ मध्ये यं कथये त्वेदं तस्य विप्रस्य पश्यतः । विमानवरमारुह्य भानुकोटिसमद्युतिम् ॥ ३७ ॥ नानाविधान्महाभोगान् भुंक्ते

पाये मेरे मरने का शोक मत करो यह सब मैं कहता हूं ॥ ३० ॥ ब्राह्मण बोला यह बात सत्य है तो जातभाइयों को संदेह न हो और मालूम होजावे ऐसा प्रकट करो ॥ ३१ ॥ इससे मैं प्रतीत करूंगा तुमारे पिता को और चारों ओर कहूंगा । पुत्र बोला । हे ब्राह्मण ! मेरा पिता इस बात को प्रतीत करे तो तब यह कहना ॥ ३२ ॥ मेरे शरीर में ज्ञान उत्पन्न हुआ तब मध्यरात्रि में मैं केदार को चला ॥ ३३ ॥ तहां कोतवाल ने मुझे देखा और उसके बाण से मैं मारा गया तब उसने मुझे देखा विस्मय को प्राप्त हुआ ॥ ३४ ॥ प्राकार के निकट में विना विचारे गाड़ दिया इस मेरे शरीर को बांधव लोग प्रसन्न होकर अग्निसंस्कार करें ॥ ३५ ॥ हे विप्र ! मेरे पिता को शीघ्र कहकर अग्निदाह कराना ॥ ३६ ॥ इस वृत्तांत को मेरे पिता को कह देना कि करोड़ सूर्य के समान प्रकाशमान विमान में चढ़कर तुम्हारा पुत्र स्वर्ग को गया ॥ ३७ ॥

हरपुरे महान्। एकोत्तरशतं देवि मयाऽपि सहितो दिवि ॥ ३८॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम नवमः पटलः ॥ ९ ॥

श्रीदेव्युवाच । यदि कोत्राप्यजाना नः शास्त्रमुक्तं यथाविधि। अगम्याऽगमनं कुर्यात्तत्फलं वद शंकर ॥ १ ॥ श्री शंकर उवाच । यावत्पृच्छसि देवेशि तत्सर्वं कथयामि ते । कोऽपि सर्वत्र भोक्ता तु ब्राह्मणो ज्ञानिसत्तमः ॥ २ ॥ सदैव मम भक्तो हि ध्यात्वा सर्वांगईश्वरम् । तेन विप्रेण सुश्रोणि संसारभयभीरुणा ॥ ३ ॥ केदारगमनं कृत्वा ह्यहं दृष्टो न संशयः । पुनश्चैव गृहं प्राप्त इष्टैः सह तु तिष्ठति ॥ ४ ॥ अथासौ राजसदनं कदाचिच्च गतोऽभवत । आशीर्वादपरो विप्रो दानं लब्ध्वा पुनः पुनः ॥ ५ ॥ तेन दृष्टाश्वपाकी च मधुरध्वनिशोभिता । तस्या गीतध्वनिं श्रुत्वा सुस्वरं कर्णशीतलम् ॥ ६ ॥ मोहितो ब्राह्मणो देवि दृष्ट्वा म्लेच्छीं तथाविधाम् । मूर्च्छिता

हे देवि ! नाना प्रकार के भोगों को शिवपुर में भोगा और मेरे साथ निवास किया ॥ ३८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां नवमः पटलः ॥ ९ ॥

श्रीपार्वतीजी बोली कि हे शंकर ! कोई शास्त्रविधि को न जानता हुआ अगम्यागमन करे तो उसका क्या फल है ॥ १ ॥ श्रीशिवजी बोले हे देवि ! जो तू पूंछती है मैं सब कहता हूं कोई ब्राह्मण ज्ञानियों में उत्तम और सर्वत्र भोजन करनेवाला ॥ २ ॥ सदा मेरा भक्त मेरे संपूर्ण अंग को ध्यान करनेवाला था हे देवि ! संसारभय से डरनेवाले उसने ॥ ३ ॥ केदार यात्रा की और मेरा दर्शन किया फिर अपने घर को आके अपने लोगों के साथ रहने लगा ॥ ४ ॥ कभी वह राजदर्बार को गया राजा को आशीर्वाद देके फिर २ दान लेकर आया ॥ ५ ॥ उसने एक सुंदर स्वर वाली चांडाली देखी उसके गीत का शब्द सुंदर कर्ण को सुख देनेवाला सुनकर ॥ ६ ॥ हे देवि ! ऐसी

चेतना तस्य सद्यो नारी निरीक्षणात् ॥ ७ ॥ पुनरालोक्य तां सोऽपि कामांधः पतितो भुवि । विसर्जितेन गीतेन नृपवृंदे गृहं गते ॥ ८ ॥ ब्राह्मणस्तेन मार्गेण गतो म्लेच्छ्यास्तु मंदिरे । म्लेच्छी सा प्रार्थिता तेन भार्या भव मम स्वयम् ॥ ९ ॥ म्लेच्छ्युवाच । दृश्यते ब्राह्मणं रूपं कुत्सितं तव भाषितम् । सर्ववर्णमहाश्रेष्ठं सर्वशास्त्रविशारदम् ॥ १० ॥ भाषसे विगुणं विप्र महतां लोमहर्षणम् । नीचाहं सर्ववर्णानां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः ॥ ११ ॥ प्रसंगो नैव कर्तव्यो म्लेच्छ्यहं ब्राह्मणो भवान् । ब्राह्मण उवाच । विवादो नैव कर्तव्यो ह्यस्मिन्काले मया प्रिये ॥ १२ ॥ यद्दोषो जायते देहे सर्वस्त्रमपि तिष्ठति । तेन सा कामलुब्धेन मधुरालापवादिना ॥ १३ ॥ म्लेच्छी वशीकृतास्ते च विप्रेणात्यादरेण तु । गृहे वासगता तेन म्लेच्छी सा सह मोदते ॥१४॥ तत्रासौ गृहिणी जाता सर्व-

म्लेच्छी को देख ब्राह्मण मोहित भया उस नारी को देख अचेत होगया ॥७॥ फिर उसको देखकर ब्राह्मण कामांध हो भूमि में गिरा जब गाना बंद होगया राजे लोग अपने घर को चले आये ॥ ८ ॥ ब्राह्मण उसी राह उस म्लेच्छी के घर में गया और उसको अपनी भार्या होनेको कहा ॥ ९ ॥ म्लेच्छी बोली ब्राह्मणकासा दीखता है यह तुम्हारा कहना बहुत बुरा है तुम सब वर्णों में श्रेष्ठ और सर्व शास्त्र को जाननेवाले हो ॥ १० ॥ तुम बड़ा अनुचित कहते हो बड़े लोगों को रोमांच होनेवाला वचन कहते मैं सब से नीच हूं तुम ब्राह्मण सब के गुरु हो ॥ ११ ॥ मैं म्लेच्छी हूं मेरे साथ प्रसंग नहीं करना मैं म्लेच्छी तुम ब्राह्मण हो, ब्राह्मण बोला हे प्रिये ! इस समय मेरे साथ विवाद नहीं करना ॥ १२ ॥ दोष सब शरीरों में है कहकर कामलुब्ध और मीठी बात बोलनेवाले ब्राह्मण ने ॥ १३ ॥ बड़े आदर से उसको वश किया उसके घर में जाके वास किया ॥ १४ ॥ सर्व लक्षण संपन्न वह म्लेच्छी उसकी स्त्री होगई

लक्षणसंयुता । यथा प्राप्ता उर्वशी च दृश्यते चारुलोचना ॥ १५॥ सुप्रतिष्ठितपादास्या करपल्लवसुप्रभा । सुरूपा च सुजंघाभ्यां कदलीस्तंभसंनिभा ॥ १६ ॥ क्षामोदरी सुकन्या च विस्तीर्ण हृदया तथा । चलत्प्रदक्षिणावर्तमध्यत्रिवलिसंयुता ॥ १७ ॥ स्तनद्वयभराक्रांता बाहुभ्यां विसरुग्धरा । मुखं पूर्णेन्दुसंकाशं कामराजाम्बुजप्रभम् ॥ १८ ॥ तां दृष्ट्वा लोकललनां सर्वलक्षणलक्षितां । विप्रस्य तस्य लुब्धस्य गतं जन्म तया सह ॥ १९॥ ततः प्रभूतकालेन जरा तस्याऽभवत्तदा । अतिज्वरेण तप्तस्य मृत्युश्च तदनंतरम् ॥ २० ॥ ततो विप्रपिता यत्र म्लेच्छी तद्भवनं गता । प्रणाममकरोत्तस्य म्लेच्छी विप्रस्य संनिधौ ॥ २१ ॥ तव पुत्रो हि मे भर्त्ता ज्वरेण गतजीवनः। अग्निदाहं कुरुष्वास्य यद्ययं प्राणवल्लभः ॥२२॥ विप्र उवाच । न मे कार्यं सुतेनात्र तथा चैव मतः शृणु । चां-

सुंदर नेत्र वाली उर्वशी जैसी दीख पड़ती थी ॥ १५ ॥ उसके हाथ पांव कमल के सदृश थे रूप बड़ा उत्तम था और जंघा उसकी केले के स्तंभ के समान थी ॥ १६ ॥ कटिभाग उसका बड़ा पतला और छाती बड़ी विस्तीर्ण त्रिवली करके युक्त ॥ १७ ॥ पूर्णचंद्र के समान मुख वाली स्तनमंडल भार से झुकी हुई मानों कामदेव की रती है ॥ १८ ॥ लोगों में देखने योग्य सब लक्षण युक्त उसको देख उसपर लुब्ध उस ब्राह्मण का जन्म उस स्त्री के साथ बीता ॥ १९ ॥ कुछ काल बीते वह ब्राह्मण वृद्ध हो बड़े ज्वर से मर गया ॥ २० ॥ तब वह म्लेच्छी जहां उस ब्राह्मण का पिता था उसके घर को गई उसको प्रणाम किया ॥ २१ ॥ और कहा कि तुम्हारा पुत्र मेरा भर्त्ता ज्वर से मर गया तुम्हारा प्राणप्यारा है तो इसका अग्निदाह करो ॥२२॥ ब्राह्मण बोला । इस पुत्र से मेरा कोई काम नहीं सुन यह चंडाल कर्म करने से चंडाल होगया ॥ २३ ॥ भगवान् शिवजी बोले उसका कहना सुन म्लेच्छी

डालकर्मतां यातः कर्म चंडाल उच्यते ॥ २३ ॥ ईश्वर उवाच । तच्छुत्वा सा गता गेहं म्लेच्छी शोकप्रपीडिता । गृहोपस्करणं त्यक्त्वा तस्य दाहं चकार ह ॥ २४ ॥ स्वगृहस्तु तथा दग्धो धूमाजाताः सुदारुणाः । तत्स्थाने वटवृक्षस्य शाखायामाललं-बिरे ॥ २५ ॥ तत्र वृक्षे समारूढं भूतानां शतपंचकम् । धूमेन चावृतो वृक्षो भूतैश्च समधिष्ठितः ॥ २६ ॥ स्वर्गलोकं गता भूताः वटवृक्षेणसंयुताः । क्रीडंति चाक्षयं कालं रुद्रलोकं समुद्गताः ॥ २७ ॥ एको भूतो गतोऽन्यत्र भोज्यं लब्ध्वा स गोत्रतः । तत्र यावच्च संप्राप्तो वटस्थानं न दृश्यते ॥ २८ ॥ तदा विस्मयमापन्नं रुदंतं द्विजसत्तमः । कस्त्वं खिद्यसि दुःखार्त्तो ह्यत्र-स्थाने वदस्व मे ॥२९॥ भूत उवाच । किं त्वं पृच्छसि मां विप्र परित्राणं कुरुष्व मे । विप्र उवाच । हेतुना केन भूतस्त्वं क्रंदसे दारुणं वद॥३०॥ भूत उवाच । गतकेदारको विप्र सोऽस्मिन्स्था-

शोक से दुःखित हो अपने घर के काम को छोड़ ब्राह्मण का दाह करती भई ॥ २४ ॥ और अपना घर भी जला दिया उससे बड़ा धुंआ निकला उस जगे वट का एक बड़ा वृक्ष था उसकी सब शाखा धुएं से भरगई ॥ २५ ॥ उस वृक्ष में पांच सौ भूत रहते थे भूतों से युक्त वह वृक्ष धुआं से व्याप्त हुआ ॥२६॥ वट वृक्ष से संयुक्त वह भूत लोग स्वर्ग को गये शिवलोक को पाकर अनंत काल तक क्रीड़ा करते रहे ॥ २७ ॥ उनमें से एक भूत अपने गोत्र के भोजन में लुब्ध हो और जगे चला गया था लौट के आकर देखा तो वह वट वृक्ष ही वहां नहीं ॥ २८ ॥ विस्मय करता हुआ और रोता हुआ उसको देख ब्राह्मण बोला तू कौन है मुझ से बोल ॥ २९ ॥ भूत बोला हे ब्राह्मण मुझे क्या पूछता है मेरी रक्षा कर तब ब्राह्मण बोला तू किस कारण अत्यंत दारुण रोता है ॥३०॥ भूत बोला कोई ब्राह्मण केदार को जानेवाला यहां रह-ता था वह एक म्लेच्छी से आसक्त हो उसके घर में रहा ॥ ३१ ॥ उस की

ने प्रतिष्ठितः । सोऽपि म्लेच्छी समासक्तो गृहदास्यां यदा स्थितः ॥ ३१ ॥ तस्य जाता तदा कन्या सुरूपा च सुलक्षणा । तस्यां सोऽपि रतो विप्रो गतं जन्म तया सह ॥ ३२ ॥ न्यग्रोधो यो गृहद्वारे भूतानां शतपंचकम् । आरुह्य सेवते चैकं म्लेच्छी भूतं महाद्रुमम् ॥ ३३ ॥ तत्क्षणात्प्राप्तमृत्युश्च वाह्निदाहस्तया कृतः । तेन भूतागताः स्वर्गं वटवृक्षेण संयुताः ॥३४॥ अक्षयं च पदं प्राप्तास्तद्धूमेन द्विजोत्तम। अहं पापी दुराचारो ह्यन्यकार्यव्यवस्थितः ॥ ३५ ॥ तेन दुःखेन संतप्तः क्रंदयामि पुनः पुनः । विप्र उवाच। यदि किंचित्प्रकर्त्तव्यं मया प्रीत्या प्रसादनम् ॥ ३६ ॥ कथयस्व महाभूत येनाहं प्रकरोमि तत् । भूत उवाच । यदि मे वचनं श्रोतुं श्रद्धा कर्तुं च ते द्विज॥३७॥ मन्यसे विप्र यद्येवं सुमहत्पापहारकम् । तत्क्षणात्कुरु विप्रेन्द्र मैत्रं कार्यं सुवत्सलम् ॥ ३८ ॥ तस्य विप्रस्य या कन्या सुरूपा च सुलक्षणा । तस्याः कृते भवेन्मोक्षः करणीयं द्विजोत्तम॥३९॥

एक सुन्दरी रूपवती कन्या उत्पन्न हुई सारा जन्म उसका उसी के साथ बीता ॥ ३२ ॥ उस के घर पर एक वट का वृक्ष था जिस में पांच सौ भूत रहते थे वह म्लेच्छी उस पर चढ़ सेवन करती थी ॥ ३३ ॥ मरे हुए ब्राह्मण का उस म्लेच्छी ने वहां पर दाह किया इस से वह भूत सब के सब वृक्ष सहित स्वर्ग को गये ॥ ३४ ॥ वे सब भूत अक्षय पद को प्राप्त हुए मैं दुराचारी पापी और काम में रहा ॥ ३५ ॥ उस दुःख से संतप्त होता हुआ मैं बार २ रोता हूं । ब्राह्मण बोला । यदि मैंने कुछ करना हो तो कहो ॥ ३६ ॥ कहो जो कुछ करना हो भूत बोला यदि मेरे कहे को सुनकर करने की श्रद्धा हो तो ॥ ३७ ॥ मुझे मित्र मान मेरा बड़ा पाप दूर करना चाहता है तो मित्र का काम कर ॥ ३८ ॥ उस ब्राह्मण की रूपवती एक कन्या है उस से मेरा मोक्ष हो सक्ता है ॥ ३९ ॥ ब्राह्मण बोला यदि इस से तेरा मोक्ष होवै तो मैं

विप्र उवाच । यदि मोक्षो भवेत्तुभ्यं शीघ्रं तत्प्रकरोम्यहम् ।
ईश्वर उवाच । तेन विप्रेण दग्ध्वा च स्थाने चैव हुताशने ॥ ४० ॥
तद्धूमो विहितस्तेन पतितः सर्वभूतकः । पावके तु प्रज्वलिते
विप्राशा गृहमध्यतः ॥ ४१ ॥ तत्क्षणाद्दिव्यदेहस्तु त्रिनेत्रः स
चतुर्भुजः । कुण्डलाभरणी भूत्वा शशांकाधर एव च ॥ ४२ ॥
प्रणम्य हृष्टपुष्टात्मा प्रोवाच गगनास्थितः । त्वत्प्रसादाद्द्विजश्रेष्ठ
स्वर्गं गच्छामि चाक्षयम् ॥ ४३ ॥ तस्य भूतस्य रूपं हि
तत्क्षणात्तेन वीक्षितम् । विप्रोऽपि पतितः सोऽपि तत्र मध्ये
हुताशने ॥ ४४ ॥ सोऽप्यगच्छत्तदा देवि यत्राहं शंकरः
स्वयम् । अक्षयं च पदं प्राप्तो रुद्रत्वमनिवर्त्तकम् ॥ ४५ ॥ इति
श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं
नाम दशम पटलः ॥ १० ॥

श्रीदेव्युवाच । तेनोदकेन पीतेन किं चिन्हं देहजं
भवेत् । कथं मोक्षपरिज्ञानं चित्तसंयति कारणम् ॥ १ ॥

झट करता हूं । शिवजी बोले तब उस ब्राह्मण ने उस को जला दिया ॥ ४० ॥
भूत उस धूम से व्याप्त होता हुआ ब्राह्मण की आज्ञा से अग्नि में गिर
पड़ा ॥ ४१ ॥ तत्काल वह भूत दिव्य देह पाकर तीन नेत्र, चतुर्भुज और
कुण्डलों करिके आभूषित शिर पर चन्द्रमा को धारण करता हुआ ॥ ४२ ॥
आकाश में स्थित हो प्रसन्न होता हुआ नमस्कार कर बोला हे ब्राह्मण !
मैं तुम्हारे प्रसाद से स्वर्ग को जाता हूं ॥ ४३ ॥ भूत का ऐसा रूप होता देख
ब्राह्मण भी उस अग्नि में कूद पड़ा ॥ ४४ ॥ हे देवि ! वह ब्राह्मण भी मेरे
स्थान में आया और अक्षय पद को प्राप्त हुआ संसार में नहीं आया ॥ ४५ ॥
इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां दशमः पटलः ॥ १० ॥

श्रीपार्वतीजी बोली उस उदक के पीने से क्या चिन्ह देह से उत्पन्न होता
है चित्त को प्रतीत देनेवाला मोक्ष का कैसा ज्ञान होता है ॥ १ ॥ यह मुझे

एतदेव ममाख्याहि मानवानां हिताय च । ईश्वर उवाच ।
पीतमात्रे जलं देवि रौद्रो भवति वै गणः ॥ २ ॥
गर्जितो बहुशब्देन महोत्साहो गजेन्द्रवत् । तावद्रुद्र-
विमानेन प्रयाति त्रिदिवं जनः ॥ ३ ॥ अप्सरोगण
संकीर्णः नाना देवी समावृतः । गायंति तत्र गंधर्वाः नृत्यंति
गणनायकाः ॥४॥ महारागं प्रकुर्वन्ति रुद्रकन्याः समंततः ।
तावत्तत्र ध्वनिं श्रुत्वा क्षणेनैव निरीक्षते ॥ ५ ॥ क्षणात्पश्यति
सः स्वर्गं विमानवरमास्थितः । सूक्ष्मगीतध्वनिं श्रुत्वा क्षणेनैव
स पश्यति ॥६॥ आत्मानं चित्तसुभगं पूज्यमानं महेश्वरम् ।
जटामुकुटसंवीतं चन्द्रार्धेनविभूषितम् ॥ ७ ॥ त्र्यक्षं चतुर्भुजं
चैव कुंडलद्योतिताननम् । श्रीदेव्युवाच । तस्य संभवतो लिंगं
कथं चैव स पश्यति ॥ ८ ॥ एतन्मे संशयं देव कथयस्व
महेश्वर । ईश्वर उवाच । शृणु देवि कथां दिव्यां सर्वपापप्रणा-

कहिए जिससे लोगों का कल्याण हो । भगवान् शिवजी बोले हे देवि ! जल
पीने मात्र से मनुष्य रुद्र का गण होता है ॥ २ ॥ बड़े शब्द को गर्जन कर
गजेन्द्र जैसा बड़े उत्साह से रुद्र विमानमें चढ़कर मनुष्य स्वर्गको जाता है॥३॥
अप्सरा गण गंधर्व तहां गान करते हैं और गणनाथ नाचते हैं वह पुरुष नाना
देवांगना करिके युक्त रहता है ॥४॥ चारों ओर से रुद्रकन्या रागों को गाती
हैं क्षण में राग ध्वनि को सुनता है और देखता है ॥ ५ ॥ विमान में चढ़ क्षण में
वह स्वर्ग को देखता है और बारीक गीत ध्वनि को सुनता है ॥ ६ ॥ अपने
चित्तको सुभग पूज्यमान जटा मुकुट को धारण किया अर्द्धचंद्र विभूषित महेश्वर
को मानता है ॥ ७ ॥ कुंडल करके शोभायमान तीन नेत्र चतुर्भुज अपने को
देखता है । पार्वतीजी बोली । उसका लिंग शरीर होता है वह किस तरह देखता
है ॥ ८ ॥ मुझे संशय है हे महेश्वर कहो । भगवान् शिवजी बोले। हे देवि !

शिनीम् ॥ ९ ॥ कुले महति विप्रस्य दुहिता भूत्पतिव्रता । का-
लेन विहिता सा च विधवा पूर्वकर्मणा ॥ १० ॥ तदा सा
चिंतयत्कर्म केदारगमनं प्रति । यास्याम्यहं च केदारं शीघ्रमन्वे-
षणाय च ॥११॥ तया भक्तया तदा सा च गता वै हिमपर्वते ।
दृष्ट्वा चैव तु केदारमीशानममराधिपम ॥१२॥ रेतोवारि ततः
पीत्वा पुनरेवागता गृहम् । आमंत्रयित्वा सा विप्रान् भोजया-
मास मंदिरे ॥ १३ ॥ कौमारं यौवनं दृष्ट्वा भ्रातृभिः स्वजनै-
र्वृता । प्राग्भावविनिवृत्यै तु दानं दत्वा क्षमापयत ॥१४॥
तावत्सा धर्मसंयुक्ता व्रतं नियममाचरत् । यावत् तस्यास्तदा
भ्राता चकार कलहं प्रिये ॥ १५ ॥ महद्भिर्दुष्टवचनैर्देवदूषण-
तत्परैः । यादृशी तादृशी त्वं हि केदारगमनेरता॥१६॥हृदये
संभवेन्नैव लिंगं नेदं कदा श्रुतम् । श्रुत्वा च शोकसंतप्ता दुःखं कृत्वा

सुन मैं सब पापों को नाश करने वाली दिव्य कथा को कहता हूं ॥ ९ ॥
बड़े कुल में उत्पन्न एक ब्राह्मण की पतिव्रता कन्या थी पूर्वजन्म के कर्मफल से
वह कुछ काल में विधवा हुई ॥ १० ॥ उस समय वह केदार यात्रा की चिंता
करती भई शीघ्र केदार को अन्वेषण के लिए जाऊंगी ॥ ११ ॥ उस समय
वह हिमालय पर्वत में गई जाके केदारको और देव देव ईशान शिवको देखकर
॥ १२ ॥ वहां रेतोदक को पीके फिर अपने घरको आई ब्राह्मणों को बुला
भोजन कराती भई ॥ १३ ॥ अपनी युवा अवस्था देख अपने लोगों से युक्त
होती हुई पहला भाव दूरकर्ने के लिए ब्राह्मणों को दान दे क्षमापन करती
भई ॥ १४ ॥ धर्ममें तत्पर हो व्रत नियमो करती भई हे देवि ! इतने में उसका
भाई उससे कलह करने लगा ॥ १५ ॥ बड़े दुष्ट वचनों से जिनमें देवता की
निंदा हो तिनों करके कहता था कि तू ऐसी है तैसी है बड़ी केदार को
जाने वाली ॥ १६ ॥ तू कहती थी कि हृदय में शिवलिंग होता है तो क्यों
नहीं हुआ हमने कहीं ऐसी बात नहीं सुनी भाई के ऐसे वचन को सुन रात दिन

ह्यहर्निशम्॥१७॥केदारं हृदये चिंत्य किमेव मुदकात्फलम्।शोचंती निशि सा दीर्घं निद्रां याता च तत्क्षणात्॥१८॥तावत्पश्यति देवं च जटामुकुटधारिणम्। देवतादर्शनं लब्ध्वा ब्राह्मणी प्रणतः स्थिता ॥ १९ ॥ अब्रवीत् पादलग्ना सा देवदेवं महेश्वरम् । किमर्थंतु जलं पीतं भ्राता मे वक्ति भाषितम् ॥ २० ॥ एतत्कथय देवेश त्वद्यात्रा च न निष्फला । श्रीकेदार उवाच । मा शोचीस्त्वं महादेवि सफलं जन्म तत्तव ॥ २१ ॥ त्वधृदि प्रभवेल्लिंगं कंठमात्रं प्रसादतः । प्रभाते विमले प्राप्ते चाहूय स्वसहोदरम् ॥ २२ ॥ अपरेषां तथाग्रे च गोदोहं पिब सुंदरि अंगुलीं च मुखे दत्वा शुद्धिं कृत्वा च तत्क्षणात् ॥ २३ ॥ तन्मध्ये च महालिंगं पश्येत्कंठसमप्रभम् । प्रपश्यंतः सर्वलोका निश्चयो जायते ध्रुवम् ॥ २४ ॥ ईश्वर उवाच । प्रभाते तादृशं कर्म सर्वलोकैर्विलोकितम् । लिंगभेदभयाद्भीता ब्राह्मणी च

बड़ी चिंता कर दुःख शोक से व्याकुल होती भई ॥ १७ ॥ इससे वह हृदय में सदा केदार को चिंतन करती थी कि इस उदकपान का क्या फल है रात में शोचती हुई निद्रा आगई ॥ १८ ॥ इतने में जटा मुकुट धारण किए शिवजी को देखती भई देवदर्शन पाके ब्राह्मणी प्रणाम करती भई ॥ १९ ॥ भगवान के पांवों में लगकर बोलती भई कि मेरा भाई बोलता है कि किस लिए तूने केदार का उदक पिया ॥ २० ॥ हे देवेश! तुमारी यात्रा निष्फल नहीं कहिए । भगवान् बोले कि हे देवि ! शोच मत कर तेरा जन्म सफल होगया ॥ २१ ॥ तेरे हृदय में कंठमात्र लिंग उत्पन्न होगया प्रातःकाल अपने भाई को बुलाकर ॥२२॥ औरों को भी बुलाकर सबसे आगे गायको दोहन कर अपनी अंगुली को मुख में रखना उसी बार ॥ २३ ॥ उसके मध्य में सुवर्ण सदृश महालिंग को देखे और सब लोग देखेंगे तब सब को विश्वास होजायगा ॥ २४ ॥ शिवजी बोले । ऐसे

ततो भवत् ॥ २५ ॥ हाहाकारः कृतः सर्वैर्द्विजैस्तद्भ्रातृ नि-
श्चिते । पापिष्ठा भ्रातरो ह्यस्या दुर्मदाः कुलपांसनः ॥ २६ ॥
भगिनीनिंदका मूढा देवताब्रह्मद्वेषिणः । एत एव महाघोरे
पतंति नरकार्णवे ॥ २७ ॥ लिंगभेदेन ते सर्वे भगिनी
शब्दकारकाः । ततः सा ब्राह्मणी विप्रैरुक्ता लिंगं त्वमाहर॥२८॥
गोदोहनं च प्रपिबेद्येनेदं संनिवर्तयेत् । पीते दुग्धे तदा ग्राता
ब्राह्मणी क्षीणदुष्कृता ॥ २९ ॥ संतोष्य ब्राह्मणान् प्रीत्या
प्राप्ता तत्परमं पदम् । अहं पापी दुराचारः पापात्मा च वि-
शुद्धये ॥ ३० ॥ इति भ्राता भवत्तस्या प्रायेणात्मविशुद्धये ।
तदा निष्पादितं विप्रैस्तस्य पापस्य शोधनम् ॥ ३१ ॥ महा-
कृच्छ्रं त्रिरात्राणि परमानशनादयम् । एतत्ते कथितं देवि लिंग-
माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ३२ ॥ इदं गुह्यं महापुण्यं ये शृण्वंति पठन्ति

कर्म को प्रातःकाल सब लोगों ने देखा और लिंगभेद के भय से ब्राह्मणी चकित हुई ॥ २५ ॥ सब ब्राह्मण लोगों ने हाहाकार किया उसके भाई को निश्चय होने पर लोग कहने लगे इसका भाई बड़ा दुष्ट है ॥ २६ ॥ बहिन की निंदा करने-वाले ब्राह्मणों का द्वेष करनेवाले मूढ़ हैं इस कारण घोर नरक में पड़ेगा ॥ २७ ॥ लिंगभेद होने से सब बहिन २ कर पुकारने लगे ब्राह्मणों ने ब्राह्मणी को कहा लिंग को छिपादे ॥ २८ ॥ और कहा कि गौ के दूध को पी जिससे लिंग छिप-जाय तब वह पुण्यात्मा ब्राह्मणी ने दूध पिया ॥ २९ ॥ तब ब्राह्मणी ने प्रसन्न हो ब्राह्मणों को संतोषकर आप परमपद को प्राप्त हुई वह ब्राह्मण उसका भाई कहने लगा मैं पापी दुराचारी हूं ॥ ३० ॥ इस प्रकार उसका भाई जब भय-युक्त हुआ तब ब्राह्मणों ने उसके पाप दूर करने का उपाय किया ॥ ३१ ॥ तीन रात्री अनशन व्रत करवा और महाकृच्छ्र व्रत करवाया हे देवि ! यह लिंग-माहात्म्य मैंने तुमको कह दिया ॥ ३२ ॥ इस रहस्य माहात्म्य को जो सुनते

च । सर्वपापविनिर्मुक्ताः शिवलोकं व्रजंति ते ॥ ३३ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम एकादशः पटलः ॥ ११ ॥

श्रीकार्त्तिकेय उवाच । मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् । प्रासादयज्जगन्नाथं सर्वपूर्णं महेश्वरम् ॥ १ ॥ अप्राक्षमहमीशानं साधकानां हिताय च । महापथेन पश्यंति कया शक्त्या च मानवाः ॥ २ ॥ तदर्थं च फलं ब्रूहि सत्यं देव सदाशिव । गच्छंति साधकाः सर्वे स्वयं देहेन शंकर ॥ ३ ॥ ईश्वर उवाच । मनसा कर्मणा वाचा सप्तजन्मानि किल्बिषम् । विनश्यति कृतं तेषां ये शृण्वंति महापथम् ॥ ४ ॥ महापथपरोधर्मस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः । रुच्यते यदि लोकानां गतीनां परमागतिः ॥ ५ ॥ मया स्नेहेन ते नूनं कथ्यते यदि कौतुकम् । पथां मध्ये महापंथाः पदानां पदमुत्तमम् ॥ ६ ॥ पथां चैव हि सर्वेषां महाज्ञानं

हैं और पढ़ते हैं वह सब पापों से छूटकर शिवलोक को जाते हैं ॥ ३३ ॥
इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां एकादशः पटलः ॥ ११ ॥

श्रीकार्त्तिकेय मेरुपृष्ठ में आनंद से बैठे देवों के देव जगत् के गुरु परिपूर्ण महेश्वर को प्रसन्न कर बोले ॥ १ ॥ हे प्रभो ! आपको मैं पूछता हूं साधकों के हित के लिए कि लोग किस शक्ति को पाकर महापथ को देखते हैं ॥ २ ॥ हे शिव ! हे शंकर ! उस फल को कहिए जिससे साधक लोग स्वयं देह से उस पथ को प्राप्त हों ॥ ३ ॥ भगवान् शंकर कहते हैं । जो महापथ के महात्म्य को मन वचन कर सुनते हैं उनके सात जन्म के पाप नष्ट होते हैं ॥ ४ ॥ महापथ तीनों लोकों में विख्यात है जिसको परमगति की रुचि हो वह अवश्य सुने ॥ ५ ॥ बड़े स्नेह से मैं कहता हूं सब पंथों में उत्तम और सब स्थानों में श्रेष्ठ है ॥ ६ ॥

समुत्तमम् । उद्धर्तुं सर्वजंतूनां केदारं तीर्थमुत्तमम् ॥ ७ ॥ दुर्लभं देवतानां च दुर्लभ्यमितरैर्जनैः । दुर्लभं गणगंधर्वैर्यच्च शास्त्रं वदाम्यहम् ॥ ८ ॥ रम्यं च दिव्यशास्त्रेषु भक्तिमुक्तिप्रदायकम् । श्रुत्वा विघ्ना विनश्यंति पापानि सकलानि च ॥ ९ ॥ श्रुतश्च पठितश्चैव कल्पो यच्छेन्महापथम् । पदे पदे महापुण्यं गंगास्नानं दिने दिने ॥ १० ॥ अधर्मेण समायुक्ता न पश्यंति महापथम् । पश्यंति योनिमार्गं तु जनाः पापेन मोहिताः ॥ ११ ॥ मानुषाश्च महासेन पापं कृत्वा विशेषतः । केदारदृष्टिमात्रेण पापराशिर्विनश्यति ॥ १२ ॥ यत्र तिष्ठति कल्पश्च तत्र तिष्ठंति देवताः । अष्टषष्ट्यादि तीर्थानि ख्यातानि भुवनत्रये ॥ १३ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानाः सुरेन्द्रस्त्रिदशाधिपः । देवतासहितस्तत्र इन्द्रस्तिष्ठति नित्यशः ॥ १४ ॥ स्वर्गे मर्त्ये च पाताले ग्रहनक्षत्र-

सब पंथों में बड़ा पंथ और ज्ञानों में उत्तम ज्ञान ब्रह्मज्ञान श्रेष्ठ जैसा है तैसा सब तीर्थों में केदार श्रेष्ठ है ॥ ७ ॥ यह तीर्थ देवताओं को भी दुर्लभ है और अन्य लोगों की क्या कथा है, गण गंधर्वों को भी प्राप्त होना बड़ा कठिन है इसके माहात्म्य को मैं कहता हूं ॥ ८ ॥ सब शास्त्रों में रमणीय और भुक्ति मुक्ति को देनेवाला है इसको सुनके सब विघ्न और सब पाप नाश होजाते हैं ॥ ९ ॥ इस महापथ कल्प को सुन और पढ़ पद पद में बड़ा पुण्य और दिन दिन गंगास्नान का फल मिलता है ॥ १० ॥ अधर्म से युक्त मनुष्य महापथ को नहीं देख सकते हैं पापसे मोहित हो संसार को प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥ हे कार्त्तिकेय ! मनुष्य बड़ा पाप करके भी केदार के दर्शन करे तो उनका पापसमूह नष्ट होता है ॥ १२ ॥ जहां कल्प रहता है तहां देवता रहते हैं अडसठ तीर्थ तीनों लोकों में ख्यात हैं ॥ १३ ॥ ब्रह्मा विष्णु शिव और देवतों का राजा इन्द्र देवतों सहित वहां वास करते हैं ॥ १४ ॥ स्वर्ग मृत्यु पाताल में ग्रह नक्षत्र तारा सब

तारकाः । यत्र तिष्ठति कल्पस्तु सर्वे तिष्ठंति तत्र वै ॥ १५ ॥
पवित्रं वै सदाकल्पं ये शृण्वंति पठंति च । राजद्वारे यमद्वारे
भयं तत्र न विद्यते ॥ १६ ॥ पवित्रं वै महापुण्यं यत्र कल्पो
महापथः । स देशो रुद्रतुल्यो वै विशेषो यस्य मंदिरे ॥ १७ ॥
गृहे ये तु सदा कल्पं शृण्वंति च पठंति च । घोरसंकटआरण्ये
न भयं विद्यते क्वचित् ॥ १८ ॥ वाराणस्यां कुरुक्षेत्रे गयायां
च प्रयागके । यत्फलं प्राप्यते येन तत्फलं प्रतिपूजनात् ॥ १९ ॥
वसंति तानि तीर्थानि गृहे यस्य महापथः । महापथं महाकल्पं
सर्वकालं पठंति ये ॥ २० ॥ फलं केदारयात्रायास्ते लभंते
गृहे स्थिताः । पूर्वजैः सहिताः सर्वे ह्यंते यांति शिवालयम् ॥ २१ ॥
न तेषां पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि । शंकरस्य प्रसादेन
विष्णोश्चैव विशेषतः ॥ २२ ॥ गच्छंति शिवसान्निध्यं भुंजते

जहां कल्प रहता है वहीं सब रहते हैं ॥ १५ ॥ जो मनुष्य पवित्र कल्प को सुनते हैं और पाठ करते हैं उनको राजद्वार में और यम के द्वार में भय नहीं होता ॥ १६ ॥ जिसके घर में महापथ कल्प रहता है वह घर पवित्र होता है और जिस देश में महापथ कल्प रहता है रुद्र तुल्य वह देश भी पवित्र होता है ॥ १७ ॥ घर में जो इस महापथ कल्प का पाठ करते हैं और सुनते हैं उन को घोर संकट आपत्तिं बड़े जंगल में या कहीं भी भय नहीं होता है ॥ १८ ॥ काशी कुरुक्षेत्र गया प्रयाग में जो फल मिलता है वह फल केदार के पूजन से मिलता है ॥ १९ ॥ जिसके घर में महापथ कल्प रहता है और जो महापथ कल्प को सुनते पाठ करते हैं ॥ २० ॥ वह घरही में केदारयात्रा के फल को पाते हैं और अपने पितरों सहित अंत में शिवलोक को जाते हैं ॥ २१ ॥ उन को पुनरावृत्ति अर्थात् जन्म करोड़ कल्पों से भी श्रीशिवजी के और विष्णु भगवान के प्रसाद से नहीं होता है ॥ २२ ॥ श्रीशिवजी के सान्निध्य को

विपुलां श्रियम् । तेषां तुष्टो महादेवो गौर्य्या सार्द्धं त्रिलोचनः ॥ २३ ॥ ते लभंते महाकल्पं देवदानवदुर्लभम् । विना रुद्रप्रसादेन न लभंते महापथम् ॥ २४ ॥ एतानि च महासेन सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । यस्मिन्नेत्र नराः पूर्वमर्चयित्वा महेश्वरम् ॥ २५ ॥ राज्यं स्वर्गं च मोक्षं च सं लभंते युगे युगे । मह्यं चैव प्रतिष्ठंते यानि वृक्षतृणानि च ॥ २६ ॥ समुद्राशीतिलक्षाणामभ्रच्छाया गृहे तथा । तेषां संख्यां च जानामि हेम पुण्यं वदाम्यहम् ॥ २७ ॥ हेममंदिरसंकाशाः प्रासादाः शिवशासने । तेषां संख्यां च जानामि० ॥ २८ ॥ आकाशात्पतितं तोयं पृथिव्यां परितिष्ठति । तस्य संख्यां० ॥ २९ ॥ समुद्राशीतिलक्षाणि तारकाणि स्थितानि च । तेषां संख्यां० ॥ ३० ॥ सागरे च महासेन ह्यनला विपुला मताः । तेषां संख्यां० ॥ ३१ ॥ नरा नार्य्यश्च

पाकर बड़ी संपत्ति को भोगते हैं और उनपर पार्वती सहित शिवजी प्रसन्न होते हैं ॥ २३ ॥ देव दानव को दुर्लभ महाकल्प को वे पाते हैं श्रीशिवजी के कृपा विना महापथ नहीं मिलता है ॥ २४ ॥ यह मैं तुम को सच सच बोलता हूं हे स्कन्द ! पहले जो केदार का पूजन करते हैं ॥ २५ ॥ राज्य को मोक्ष को और स्वर्ग को वे लोग युग युग में पाते हैं और अंत में मुझको प्राप्त होते हैं केदार के वृक्ष तृण भी मुझ को प्राप्त होते हैं ॥ २६ ॥ और चौराशी लक्ष मेघों की छाया घर में जितनी होती है उतनी गिनती को जानकर केदार के पुण्य को कहता हूं ॥ २७ ॥ मेरु पर्वत की गिनती जैसी नहीं है वैसीही हिमालय पर्वत की पुण्यसंख्या नहीं है ॥ २८ ॥ आकाश से गिरे जितने जलबिंदु हैं पृथ्वी पर रहते हैं उसकी गिनती की जाय पर केदार की पुण्यसंख्या नहीं है ॥ २९ ॥ चौरासी लक्ष जितने तारागण हैं उनकी संख्या नहीं की जाती है यद्यपि हो जाय परंतु केदार की पुण्यसंख्या नहीं होती ॥ ३० ॥ हे महासेन ! समुद्र में अनंत वाडव अग्नि हैं उनकी संख्या हो जाय पर केदार की पुण्यसंख्या नहीं ॥ ३१ ॥ पृथिवी

यत्रोर्व्यां तिष्ठंति च गृहे गृहे । तेषां० ॥ ३२ ॥ देवदानव-
दैत्याश्च यक्षराक्षसकिन्नराः । तेषां संख्यां च जानामि हेमपुण्यं
वदाम्यहम् ॥ ३३ ॥ सर्वभूताश्च तिष्ठंति स्वास्थिता भुवनत्रये ।
तेषां संख्यां च जानामि हेमपुण्यं वदाम्यहम् ॥ ३४ ॥
महापथे महापुण्यो महारुद्रभयंकरम् । स्वामिन्पथेन कल्पेन
दर्शनेन महाशुभम् ॥ ३५ ॥ तेन मार्गेण गंतव्यमभेद्यो देव-
दुर्लभः । भयशंका न कर्तव्या गंतव्यश्च हिमालयः ॥ ३६ ॥
महापथे महासेन विघ्नो नास्ति कदाचन । तस्य कल्पप्रसादेन
सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ३७ ॥ स्वर्गः सोपानमार्गेण मया तात
विनिर्मितः । मानुषा नैव पश्यंति संसारे किमुपार्जितैः ॥३८॥
ब्रह्मघाती तथा गोघ्नो मातृघ्नः पितृघातकः । बालवृद्धायुवानो
वा हीनसत्वा तथाऽलसाः ॥ ३९ ॥ अगम्या गमनेसक्ताः

में घर २ स्त्री पुरुषों की गिनती हो जाय पर केदार के पुण्य की गिनती नहीं होसक्ती ॥ ३२ ॥ देवता दैत्य दानव यक्ष राक्षस किन्नरों की गिनती की जाय पर केदार की पुण्य संख्या नहीं हो सकती ॥ ३३ ॥ संपूर्ण चराचर प्राणी जितने तीनों लोकों में हैं उनकी संख्या को जानता हूं पर केदार की पुण्यसंख्या को नहीं जानता हूं ॥ ३४ ॥ महापथ बड़ा पुण्य है महारुद्र बड़ा भयंकर है महापथ कल्प दर्शन से बड़ा कल्याण है ॥ ३५ ॥ महापथ को जो देवतों को दुर्लभ है और अभेद्य है तिस मार्ग से जाना चाहिए हिमालय को जाने में भय शंका नहीं करना ॥ ३६ ॥ हे कार्त्तिकेय! महापंथ जाने में किसी प्रकार विघ्न नहीं होता है कल्प का ऐसा प्रसाद है सच सच बोलताहूं ॥ ३७ ॥ हे पुत्र ! मैंने सीढ़ी के राह से स्वर्ग निर्माण किया है जो मनुष्य उस को नहीं देखते हैं उनो ने संसार में आके क्या कमाया ॥ ३८ ॥ ब्रह्महत्या गोहत्या जिसने किया हो माता पिता जिसने मारे हों और बालक युवा वृद्ध मिथ्यावादी आलसी ॥ ३९ ॥ अगम्यागमन में आसक्त और वेद के शास्त्र के अर्थ से

वेदशास्त्रार्थवर्जिताः । अधर्मेण समायुक्ता भुवि तिष्ठंति मानवाः ॥४०॥ जन्मांतरसहस्त्रेषु क्रियते पापकर्म यैः । केदारोदकपानेन भस्मी भवति तत्क्षणात् ॥ ४१ ॥ संसारे मानवा अंधाः पापराशिसमन्विताः । कल्पश्रवणमात्रेण ते यांति शिवशासने ॥ ४२ ॥ करे कल्पो भवेद्यस्य सर्वास्तस्यार्थसिद्धयः यत्कृतश्च मया कल्पः साधकानां हिताय च ॥४३॥ प्रत्यक्षे च कृते दीपे अंधाः कूपे पतंति च । संसारे ये नराः सर्वे मोहिताः कर्मबंधनैः ॥४४॥ केदारं ये न जानंति वृथा तेषां जनुर्ध्रुवम् । संसारसागरे घोरे दुस्तरे नरकार्णवे ॥ ४५ ॥ विना कल्पं महासत्वैः स्पंदितुं न च शक्यते । रचितः स्वर्गसोपानो नौर्वा संसारसागरे ॥ ४६ ॥ उत्तारणाय लोकानां मृत्युलोकेऽवतारिता । जलं च बुद्बुदाकारं यथा संसारिणस्तथा ॥ ४७ ॥ अभ्रच्छाया यथा सेन तथा संसारिणो जनाः । जलमध्ये यथा

हीन और अधर्म से युक्त मनुष्य पृथ्वी में जितने रहते हैं ॥ ४० ॥ हजार जन्मों में जिनोंने पाप किए केदार के उदक पान करने से इनका पाप तत्काल भस्म होजाता है ॥ ४१ ॥ संसार में पापी और अंधे कैसे भी मनुष्य हैं वे कल्प के श्रवण मात्र से शिवलोक को जाते हैं ॥ ४२ ॥ जिसके हाथ में कल्प रहे उसकी सब अर्थसिद्धि हाथ में है साधकों के कल्याण के लिए मैंने कल्प बनाया है ॥ ४३ ॥ जो लोग संसार में पापकर्म के बंधन से मोहित हैं उनके हाथ में दीप भी हो तो अंधे हो कुएं में पड़ते हैं ॥ ४४ ॥ जो केदार को नहीं जानते हैं उनका जन्म व्यर्थ है घोर संसार दुस्तर सागर में ॥ ४५ ॥ कल्प के बिना बड़े बलिष्ठ से भी चलने को अशक्य हैं इस संसाररूपी समुद्र में कल्प स्वर्ग के लिए सीढी है अथवा नौका है ॥ ४६ ॥ लोगों के उतारने के लिए मृत्युलोक में यह नौका ला रखी है जल जैसा बुद्बुदाकार क्षण तक रहता है वैसेही पृथ्वी में प्राणी हैं ॥ ४७ ॥ हे महासेन ! जैसी बदल की छाया क्षण

मत्स्याः धीभ्रजालैश्च रोधिताः ॥ ४८ ॥ संबद्धा मोहपाशेन नैव गच्छंति मत्पुरे । संसारमोहपाशेन बद्धा यांति च नारकम् ॥४९॥ महापथं महाशास्त्रं देवदानवदुर्ल्लभम् । स्वर्गशास्त्रं महारम्यं सर्वपापविनाशनम् ॥ ५० ॥ प्रासादो मंदिरं छत्रं शिवस्य परिकीर्तनम् । तस्य रुद्रपदे वासो यावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ५१ ॥ केदारं च महानाम ये वदंति गृहे स्थिताः । संवत्सरकृतं पापं मुच्यते नात्र संशयः ॥ ५२ ॥ ध्यायंतो मनसा लोका ये गच्छंति हिमालये । सप्तजन्मकृतं पापं तेषां नश्यंति तत्क्षणात् ॥ ५३ ॥ केदारगमनं ये च वाचयंति वदंति च । रविदिव्यप्रकाशेन गच्छंति शिवशासने ॥ ५४ ॥ कर्मणा च महासेन गताः केदारदर्शनम् । केदारदर्शनं कृत्वा

भर के अर्थ है जैसे जल में मत्स्य धीवर के जाल में फंसे हैं वैसे संसारी जीव हैं ॥ ४८ ॥ मोहरूपी पाश से बंधे मनुष्य मेरे पुर में नहीं आसकते हैं संसार के मोहरूपी पाश से बंधे हुए मनुष्य नरक को जाते हैं ॥ ४९ ॥ यह महापथ शास्त्र देव दानवों को भी दुर्ल्लभ है यह शास्त्र स्वर्ग को पहुंचाने वाला बड़ा सुंदर और सब पाप को नाश करनेवाला है ॥ ५० ॥ जो कोई शिव भगवान् का मंदिर प्रासाद बनावे और छत्र धारण करे और भगवान् का कीर्त्तन करे उनका रुद्रलोक में निवास जब तक चौदह इन्द्र रहैं तब तक रहै ॥ ५१ ॥ केदार ऐसा जो बड़ा नाम है इसको जो घर में बैठे भी उच्चारण करे उसका एक वर्ष का किया हुआ पाप नष्ट हो जावे ॥ ५२ ॥ मन से भी हिमालय का ध्यान करते हुए जो हिमालय को जाते हैं उनका सात जन्म का पाप तत्काल नष्ट होजाता है ॥ ५३ ॥ जो लोग केदार जाने को आप बोलते हैं या दूसरे से कहलाते हैं वे लोग सूर्य के समान प्रकाशमान शिवलोक को जाते हैं ॥ ५४ ॥ हे स्कंद ! जो लोग अच्छे कर्म कर केदारदर्शन को जाते हैं और

रेतो नीरं पिबंति ये ॥ ५५ ॥ कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च । सहितः पितृभिस्ते पि गच्छंति शिवशासने ॥५६॥ यत्र स्थाने सुराः सर्वे गंधर्वाश्च गणैः सह । तत्र स्थाने तदा तेऽपि भुंजते विपुलां श्रियं ॥ ५७ ॥ वसंति मानुषास्तत्र गर्भवासं पुनः पुनः । केदारं नैव पश्यंति संसारे निष्फला जनाः ॥५८॥ अज्ञानान्नैव जानंति न गच्छंति शिवालयं । ततः कृत्यं महासेन कथयामि श्रृणुष्व तत् ॥ ५९ ॥ भावभक्तिसमायुक्तं मंत्रशास्त्रे यथोदितम् । स्थापितं यैर्महालिंगं श्रृणु तेषां च यत्फलम् ॥ ६० ॥ यावद्भूरचलो मेरुर्दिव्यस्वर्गे सुरोत्तमाः । भावभक्तिसमायुक्तं मंत्रशास्त्रं यथात्मनः ॥ ६१ ॥ पितृभिः सहितास्तेऽपि शिवलोके वसंति च । सर्वधर्मेषु ये व्यग्रा गुर्वतिथ्योः प्रपूजने ॥६२॥ यावत्स्वर्गे महादेवो यावन्नीरं च सागरे । सहिताः पितृभिस्तेऽपि शिवलोके वसंति च

दर्शन कर रेतोदक को पीते हैं ॥ ५५ ॥ वे करोड़ों कल्प सेकड़ों कल्प तक अपने पितरों सहित शिवलोक में रहते हैं ॥ ५६ ॥ जिस स्थान में संपूर्ण देवता गंधर्वगण सहित रहते हैं वहां वे लोग बड़ी संपत्ति को भोगते हैं ॥ ५७ ॥ जो लोग केदार को नहीं देखते हैं वे संसार में वारंवार गर्भवास करते हैं उनका जन्म निष्फल है ॥ ५८ ॥ अज्ञान से जो जानते नहीं शिवालय को नहीं जाते हैं हे कार्त्तिकेय ! उनके कृत्य को मैं कहता हूं सुनो ॥ ५९ ॥ और मंत्रशास्त्र में जैसा कहा है उस प्रकार भक्तिभावयुक्त जिनोंने महालिंग को स्थापन किया उनके फल को सुनो ॥ ६० ॥ जब तक पृथिवी है और अचल मेरु है और स्वर्ग में देवता हैं भक्तिभावयुक्त मंत्रशास्त्र हैं ॥ ६१ ॥ वे लोग पितरों करके सहित शिवलोक में वास करते हैं और सर्व धर्म में तत्पर गुरु अतिथि पूजन में तत्पर हैं वे भी शिवलोक में वसते हैं ॥६२॥ जब तक स्वर्ग में महादेव हैं और जब तक समुद्र में जल है तब तक पितरों सहित शिवलोक में वास करते हैं ॥ ६३ ॥

॥६३॥ सर्वदेवसमाः सिद्धाः भुंजंते विपुलां श्रियम् । भुक्त्वा च विपुलान् भोगान् लभंते चाक्षयां गतिम् ॥ ६४ ॥ शंकरस्य प्रसादेन लभंते रुद्रतां नराः । इच्छाभोगो भवेत्तेषां भुंजंते विपुलां श्रियम् ॥ ६५ ॥ अमृतं च परित्यज्य विषं लोकाः पिबंति च । कौतूहलं मया दृष्टं क्षीरं त्यक्त्वा विषं पिबेत् ॥ ६६ ॥ सागरे च यथा नौका संसारे कल्प एष च । विनिर्मितो महासेन मनुष्योत्तरणाय च ॥ ६७ ॥ न पश्यंति मूर्तिं दिव्यां मायामोहसमाकुलाः । बहुकामप्रपूर्णाश्च क्रोधपापैः प्रपूरिताः ॥६८॥ एतैस्तु दोषैः सहिता जात्यंधा मानुषा भुवि । स्थाने तत्र न पश्यंति यत्र दिव्यो महापथः ॥६९॥ योनिमार्गे सहस्रं च ह्यधमोत्तममध्यमाः । गच्छंति मानुषाः सर्वे नैव गच्छंति मत्पुरे ॥ ७० ॥ गृहद्वारं परित्यज्य ये गच्छंति महापथम् । ऊर्ध्वस्थाने तु जायंते यत्र देवो महेश्वरः ॥७१॥ एकचित्ताश्च

संपूर्ण देवतों करिके सहित बड़े भोगों को भोगते हैं और अक्षय गति को पाते हैं ॥ ६४ ॥ श्रीशंकर के प्रसाद से रुद्रत्व प्राप्त होता है और जैसी इच्छा हो वैसे भोगों को भोगते हैं ॥ ६५ ॥ लोग अमृत को छोड़कर विष को पीते हैं यह बड़ा आश्चर्य देखा है जो दूध को छोड़ विष पीवे ॥ ६६ ॥ हे महासेन ! मनुष्यों को तारने के लिए समुद्र में जैसी नौका है वैसा संसार में यह कल्प नौका बनाया है ॥ ६७ ॥ माया मोह से समाकुल हुए और नाना इच्छा से युक्त क्रोध पापों से भरे मनुष्य दिव्य मार्ग को नहीं देखते हैं ॥ ६८ ॥ इन दोषों करिके युक्त हुए जाति के अभिमान मे पृथिवी में जहां दिव्य महापंथ है उसको नहीं देखते ॥ ६९ ॥ हजारों अधम मध्यम उत्तम योनियों में पड़ते हैं मेरे पुर को नहीं प्राप्त होते हैं ॥ ७० ॥ जौन लोग अपने घर द्वार को छोड़कर महापथ को जाते हैं वे ऊर्ध्व स्थान जहां महादेव हैं वहां जाते हैं ॥ ७१ ॥ जो लोग एकचित्त हुए रहते हैं वे शिवलोक को जाते हैं यह कल्पशास्त्र

ये केचित् शिवलोकं व्रजंति च । एवं रम्यं महाशास्त्रं त्रिषु लोकेषु दुर्ल्लभम् ॥ ७२ ॥ स्वर्गशास्त्रं महारम्यं दृष्ट्वा स्कंद-स्तमब्रवीत् । स्कंद उवाच । पुनः पृच्छाम्यहं देव वचो मे शृणु शंकर ॥ ७३ ॥ पुरामार्गं च पश्यंति साधकानां हिताय च । नराणामूर्ध्वनाथाय केदारं तीर्थमुत्तमम् ॥ ७४ ॥ कैलासपीठ मध्ये तु योगगम्यमहेश्वरः । ब्रह्मविष्णुसुराःसर्वे सिद्धविद्याधराश्च ये ॥ ७५ ॥ एवं मम हितं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गतः । महापथः कथं देव क्व स्थाने च महापथः ॥ ७६ ॥ ये न गच्छंति मार्गेण संसारभयपीडिताः । ब्रूहि वाक्यं महादेव त्रिदशेश्वरपूजित ॥७७॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेय संवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम द्वादशः पटलः ॥ १२॥

ईश्वर उवाच । शृणु स्कंद महाप्राज्ञ महायोगिन्महातपः । गच्छंति शिवसांनिध्यं केदारं तीर्थमुत्तमम् ॥ १ ॥ निर्भयेन

बड़ा रम्य तीनों लोक में दुर्ल्लभ है ॥ ७२ ॥ यह बड़ा रम्य स्वर्गशास्त्र देख स्कंद ने पूछा तब मैंने कहा । स्कंद बोला हे शंकर हे देव मैं आपको फिर पूछता हूं मेरे वचन को सुनो ॥ ७३ ॥ साधकों के कल्याण के अर्थ यह प्राचीन मार्ग मनुष्यों के उद्धार को केदारतीर्थ बड़ा उत्तम है ॥ ७४ ॥ कैलास पीठ के बीच में जहां योग से मिलने योग्य शिवजी हैं तहां सब ब्रह्मा विष्णु सिद्ध विद्याधर देवता हैं ॥ ७५ ॥ इस प्रकार देख स्कंद विस्मय को प्राप्त हुआ और बोला कि वह महापंथ कहां है ॥ ७६ ॥ संसारभय से पीड़ित लोग किस मार्ग करिके वहां जाते हैं हे त्रिदशेश्वरपूजित हे महादेव कहो ॥ ७७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां द्वादशः पटलः ॥ १२ ॥

श्रीभगवान् शिवजी बोले, हे विद्वन्, बड़े योग को जानने वाले हे स्कंद ! सुनो केदारतीर्थ को जाके शिव का सांनिध्य प्राप्त होता है ॥ १ ॥ निर्भय

महामार्गो गंतव्यश्च हिमालयः । अघोरेण च मंत्रेण ह्यष्टषष्ठ-
विनिर्मितः ॥ २ ॥ अघोरश्च महामंत्रो महासिद्धिकरो नृणाम् ।
महाविघ्नहरो नित्यं महामोक्षप्रदायकः ॥ ३ ॥ आश्विने चैव
मासे वै गंतव्यश्च महापथः । अघोरेण च मंत्रेण ये स्मरंति च
नित्यशः ॥ ४ ॥ प्रथमं तत्र गंतव्यं ललिता यत्र तिष्ठति ।
स्नात्वा मंदाकिनी तीर्थे ह्युपवासं च कारयेत् ॥ ५ ॥
मंदाकिनीसंगमे च ह्येकरात्रप्रजागरात् । महारुद्रप्रसादेन प्राप्त-
व्यो मार्गउत्तमः ॥ ६ ॥ रुद्रेश्वरो महातीर्थे दृष्टो हरति
पातकम् । पूर्वजन्मकृतैनांसि नश्यंति शिवदर्शनात ॥ ७ ॥
केशत्यागश्च कर्त्तव्यस्तत्र स्थाने महाबुधैः । मालाया धारणं
कृत्वा स्नात्वा मंदाकिनी जले ॥ ८ ॥ तुष्टा वरप्रसादेन तेऽपि
यांति परां गतिम् । लोकैर्दृष्ट्वा च मार्गेण गंतव्या चोत्तराक
कुप् ॥ ९ ॥ विघ्नेश्वरप्रसादेन गुरुधर्मबलेन च । पश्चात्तत्रैव

होके हिमालय महापथ को जाना और अघोर मंत्र आठ और छः अक्षरों से निर्मित है ॥ २ ॥ अघोरमंत्र मनुष्यों को बड़ी सिद्धि देने वाला है और बड़े विघ्न को हरनेवाला और मोक्ष को देने वाला है ॥ ३ ॥ आश्विन मास में महापथ को जाना जौन अघोरमंत्र से नित्य स्मरण करते हैं ॥ ४ ॥ पहले जहां ललिता है वहां जावै तब मंदाकिनी नदी में स्नान कर उपवास करे ॥ ५ ॥ मंदाकिनी नदी के संगम में एक रात्रि जागरण करे तब रुद्र के प्रसाद से उत्तम मार्ग को प्राप्त हो ॥ ६ ॥ रुद्रेश्वर महातीर्थ में दर्शन करने से पाप दूर होता है शिवजी के दर्शन से पूर्व जन्म के किये सब पाप दूर हो जाते हैं ॥ ७ ॥ बुद्धिमानों ने उस जगह क्षौर करना चाहिए मंदाकिनी के जल में न्हाय कर माला को धारण कर ॥ ८ ॥ शिवजी के प्रसाद से परमगति प्राप्त होती है लोगों से मार्ग को जान उत्तर दिशा को जावै ॥ ९ ॥ गणेश के प्रसाद से और बड़े

गंतव्यं केदारं प्रथमाश्रमः ॥ १० ॥ संप्राप्य तत्र स्थाने च केदारं परमेश्वरम्। तृप्ताश्च पितरस्तत्र हंसतीर्थेषु साधकाः॥ ११॥ पूजयित्वा यथाशक्त्या केदारं पापनाशनम् । संप्राप्तं च महामार्गे केदारे पापनाशने ॥ १२ ॥ सप्तकोटिसहस्राणि रक्षंति च गणोत्तमाः। मनुष्याणां हितार्थाय स्वयं देवेन निर्मिताः॥१३॥ देवदानवदैत्याश्च यक्षराक्षसकिन्नराः । न लभंते जलं स्कंद ये चान्ये पापिनो जनाः ॥ १४ ॥ पितृदेवगणाः सर्वे स्नात्वा मंदाकिनी जले। भवेयुर्निर्मलाः स्कंद ये चान्ये पापकारिणः ॥१५॥ तुष्टा वरं प्रयच्छंति ततो यांति परां गतिम्। देवस्य दक्षिणे पार्श्वे रेतः कुंडं व्यवस्थितम् ॥ १६ ॥ इहजन्मकृतं पापं दृष्ट मात्रे निहंति तत् । स्पर्शनाच्छुक्रकुंडस्य सप्तजन्मकृतं व्रजेत् ॥ १७ ॥ यानि कानि च तीर्थानि विख्यातानि महीतले । रेतःकुंडस्य तान्येव कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ १८ ॥ कुंडस्य

धर्मबल से वहीं पुरुय केदार के आश्रम को जाना ॥ १० ॥ केदारस्थान को प्राप्त होके तहां हंसतीर्थ में स्नानादिक करके पितर तृप्त होते हैं॥ ११ ॥ पाप को नाश करने वाले केदार को यथा शक्ति पूजनकर महापंथका मार्ग मिलता है॥१२॥ तहां सात हजार करोड गण रखवाले हैं मनुष्यों के हित भगवान् ने खुद रचे हैं॥१३॥ हे स्कंद ! देव दानव दैत्य राक्षस किन्नर लोगों को भी वह जल कठिन से मिलता है पापी लोगों को तो क्या कहना है ॥ १४ ॥ पितर देवता सबही मंदाकिनी में स्नान कर निर्मल होते हैं और जो पाप करने वाले हैं वे भी निष्पाप हो जाते हैं ॥ १५ ॥ प्रसन्न हो रुद्र वर को देते हैं तिससे परम गति प्राप्त होती है शिव के दक्षिण ओर रेतस कुंड है ॥ १६ ॥ उस कुंड के दर्शन मात्र से इस जन्म का पाप नष्ट होता है उसके स्पर्श करने से सात जन्म का किया पाप नष्ट होता है ॥ १७ ॥ पृथिवी में जितने तीर्थ बड़े विख्यात हैं वे रे[illegible] कुंड के सोलवें हिस्से पर नहीं हैं ॥ १८ ॥ रेतस कुंड के दहिने भाग में उत्त

दक्षिणे भागे उत्तराभिमुखस्थितः। वामहस्तेन पूर्वस्यास्त्रीन्वारान् प्रपिबेज्जलम् ॥ १९ ॥ दक्षिणस्यां च वारांस्त्रीन् पिबेदंजलिनोदकम्। गोमुखे तत्र पीत्वा च त्रिनेत्रो जायते नरः ॥२०॥ ब्रह्मसूत्राभिमंत्रितं शतमष्टोत्तर स्मृतम्। जलं च कंठगं तेषां लिंगे भवति देहिनाम् ॥ २१ ॥ तृणाग्रे बिंदुमात्रेण ब्रह्मसूत्रेण वेष्टितम्। मृत्युलोके न तत्प्राप्तिस्त्रिनेत्रो जायते नरः ॥ २२ ॥ श्रीकार्त्तिकेय उवाच। रेतो विद्यां महादेव कथयस्व प्रसादतः। अक्षराणि च कानीह कतिमात्राः प्रकीर्त्तिताः ॥ २३ ॥ ईश्वर उवाच। अथ मंत्रोद्धारः। ॐकारद्वयसंयुक्तं क्षूंकारत्रयभूषितम्। पंचरेफसमायुक्तं दशबिंदुमहाद्भुतम् ॥ २४ ॥ ॐकारश्च स्वयं ब्रह्म क्षूंकारो विष्णुरुच्यते। रूंकारश्च स्वयं रुद्रो दशबिंदुसमाश्रितः ॥ २५ ॥ एषा विद्या महासेन मम देहेन निर्मिता। शृणु

मुख होके वाम हाथ से तीनबार जल को पीवै ॥ १९ ॥ और तीनबार दक्षिण में अंजली से जल को पीवै फिर गोमुख हो पीकर मनुष्य त्रिनेत्र होता है ॥ २० ॥ जनेउ को आभिमंत्रित कर कंठ प्रमाण जल में जाके अष्टोत्तरशत मंत्र को जपे तो मनुष्यों के कंठगत लिंग होता है ॥ २१ ॥ यज्ञोपवीत से वेष्टित तृण के अग्रभाग में बिंदुमात्र जल के पीने से मनुष्य मृत्यु लोक को नहीं प्राप्त होता है साक्षात् शिव हो जाता है ॥ २२ ॥ कार्त्तिकेय स्वामी बोले। हे महादेव! इस रेतादक विद्या को प्रसन्न पूर्वक कथन करो कितने अक्षर हैं कितनी मात्रा हैं ॥ २३ ॥ शिव भगवान मंत्रोद्धार कहते हैं कि दो ॐ कारों करिके युक्त और तीन क्षूंकारों करके विभूपित पांच रेफों से युक्त दश बिंदुओं सहित अर्थात् ॐ रूं क्षूं रूं क्षूं रूं क्षूं रूं रूं ॐ यह मंत्र है ॥२४॥ ॐकार स्वयं ब्रह्म है क्षूंकार विष्णु कहा जाता है रूंकार स्वयं रुद्र है दश बिंदुओं के सहित है ॥ २५ ॥ हे स्कंद! यह विद्या मेरे देह से

स्कंद महाप्राज्ञ सत्यं सत्यं वदाम्यहं ॥२६॥ यत्र यत्र पिबेत्तो-
यमनया शुक्रविद्यया । केदारदर्शयात्रायाः फलं प्राप्नोति
मानवः ॥ २७ ॥ अथ मंत्रः । ॐ रूं क्षूं रूं क्षूं रूं क्षूं रूं रूं
ॐ १० ॥ नवभांडे महासेन रेतो विद्याभिमंत्रितं । शालिधान्यं
गृहीत्वा च गंतव्यमुत्तरामुखैः ॥ २८ ॥ नवभांडे करे धृत्वो-
दकमध्यप्रक्षालितम् । उत्तराभिमुखैश्चैव रेतो विद्याभिमंत्रितम्
॥२९॥तत्र तिष्ठति सा देवी गौरि नाम महातपाः।तस्या अग्रे जलं
चैव रेतो विद्याभिमंत्रितम् ॥ ३० ॥ गृहीत्वा गम्यते तत्र
ह्यपामार्गस्य तंडुलान् । अपमार्गस्य चाभावे शालिकस्य च
तंडुलाः ॥ ३१ ॥ साधयित्वा चरुं तत्र ह्यघोरेणाभिमंत्रितम् ।
पंचब्रह्मसमायुक्तं चरुं यत्नेन साधयेत् ॥ ३२ ॥ यंरंलंवंहं ॥५॥
एतैः कृत्वा चरुं तत्र चतुर्भागं तु कारयेत । प्रथमो देवतानां
च द्वितीयो वह्नये तथा ॥ ३३ ॥ तृतीयश्चापि गौर्य्यै च
चतुर्थो ह्यात्मतर्पणः । प्राश्य सम्यक् चरुं तत्र पानीयं

निर्मित है सुनो सच सच कहता हूं ॥ २६ ॥ इस मंत्र से जहां जल पीवे केदार के दर्शन यात्रा का फल मनुष्य को मिलता है ॥ २७ ॥ नये पात्र में उस उदक को रखके इस मंत्र से मंत्रित चावल को लेके उत्तराभिमुख जाना ॥ २८ ॥ उस नये बर्तन को हाथ में ले तंडुल को उस जल से धोकर रेतोविद्या से मंत्रित उत्तर मुख होवै ॥ २९ ॥ तहां गौरी नाम देवी है उसके आगे रेत विद्या मंत्र से मंत्रित जल को गेरे ॥ ३० ॥ तहां अपामार्ग के चावलों को लेके चले अपामार्ग के चावल न मिले तो धान के चावल हों ॥ ३१ ॥ अघोर मंत्र से अभिमंत्रित चरु को साधकर पंच ब्रह्म सहित यत्न कर साधन करे ॥३२॥ इन से मंत्रित कर चार भाग करे प्रथम भाग देवताओं को दूसरा अग्नि को ॥३३॥ तीसरा भाग गौरी को चौथा भाग अपने को रखे उसको भोजन कर पानी

प्रविशेत्ततः ॥ ३४ ॥ पश्चाच्छिवाया गौर्याश्च स्तुतिं कुर्यात्प्रयत्नतः। अचिंत्यरूपचरिते परमादित्यरूपिणि ॥३५॥ क्षमस्व मेऽपराधं च जननि त्वं सदांबिके। त्वं माता सर्वलोकस्य क्षंतव्यं परमेश्वरि ॥ ३६ ॥ संसारभयभीतोऽहं मार्गं देहि महेश्वरि। तस्या देव्याः प्रभावेण लभ्यते मार्ग उत्तमः॥३७॥ नमस्कारं शिवे कुर्याद्गुरुदेवं प्रणम्य च । गौरीशानपथास्कंद गंतव्या चोत्तराककुब् ॥ ३८ ॥ गोदण्डमयमात्रश्च दृश्यते मार्ग उत्तमः। प्रमाणं तस्य मार्गस्य द्वात्रिंशदंगुलांतरम् ॥३९॥ दर्शितः शंभुना मार्गः सिद्धानां स्वर्गकांक्षिणाम्। एतस्य त्रिविधा वर्णाः श्वेतः कृष्णस्तु पीतकः ॥ ४० ॥ मध्ये चैव भवेत्पीतः इति शास्त्रस्य निश्चयः। धन्वंतरिशतार्धेन तत्र चिन्हं तु दृश्यते ॥४१॥ मृगेन्द्रसदृशाकाराः शिलास्तिष्ठंति संमुखाः। तस्य संदर्शनं कृत्वा भयभीताश्च साधकाः ॥४२॥ अघोरोऽयं

पीवे ॥ ३४ ॥ पीछे शिव पार्वती की स्तुति करे हे अचिंत्यरूपचरिते हे परमादित्यरूपिणि ॥ ३५ ॥ हे जननि हे मातः! मेरे अपराध को क्षमा कर तू संपूर्ण जगत की माता है हे परमेश्वरि! क्षमा कर ॥ ३६ ॥ हे परमेश्वरि! मैं संसारभय से भीत हूं मुझे मार्ग दे इतना कहे पार्वती के प्रसाद से उत्तम मार्ग मिलता है ॥ ३७ ॥ गुरु देवता शिव को प्रणाम कर गौरी कुण्ड से ईशान दिशा के राह उत्तर दिशा को जावे ॥ ३८ ॥ गोदण्डमय, क्षण में बड़ा अच्छा मार्ग दृष्ट आता है वह मार्ग बत्तीस अंगुल चौड़ा है ॥ ३९ ॥ स्वर्ग को चाहनेवाले सिद्धों को यह मार्ग शिवजी ने दिखाया है इसका सुफेद काला पीला तीन प्रकार रंग है ॥ ४० ॥ बीच में पीला रंग है इस प्रकार शास्त्र का निश्चय है धन्वंतरीशत से किया लक्षण दृष्ट आता है ॥ ४१ ॥ सन्मुख में सिंह के आकार की शिला तहां स्थित है उनको देख साधक भयभीत होते हैं ॥ ४२ ॥ अघोर मंत्र साधकों को सिद्धि देनेवाला है मंत्र का स्वरूप यह

महामंत्रो महासिद्धिकरो नृणाम् । अथ मंत्रः । हुं फट् स्वाहा ॥ ५ ॥ अघोरं जपमानस्तु सर्वविघ्नक्षयंकरम् ॥ ४३ ॥ तस्य प्रदक्षिणं कृत्वा गंतव्या चोत्तराककुब् । बुधैर्धर्मार्थतत्त्वज्ञैर्विलंबो नात्र युज्यताम् ॥ ४४ ॥ अर्द्धचंद्रनिभश्चैव शैलस्तिष्ठति चोर्ध्वगः । त एव शैलं पश्यंति आचार्या विस्मयं गताः ॥ ४५ ॥ भयशंका न कर्त्तव्या अघोरमक्षरं जपेत् । मंत्रः । हुं फट् स्वाहा । तस्य विघ्नं न कर्त्तव्यं शतं शैलसमीपगम् ॥ ४६ ॥ तस्य प्रदक्षिणं कृत्वा गंतव्यं चोत्तरादिशि । धन्वंतरि शतत्रीणि आत्मानं चैव गम्यते ॥ ४७ ॥ लिंगे हेममये तत्र स्थितं दृश्येत साधकैः । श्वेतरक्तंकृष्णपीतं तस्य वर्णं च दृश्यते ॥ ४८ ॥ नानारत्नसमाकीर्णं ज्वलंतं पद्मरागवत् । आत्महस्तेन लिंगे च स्पृष्ट्वात्मानि विलेपयेत् ॥ ४९ ॥ अघोरेणैव मंत्रेण आत्मरक्षां च कारयेत् । पूर्वं जपित्वा मंत्रं च पश्चाच्चैव सुसंगतः ॥ ५० ॥ तस्य लिंगप्रभावेण वज्रांगं च भविष्यति । आचार्याः

दिखाया है । हुं फट् स्वाहा ॥ ५ ॥ अघोर मंत्र जप करनेवाले के सब विघ्न नाश हो जाते हैं ॥ ४३ ॥ उसकी प्रदक्षिणा कर उत्तर दिशा को जावै तत्ववेत्ताओं ने विलंब न करना चाहिए ॥ ४४ ॥ तहां अर्द्धचन्द्र के आकार का ऊंचा एक पर्वत दिखता है उसको देख आश्चर्य प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥ तहां भय शंका न करे अघोर मंत्र को जप लेना तिससे कोई विघ्न नहीं आपड़ते हैं ॥ ४६ ॥ उसकी प्रदक्षिणा कर उत्तर को जाना तहां धन्वंतरी की तीन सौ आत्मा जाती है ॥ ४७ ॥ साधक लोगों से तहां सुवर्णमय लिंग दृष्ट आता उसका सुफेद लाल काला तीन प्रकार रंग देख पड़ते हैं ॥ ४८ ॥ वह लिंग नाना रत्नों से युक्त पद्म राग रत्न जैसा और दैदीप्यमान है अपने हाथ से उसको स्पर्श कर अपने अंग में पोंछे ॥ ४९ ॥ अघोर मंत्र से अपनी रक्षा करे पहले मंत्र को जप लेवै तब पास जावे ॥ ५० ॥ उस लिंग के प्रभाव से

साधकाः सर्वे प्रणम्य च पुनः पुनः ॥ ५१ ॥ इति श्रीकेदार-कल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम त्रयोदशःपटलः ॥ १३ ॥

ईश्वर उवाच । शृणु स्कंद महाप्राज्ञ वज्रं भवति देहिनाम् । अघोरेण च मंत्रेण महाविघ्नं प्रणश्यति ॥ १ ॥ खड्गतुल्यो महामंत्रो देवदानवदुर्लभः । तस्य लिंगप्रभावेण हिमैर्नैव स बाध्यते ॥ २ ॥ धन्वंतरिशतत्रीणि ह्येकचित्तो भवेत्पुनः । तत्र चैव पुरी रम्या दृश्यते च मनोरमा ॥ ३ ॥ तत्र हेमप्रभा दीप्ता दृश्यते चोत्तराहरित् । दृष्ट्वा शक्रपुरीं तत्र ब्रह्मविष्णुपुरीं ततः ॥ ४ ॥ सूर्यकोटिसमं तेजो ह्युदीच्यां दिशि दृश्यते । इंद्रनील-महानीलपद्मरागोपशोभितम् ॥ ५ ॥ तस्माच्छंकरपूजायां दृश्यते शिखरे ध्वजः । मनोहरश्च दिव्यश्च मंगलादपि मंगलम् ॥ ६ ॥ दृश्यते च महासेन प्रतोल्यां धवलं गृहम् । नित्योत्सव-

वज्र तुल्य शरीर होगा, आचार्य लोग साधक सब उसको वारंवार प्रणाम करें॥५१॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां त्रयोदशः पटलः ॥ १३ ॥

श्रीशिवजी बोले हे स्कंद हे महाप्राज्ञ! इस से प्राणियों के शरीर वज्र तुल्य होते हैं और अघोर मंत्र से सब विघ्न दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ देव दानवों करके दुर्लभ खड्ग के समान महामंत्र है और तिस लिंग के प्रभाव से पर्वत में हिम से बाधित नहीं होता है ॥ २ ॥ तीन सौ धन्वंतरी को एकचित्त होके तहां जो सुंदर पुरी है वह दीखती है ॥ ३ ॥ तहां हेमप्रभा से दीप्त प्रकाशित उत्तर दिशा दीखती है तहां इंद्रपुरी को देख ब्रह्मपुरी विष्णुपुरी भी दृष्ट आती है ॥ ४ ॥ तहां उत्तर दिशा में करोड़ सूर्य के समान तेज इंद्रनीलमणि महानीलमणि पद्मरागमणियों करके शोभायमान है ॥ ५ ॥ तहां से शंकर भगवान् के मंदिर में अति मनोहर मंगल से मंगल दिव्य ध्वजा दीखती है॥६॥

समाकीर्णा दृश्यते चोत्तराहरित् ॥ ७ ॥ एकविंशतिसंख्याताः पुर्य्यः कांचनसंनिभाः । पश्चाच्च साधकाः सर्वे गताश्च चोत्तरां दिशम् ॥ ८ ॥ नदी च दृश्यते तत्र साक्षाद्देवी सरस्वती । हंसकारंडवाकीर्णा चक्रवाकोपशोभिता ॥ ९ ॥ नानाद्रुमलताकीर्णा नानापक्षिसमाकुला । हरंति सर्वपापानि सप्तजन्मार्जितानि वै ॥ १० ॥ कुमुदोत्पलपद्मैश्च शोभितं सर उत्तमम् । तत्रैव प्रपिबेत्तोयं पूजयित्वा च शंकरम् ॥ ११ ॥ पितृवंश्या गताः स्वर्ग मातृवंश्यसमन्विताः । शिवस्य च प्रसादेन पितॄणां चाक्षया गतिः ॥ १२ ॥ उत्तराभिमुखो भूत्वा नद्यास्तीरं व्रजेत्ततः । योजनार्धं ततो गत्वा ह्याश्रमं वीक्ष्यते महान् ॥ १३ ॥ शक्रेण स्थापितं लिंगं हेमपीठकभूषितम् । योजनार्धं च विस्तीर्णा पुरी शक्रेण निर्मिता ॥ १४ ॥ पताकाध्वजसंयुक्ता हेमप्राकार-

और हे स्कंद ! रथ्या में सुफेद मंदिर दृष्ट आता है उत्तरादिशा सदा नाना उत्सवों से युक्त है ॥ ७ ॥ सुवर्ण के सदृश इक्कीस पुरी तहां हैं उस उत्तर दिशा को साधक लोग पीछे जावैं ॥ ८ ॥ तहां से सरस्वती नदी दीखती है । यह नदी हंस कारंडव चक्रवाक पक्षियों से शोभायमान है ॥ ९ ॥ नाना प्रकार के वृक्ष लताओं कर के और नाना पक्षियों से शोभायमान हैं मनुष्यों के सात जन्म के पापों को हरनेवाले हैं ॥ १० ॥ तहां कुमुद और कमलों करके शोभायमान बड़ा एक उत्तम तालाब है शंकर का पूजन कर उस तालाब का जल पीवै ॥ ११ ॥ शिव भगवान् के प्रसाद से माता पिता के वंश के पितर सब स्वर्ग को जाते हैं अक्षय गति को प्राप्त होते हैं ॥ १२ ॥ उत्तर मुख हो नदीतीर को जावै दो कोस में जाके एक बड़ा उत्तम आश्रम दृष्ट आता है ॥ १३ ॥ तहां सुवर्ण सिंहासन में इन्द्र ने लिङ्ग स्थापित किया है दो कोस चौड़ी इन्द्र की बनाई पुरी है ॥ १४ ॥ वह पुरी सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित ध्वजा पताकों से युक्त

वेष्टिता । देवगंधर्वसंकीर्णा चाक्षया श्रीमती शुभा ॥ १५ ॥ देवकन्या समाकीर्णा वंशवादेन वादिता । गायंत्यप्सरसस्तत्र देवगंधर्वयोषितः ॥ १६ ॥ वेदं सध्वनि निर्घोषं पठंति मुनयो मुहुः स्नात्वा सरस्वती तीर्थे ह्यर्चयित्वा च शंकरम् ॥ १७ ॥ कुशास्तरणकं कृत्वा चैकरात्रं वसेत्ततः । एकरात्रे व्यतिक्रांते नमस्कृत्वा जगद्गुरुम् ॥ १८ ॥ सरस्वतीनदीतीरं गंतव्यं योजनत्रयम् । अग्रतो दृश्यते तत्र सिद्धवारणसेविता ॥ १९ ॥ नानारत्नविचित्रैश्च हेमकूटा वसुंधरा । इन्द्रनीलमहानीलपद्मरागोपशोभिता ॥ २० ॥ दशयोजनविस्तीर्णा पुरी कांचनशोभिता । विष्णुना स्थापितं लिंगं तत्र देवो महेश्वरः ॥ २१ ॥ वापीकूपतडागाश्च प्रासादालय उत्तमः । चूतचंदनसंयुक्तः कदलीखंडमंडितः ॥ २२ ॥ पताकाध्वजसंयुक्तो द्वारशाखासुशोभितः । देवकन्यासमाकीर्णो वंशवादित्रनादितः ॥ २३ ॥ भेरी-

देव गंधर्वों से युक्त बड़ी शोभा वाली पुरी है ॥ १५ ॥ और देवकन्याओं से युक्त है अप्सरा लोग वहां बांस के बाजों को बजाती हुई गान करती हैं । देव गंधर्वों की स्त्री भी वहां विराजमान हैं ॥ १६ ॥ तहां मुनि लोग वेदध्वनि को करते हैं उस सरस्वती तीर्थ में स्नान कर शंकर का पूजन कर ॥ १७ ॥ तहां कुशों को बिछायकर एक रात रहे दूसरे दिन भगवान् शंकर को प्रणाम कर ॥ १८ ॥ सरस्वती नदी के तीर तीन योजन जाना तहां आगे सिद्ध हाथियों से सेवित भूमि दीखती है ॥ १९ ॥ चित्र विचित्र नाना रत्नों से वह भूमि अलंकृत है इंद्रनील महानील पद्मराग मणियों से शोभायमान है ॥ २० ॥ सुवर्ण से शोभायमान दश योजन विस्तार की पुरी है उसमें विष्णुभगवान् ने महेश्वर लिंग स्थापित किया है ॥ २१ ॥ बावड़ी कुए तड़ाग और उत्तम मंदिर आम्रवृक्ष चंदनवृक्षों से युक्त वह स्थान है और केले के वृक्षों से अलंकृत है ॥ २२ ॥ और ध्वजा पताकों से द्वारशाखाओं से शोभायमान देवकन्याओं से युक्त और

मृदंगशब्देन शंखतूर्यरवेण च। गीतं गायंति गंधर्वाः अप्सरोगणसेविताः ॥२४॥ तस्य मध्ये महालिंगं विष्णुना स्थापितं पुरा। स्नात्वा सरस्वती तीर्थे पंचैते तत्र साधकाः ॥ २५ ॥ अर्चयित्वा महेशानमेकरात्रं च जागरम्। नमस्कृत्य च देवेशं गंतव्या चोत्तराहरित्॥२६॥इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम चतुर्दशः पटलः ॥१४॥

ईश्वर उवाच। सरस्वतीनदीतीरे आश्रमा दृश्यते महान्। वासुकिप्रमुखाश्चैव दृश्यते पन्नगोत्तमाः ॥ १ ॥ महापालो गयश्चैव शंखपालश्च कर्कटः। अनंतजयनामा च आस्तिकः परमो मुनिः ॥२॥ दृश्यते शेषनागश्च तक्षको धरणीधरः। तिष्ठंति पन्नगाः सर्वे राजा चैव विरोचनः ॥ ३ ॥ वितिष्ठते वासुकिश्च सभार्यां परिवेष्टितः।सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नकृतानि च ॥ ४ ॥ तत्र तिष्ठंति राजेंद्र पन्नगप्रवरास्तथा। वासुकिर्दृश्यते

वंश के बाजों से शब्दायमान है ॥ २३ ॥ अप्सराओं के गणों से सेवित गंधर्व लोग भेरी मृदंग के शब्दों से शंख तूरी के शब्दों से गाते हैं ॥ २४ ॥ उसके मध्य में पहले विष्णु भगवान् ने लिंग स्थापन किया तहां सरस्वतीतीर्थ में स्नान कर साधक जो हैं ॥ २५ ॥ शंकर का पूजन कर एक रात्रि तहां जागरण कर शंकर को प्रणाम कर उत्तर दिशा को जाना ॥ २६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां चतुर्दशः पटलः ॥ १४ ॥

शिव बोले। सरस्वती नदी के किनारे एक बड़ा आश्रम दीखता है वहां वासुकी प्रभृति नाग हैं ॥ १ ॥ महापाल गय शंखपाल कर्कट अनंत परम मुनि आस्तिक अनंत जय ॥ २ ॥ पृथ्वी को धारण करनेवाला शेषनाग और तक्षक ये सब सर्प और विरोचन राजा तहां रहते हैं ॥ ३ ॥ वासुकी नाग इन सब से घिरा हुआ शोभायमान है और सुवर्ण के रत्नजडित दिव्य सिंहासन वहां रखे हुए हैं ॥ ४ ॥ तिन सर्पों से घिरा हुआ सिंहासन में बैठा

तत्र वाद्यते बहु नैकधा ॥ ५ ॥ भेरीमृदंगशब्देन काहलैः शंखमर्द्दलैः । वाद्यंते तादृशाश्चैव वीणापणवझर्झरैः ॥ ६ ॥ वाद्यंते च तथा सर्वे यथा मेघविगर्जितम् । स्थानं तत्र पुरे रम्ये नानारत्नविभूषितम् ॥ ७ ॥ शतयोजनविस्तीर्णं हेमप्राकार-वेष्टितम् । द्वादशादित्यतेजश्च नागकन्यासमाकुलम् ॥ ८ ॥ युवत्यस्ता मदोन्मत्ता विद्युत्तेजः समप्रभाः । मृगाक्ष्यो हंसगा-मिन्यो नूपुरारावसंकुलाः ॥ ९ ॥ करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभू-षिताः । संपूर्णचंद्रवदना दिव्यवस्त्रपरिच्छिदाः ॥ १० ॥ मृदु कोमलदेहाश्च वदन्ति कोकिलस्वरैः । शीर्षिणपुष्पसुगंधेन नाग वल्लीविभूषिताः ॥ ११ ॥ सर्वलक्षणसंपूर्णाः रूपयौवनगर्विताः । सर्वाः गुणसमायुक्ताः कुंडलाभरणोज्ज्वलाः ॥ १२ ॥ दिव्य-प्रसूनशिरसो दिव्यगंधानुलेपनाः । साधकाश्च गतास्तत्र सर्वे

हुआ वासुकी विराजमान है और अनेक बाजे बजते हैं ॥ ५ ॥ भेरी काहल शंख मर्द्दल वीणा पणव झर्झरा नाम के बाजों के बाजे बजते हैं ॥ ६ ॥ मेघ के शब्द के समान बाजे बजते हैं उस स्थान में अनेक तरह के रत्नों करके अलं-कृत स्थान हैं ॥ ७ ॥ वह स्थान सौ योजन विस्तार सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित बारह सूर्य के समान तेज वाला नागकन्याओं से युक्त है ॥ ८ ॥ यौवन में मात्त वह युवती उन्मत्त बिजली के समान कांतिवाली मृग के समान नेत्र वाली हंस के समान चलनेवाली घूंघुरों के शब्द वाली ॥ ९ ॥ हाथों में कंकण लगे हुए हैं हार और बाजूबंदों से अलंकृत पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली और दिव्य वस्त्रों को धारण किये ॥ १० ॥ कोमल शरिर वाली कोकिल के स्वरों के समान बोलनेवाली शिर सुगंध पुष्प से युक्त और पान को चाबती हुई ॥ ११ ॥ संपूर्ण लक्षणों से परिपूर्ण रूप और यौवन से गर्वित सब जितनी हैं अच्छे गुणों से युक्त कुंडल आभरणों से उज्ज्वल ॥१२॥ शिर में दिव्य पुष्पों को धारण किए दिव्य गंधों से लिप्त ऐसी दिव्य स्त्री तहां

ते विस्मयं गताः ॥ १३ ॥ तत्र दृष्ट्वा महाप्राज्ञ पुरं सर्वगुणान्वितम् । दिव्यं मनोहरं रम्यं वह्निज्वालासमप्रभम् ॥ १४ ॥ उत्तुंगशिखराकारैः प्राकारैस्तोरणैश्चितम् । रत्नमौक्तिकवैडूर्यविस्फुरत्किरणान्वितम् ॥ १५ ॥ कपाटागारसंयुक्तं वेष्टितं च पुरोत्तमम् । इंद्रनीलमहानीलपद्मरागोपशोभितम् ॥ १६ ॥ तस्मिन्नेव पुरे रम्ये हेमबद्धा वसुन्धरा । सौवर्णकेतकीजाता ह्यासते राजचंपकाः ॥ १७ ॥ सौवर्णकास्तत्र वृक्षा नानापक्षिसमाकुलाः । फलैर्विनिर्मिताः साक्षात्कूष्मांडसदृशोद्गतैः ॥ १८ ॥ बकुलैः शतपत्रैश्च बिल्ववृक्षैश्च पाटलैः । वापीकूपतडागादि प्रासादैश्च गृहैस्तथा ॥ १९ ॥ ध्वजमालाकुलं दिव्यं शिखरैश्चापि शोभितम् । चूतचंदनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितम् ॥ २० ॥ राजवृक्षसमाकीर्णं विवाहोत्सवसंकुलम् । रम्यं मनोहरं दिव्यं चोदि-

विराजमान हैं साधक लोग जो वहां जाते हैं वे सब बड़े विस्मय को प्राप्त होते हैं ॥ १३ ॥ हे महाप्राज्ञ! तहां संपूर्ण गुणयुक्त बड़ा दिव्य सुंदर अग्नि की ज्वाला के समान कांतिवाला नगर को देखकर ॥ १४ ॥ बड़े ऊंचे शिखर के आकार वाले प्राकार और तोरणों से व्याप्त वैडूर्यमणि आदि रत्नों के किरणों से शोभायमान ॥ १५ ॥ घरों में बड़े सुन्दर कपाट लगे हुए हैं और इन्द्रनील महानील मणि पद्मराग मणियों से वह नगर शोभायमान है ॥ १६ ॥ तिस बड़े रम्य नगर में पृथिवी सुवर्ण से युक्त है और सुवर्ण के केतकी पुष्प जाती पुष्प लगे हैं और सुवर्ण के राजचंपक वृक्ष विराजमान हैं ॥१७॥ नाना पक्षियों से युक्त सुवर्ण के वृक्ष हैं वे वृक्ष नाना प्रकार के फलों से निर्मित कूष्मांड के सदृश उद्गत हो रहे हैं ॥ १८ ॥ बकुल शतपत्र बिल्व पाटल वृक्षों से और बावड़ी कुएं तालाव घरों महलों से युक्त हैं ॥ १९ ॥ ध्वजों की मालाओं से शोभायमान और ऊंचे शिखरों से शोभायमान आम चंदनों के वृक्षों से कदली के स्तंभों से संयुक्त है ॥ २० ॥ राजवृक्षों से युक्त और विवाह उत्स-

तार्कसमप्रभम् ॥ २१ ॥ जलमध्ये यथा पद्मं नक्षत्राणां यथा शशी। तथा नागपुरीणां च तत्पुरं शोभते भृशम् ॥ २२ ॥ मणिमध्ये यथा पद्मं दिनमध्ये यथा रविः। तथा नागपुरी चैव शोभते च मनोरमा ॥ २३ ॥ साधकाश्च गतास्तत्र दृष्ट्वा च कुलवल्लभाम्। निशि वह्नेर्यथा तेजो दृश्यते च तथा पुरम् ॥ २४ ॥ गीतज्ञास्तत्र गायंति नृत्यंते नर्तकोत्तमैः। ब्राह्मणा वेदनिर्घोषैः सर्वशास्त्रं पठंति च ॥ २५ ॥ शिवालये समाकीर्णं नानालिङ्गसमाकुलम्। तस्य मध्ये महाराजा आसते पन्नगोत्तमः ॥ २६ ॥ दिव्यवस्त्रपरिधाना दिव्यगंधानुलेपनाः। दिव्यपुष्पशिरोबद्धा दिव्यतेजसमप्रभाः ॥ २७ ॥ दिव्यदेहा महाकन्याः सर्वाभरणभूषिताः। सर्वा गुणसमायुक्ता दिव्यभोगसमावृताः ॥ २८ ॥ दृष्ट्वा च साधकाः सर्वे वदंति स्वा-

वों से शोभायमान दिव्य मनोहर उदयकाल के सूर्य के समान कांतिवाला ॥२१॥ जैसा जल में कमल नक्षत्रों में चंद्रमा तैसा नागपुरी में वह पुर अत्यंत शोभायमान है ॥ २२ ॥ मणियों के मध्य जैसा पद्मरागमणि दिन में सूर्य जैसा शोभायमान होता है वैसी नागपुरी में वह नगरी शोभायमान है ॥२३॥ साधक लोग तहां उस नगरी को देखकर विस्मित होते हैं रात्रि में जैसा अग्नि का तेज दीखता है वैसा वह नगर दृष्ट आता है ॥ २४ ॥ गीत को जाननेवाले तहां गीत गाते हैं उत्तम नर्तकों से नर्तन किया जाता है ब्राह्मण लोग वेदघोष करते हैं और संपूर्ण शास्त्रों को पढ़ते हैं ॥ २५ ॥ बहुत शिवालयों से संयुक्त नाना लिंगों से समाकुल है उसमें सर्पराज महाराजा विराजता है ॥ २६ ॥ और तहां दिव्य वस्त्र को धारण किए दिव्य गंधों से लिप्त दिव्य पुष्प शिरों में धारण किए और दिव्य तेज के समान प्रभा वाली ॥ २७ ॥ दिव्य शरीर वाली कन्या संपूर्ण आभरणों से भूषित संपूर्ण गुण संयुक्त दिव्य भोगों को भोगती हुई ॥ २८ ॥ वे दिव्य कन्या साधकों को देखके कहती

गतं प्रिये । राजोवाच । क्व गता भुवनात्सिद्धाः क्व स्थानं चैव लभ्यते ॥ २९ ॥ एतद्‌ब्रूहि महाचार्य साधकाः परिचेष्टितम् । साधक उवाच । कथयामि महाराज शृणु मे वचनं शुभम् । आयता मृत्युलोकाद्ये तैः प्राप्यः शंकरालयः ॥३०॥ राजोवाच । शृण्वन्तु साधकाः सर्वे मम वाक्यं सुनिश्चितम् । पश्चाच्च साधकाः सर्वे गच्छाचार्य यथा सुखम् ॥ ३१ ॥ साधक उवाच । किमर्थं भोग्यमायुष्यं पश्चाच्च किं भविष्यति । एतद्‌ब्रूहि महाराज कुत्र स्थानेषु गम्यते ॥ ३२ ॥ राजोवाच । शतैकपंचकं कन्या दीयंते च पृथक् पृथक् । वर्षपंचशतं ह्यायुः कामरूपा महाबलाः ॥ ३३ ॥ आचार्यसाधकाः सर्वे भुंजन्भोगान्यथेप्सितान् । दिव्यवस्त्रपरीधानाः दिव्याभरणभूषिताः ॥३४॥ अस्मिन्नेव पुरे रम्ये बहुकन्यासमाकुले । अस्मिन्स्थाने महाभोगास्ते भोगा देवदुर्लभाः ॥ ३५ ॥ दिव्यपुष्पशिरोबद्धाः विमानारूढ

हैं आइए स्वागत करते हैं । राजा बोलता है हे सिद्धों! कहां से आए कहां को जाते हो ॥ २९ ॥ राजा बोला हे महाचार्य हे साधक ! कहिए । साधक बोला हे महाराज! मैं कहता हूं मेरे शुभ वचन को सुनो-हम मृत्युलोक से आये हैं शिवलोक को जाते हैं ॥३०॥ राजा बोला, सब साधक लोग सुनैं तदनंतर सुखपूर्वक जाइये ॥ ३१ ॥ साधक बोला आयुष्य और भोग किस लिए हैं और पीछे क्या होगा यह सब कहो ॥ ३२ ॥ राजा बोला, पांच सौ कन्या अलग २ दी जायेंगी और पांच सौ वर्ष की आयु होगी जैसी इच्छा होगी वैसे रूप को धारण करोगे ॥ ३३ ॥ हे आचार्य साधक लोगों! जैसी इच्छा हो वैसे भोगों को भोगो दिव्य वस्त्र आभूषणों को धारण करो ॥ ३४ ॥ इस रम्य नगर में बहुत कन्या हैं और देवतों को दुर्लभ जो भोग है वे भोग इसमें हैं ॥ ३५ ॥ शिर में दिव्य पुष्पों को धारण किए साधक लोग जहां जाना

साधकाः । यत्र स्थाने महावीर यथेच्छा तद्धि गम्यते ॥३६॥ तिष्ठंतु साधकाः सर्वे भुंजंतां विपुलां श्रियम् । एते मत्कथिताः भोगाः भोक्तव्याः साधकैः सह ॥ ३७ ॥ पश्चाच्च साधकाः सर्वे मृत्युलोकं व्रजंति च । सर्वकामसमृद्धाश्च जायंते विपुले कुले ॥ ३८ ॥ सर्वे गुणसमायुक्ता राजानोऽपि भवंति हि । साधक उवाच । मृत्युलोके मया चांते गंतव्यं च महानृपः॥३९॥ मृत्युलोकभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् । कोऽत्र स्थाने महाराज पश्यन्नैव च शंकरम् ॥ ४० ॥ अस्माभिस्तत्र गंतव्यं यत्र ब्रह्मा हरो हरिः । त्वया यदुदितं राजन् हृदयेनैव रोचते ॥ ४१ ॥ अवश्यं तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः ॥ ४२ ॥ राजोवाच । सिद्ध सिद्ध महाप्राज्ञ क्षणमेकं च तिष्ठतु । करसंपुटितं कृत्वा राजा तेषां वदेत्ततः ॥ ४३ ॥ भक्षित्वा फलमेकैकं देवदानव दुर्लभम् । पश्चाच्च साधकाः सर्वे भवन्तु ह्यजरामराः ॥४४॥ फलस्य भक्षणं कृत्वा ह्यमृतं प्रपिबंति च । पश्चाच्च साधकाः सर्वे

चाहें इच्छानुकूल वहां जाया जायगा ॥ ३६ ॥ सब साधक लोग यहां रहें और बहुत भोगों को भोगें जिनको मैंने कहा है ॥ ३७ ॥ पीछे मृत्युलोक में जाके बड़े कुल में उत्पन्न होकर बड़े समृद्ध होंगे ॥ ३८ ॥ और वहां सब गुण संपन्न राजे भी होंगे । साधक बोले । हे राजन् ! मृत्युलोक से तो अंत में हम यहां आए हैं ॥ ३९ ॥ मृत्युलोक के भय से हम लोग यहां आए हैं यहां शंकर कहां हैं देखा नहीं ॥ ४० ॥ जहां ब्रह्मा और शंकर विष्णु हैं हमने वहां जाना है राजन् ! तुमने जो कहा वह हमारे मन में नहीं आता ॥ ४१ ॥ जहां शंकर हैं अवश्य वहां जाना॥४२॥राजा बोला । हे सिद्ध, हे बुद्धिमन् ! क्षणभर रहो राजा हाथ जोड़ उनको कहता भया ॥ ४३ ॥ तुम एकेक फल को खावो जो देव दानवों को भी दुर्लभ है इनके खाने से पीछे सब तुम अजर अमर होजायेंगे ॥ ४४ ॥ तब उन लोगों ने फलों को खाया और अमृत को

गताश्चैवोत्तरामुखे ॥ ४५ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम पञ्चदशः पटलः ॥१५॥

ईश्वर उवाच । अग्रतो दृश्यते तत्र हेमबद्धा वसुंधरा । अस्मिन् स्थाने पुरं रम्यं नानारत्नविभूषितम् ॥ १ ॥ अर्धयोजनविस्तीर्णं प्रासादैरुपशोभितम् । वासितं च ततः सर्वैर्महागंधैस्सुगंधनैः॥ २ ॥ इन्द्रनीलमहानीलैर्विस्फुरत्तन्महापथम्। मौक्तिकैश्चंद्रकांतैश्च वैडूर्यमणिभिश्चितम् ॥ ३ ॥ इन्द्रजालपरिक्षिप्तं चित्रकर्मोपशोभितम्।रम्यं मनोहरं दिव्यं चंद्रादित्यसमप्रभम् ॥४॥उत्तुंगशिखराकारं दीपमालाविभूषितम् ।तत्र स्थाने महादिव्यो महागंधाधिवासितः॥५॥नानारत्नसमाकीर्णः प्रासादस्तत्र शोभते । तस्य मध्ये महारम्यं गतास्ते सर्वसाधकाः ॥ ६ ॥ ब्रह्मणा स्थापितं लिंगं तत्र देवो महेश्वरः । साधकाश्च गतास्तत्र नमस्कृत्य जगद्गुरुम् ॥ ७ ॥ स्वर्गस्थानं गताः सर्वे

पिया पीछे वे सब उत्तर दिशा को गये ॥ ४९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे भाषाटीकायां पञ्चदशः पटलः ॥ १५ ॥

भगवान् शंकर बोले तहां आगे सुवर्णबद्ध भूमि दृष्टि आई उस स्थान में बड़ा रमणीय नाना रत्नों से अलंकृत एक नगर है॥ १॥ वह नगर दो कोस चौड़ा और बड़े मंदिरों से शोभायमान और नाना प्रकार के सुगंधों से सुगंधित है ॥ २ ॥ इन्द्रनील महानील मणियों से शोभायमान वह मार्ग प्रकाशित है और मौक्तिक चंद्रकांतमणि वैडूर्यमणियों से शोभायमान है ॥ ३ ॥ इंद्रमणियों के जाल से विराजमान चित्रों से शोभायमान दिव्य मनोहर सूर्य चंद्र के समान प्रभा कांतिवाला ॥ ४ ॥ उस स्थान में ऊंचा शिखर के आकार का दीपमाला से विभूषित बड़ा दिव्य और उत्तम गंधों से सुवासित ॥ ५ ॥ नाना रत्नों से युक्त महल शोभायमान है सब साधक उसमें गये ॥६॥ तहां शंकर भगवान् का लिंग ब्रह्मा का स्थापित किया हुआ है तिसको साधक जाके नमस्कार कर॥७॥

ह्यागता गणकोटयः । गंधर्वाश्च गताः सर्वे अर्चयित्वा पृथक् पृथक् ॥८॥ पूजां कृत्वा ततः सेन स्वर्गे ता गणकन्यकाः । भेरीमृदंगशब्देन शंखकाहलमर्द्दलैः ॥ ९ ॥ वीणातालमहाशब्दैर्वादनैर्विविधैरपि । घंटादुंदुभिनिर्घोषैरप्सरो नृत्यगायनैः ॥ १० ॥ प्रेक्षणं च प्रकुर्वंति लिंगस्य पुरतः स्थिताः । मधुर स्वरगंधर्वा गीतं कुर्वंति योषितः ॥ ११ ॥ आगता दह्यमाने च तथा च हरिचंदनौ । पठंति विविधं स्तोत्रं मुनयो देवसंयुताः ॥ १२ ॥ आरार्त्तिकं प्रकुर्वाणाः कर्पूरेण समन्विताः । तस्मिन्स्थाने महातीर्थे धर्मकर्मसमागमः ॥ १३ ॥ गुरूपदेशमार्गेण पूजयित्वा महेश्वरम् । स्तोत्रमंत्रैर्महादेवं वेदसिद्धांतमध्यगैः ॥ १४ ॥ तस्मिन् स्थाने महातीर्थे निवसेचैकरात्रकम् । आचार्यसाधकाः सर्वे निद्रावशमुपागताः ॥ १५ ॥ अर्धरात्रे भवेन्निद्रा स्थाने तस्मिन्महाबुधैः । स्वप्ने च दृश्यते तत्र

तिस लिंग को पूजकर सब गण कोटि गंधर्व लोग स्वर्गस्थान को प्राप्त होते भये ॥ ८ ॥ हे महासेन ! तदनंतर गणकन्या सब शंकर को पूजकर भेरी मृदंग शंख काहल मर्द्दल बाजों के शब्दों से युक्त हो स्वर्ग को गईं ॥९॥ वीणा ताल के शब्दों से और तरह तरह के बाजों से दुंदुभी के शब्दों से अप्सरों के नृत्य गान से ॥ १० ॥ लिंग के आगे स्थित होते हुए अप्सरा और गंधर्व मधुर स्वरों से गाते हुए देखते थे ॥ ११ ॥ कपूर आदिक द्रव्यों को जलाकर भगवान् के निकट तरह तरह के स्तोत्र पाठों को मुनि लोग पढ़ते थे ॥ १२ ॥ कर्पूरयुक्त आरती को करते हैं उस महातीर्थ उत्तम स्थान में धर्म कर्म का समागम है ॥ १३ ॥ गुरु के उपदेश के मार्ग से भगवान् महेश्वर को वेद सिद्धांत स्तोत्र मंत्रों से पूजकर ॥ १४ ॥ उस महातीर्थ स्थान में आचार्य साधक लोग एक रात्रि वास कर निद्रा को प्राप्त भये ॥ १५ ॥ तब अर्ध रात्रि

रुद्रदेवो महेश्वरः ॥ १६ ॥ जटामुकुटधारी च चंद्रार्धकृतशेखरः । नीलकंठो वृषारूढः शूलपाणिर्महाबलः ॥ १७॥ त्रिनेत्रो दशहस्तश्च भस्मगात्रविलेपनः। सिद्धवाक्यं वदेत्तत्र सिद्धांश्चैवोपदेशिनः ॥ १८ ॥ देवस्य पश्चिमे भागे तिष्ठंति फलिता द्रुमाः तत्फलैरानताशाखाः कूष्मांडसदृशैर्भुवि ॥ १९ ॥ कूष्मांडफलरूपेण त्वमृतं तत्र तिष्ठति । आचार्य साधकाः सर्वेऽप्यागत्य द्रुमसंनिधौ ॥ २० ॥ गृहीत्वा फलमेकैकं गताश्चैव शिवालयम् । पंचैते साधकास्तत्र पूजयित्वा महेश्वरम् ॥ २१ ॥ फलं चार्धं च नैवेद्यमर्धभक्षणमेव च । स्वप्ने चैव समाख्याता पुनर्निद्रा हि तद्गता ॥ २२ ॥ विबुधाः विस्मयं गत्वा मुखं पश्यंति सत्वरम् । साधका विस्मयं जग्मुः स्वप्ने दृष्ट्वा महेश्वरम् ॥ २३ ॥ आचार्य उवाच । मयोक्तं हि पूर्वमिदं

में निद्रावश में भगवान उनको स्वप्न दिखाया ॥ १६ ॥ जटा मुकुट को धारण करता हुआ शिर पर अर्धचंद्र कंठ में नील चिन्ह बैल पर चढ़े शूल हाथ में लिए ॥ १७ ॥ तीन नेत्र दश भुजा वाले शरीर में विभूति चढ़ाये भगवान् उन सिद्धों को कहकर उपदेश दिया ॥ १८ ॥ तहां भगवान् शिव के पश्चिम भाग में फले हुए कूष्मांड सरीखे फलों से जिनकी शाखा झुककर जमीन में आई हैं ॥ १९ ॥ उन कूष्मांड रुप फलों में अमृत रहता है आचार्य साधक लोग सब वृक्षों के निकट आकर ॥ २० ॥ तहां एक एक फल को लेके वे पांचों साधक शिवालय में गये शिव को पूजन कर ॥ २१ ॥ आधा आधा फल भगवान् को नैवेद्य चढ़ाया और आधा आधा आप खाया इस प्रकार स्वप्न देखा फिर सो गये ॥ २२ ॥ पंडित लोग विस्मय में प्राप्त हो मुखों को देखने लगे साधक लोग स्वप्न में शंकर को देख आश्चर्य को प्राप्त हुए ॥२३॥ आचार्य बोले मैंने पहलेही शास्त्र देख तुमको कह दिया था अबही भगवान

शास्त्रं सवत्रदर्शनं अद्य वै प्रकटेत्तत्र दृश्यते च महेश्वरः ॥ २४ ॥ तत्र दृष्ट्वा महादेवं हर्षं याति मुहुर्मुहुः। अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः अद्य मे सफलं जाप्यं यदि तुष्टो महेश्वरः ॥२५॥ ईश्वर उवाच । भो भोः सिद्धा महाभागाः तुष्टो वोहि त्रिलोचनः ॥ २६ ॥ गुरुभक्तिप्रभावेण मार्गं पश्यंति सत्वरम्। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा पृच्छंस्ते सर्वसाधकाः ॥ २७ ॥ आचार्य साधकाः सर्वे क्षणमेकं च तिष्ठतः । दृश्यते च पुरं श्रेष्ठं नाति दीर्घं न ह्रस्वकम् ॥ २८ ॥ सुपक्वामृतगंधं च फलं कांचनस न्निभं । गृहीत्वा फलमेकैकं गताश्चैव शिवालयम् ॥ २९ ॥ स्नात्वा भक्त्या च ते सिद्धाः पूजयित्वा महेश्वरम् । अर्धं च शिवनैवेद्यमर्धभक्षणमाचरन् ॥ ३० ॥ फलभक्षणमात्रेण मूर्छा गच्छंति साधकाः । तावत्तिष्ठंति ते सिद्धाः यावद्गोदोहमात्र कम् ॥ ३१ ॥ चिंतका स्थितिमात्रेण स्मरन्ति परमेश्वरम् ।

शंकर प्रकट होके दर्शन देंगे ॥ २४ ॥ तहां भगवान् शंकर के दर्शन पाके वारंवार हर्ष को प्राप्त भये बोले कि आज हमारा जन्म सफल और तप सफल भया आज जप भी सफल हुआ जो भगवान प्रसन्न हुए ॥२५॥ भगवान् बोले हे सिद्ध लोगों तुमको बड़ा सौभाग्य प्राप्त भया जो तुमपर भगवान् प्रसन्न भए ॥ २६ ॥ गुरुभक्ति के प्रभाव से शीघ्र मार्ग को देखते हैं शंकर के वचन को सुन साधक लोग पूंछते भये ॥ २७ ॥ सब आचार्य और साधक एक क्षण स्थित रहे इतने में एक नगर जो न तो बहुत बड़ा न बहुत छोटा दृष्ट आया ॥ २८ ॥ सुंदर पकेहुए अमृतयुक्त सुगंधित सुवर्ण के सदृश एक एक फल लेके शिवा-लय को गये ॥ २९ ॥ वे सिद्ध लोग भक्ति से स्नान कर शिव को पूजन कर आधा आधा फलों को शिव को नैवेद्य चढ़ाय और आधा आप भक्षण करते भये ॥ ३० ॥ फल के खाने मात्र मूर्छा को प्राप्त भये और गोदोहन मात्र

सर्वव्याधिविनिर्मुक्ता जरामृत्युविवर्जिताः ॥ ३२ ॥ दिव्यदेहा
महाकाया मलगंधविवर्जिताः । अशेषवेदवक्तारः सर्वशास्त्र
विशारदाः ॥ ३३ ॥ देवद्विजप्रसादेन गुरुधर्मबलेन च । भवं
ति साधकास्तत्र रुद्रतुल्यपराक्रमाः ॥ ३४ ॥ बहुज्ञानात्ततः
सिद्धाः जाता जातिस्मरा ध्रुवम् । पश्यंति साधकाः सर्वे स्वर्गं
मृत्युं रसातलम् ॥३५॥ महावीरा महावेगा महाबलपराक्रमाः ।
रूपवन्तो महातेजा जायंते तत्र साधकाः ॥ ३६ ॥ पश्यंति
गगने रम्ये कैलासशिखरालयम् । सर्वे पुरीं प्रपश्यंति आचा
र्यः साधकाश्च ये ॥ ३७ ॥ दिव्यचक्षुर्भवेत्तेषां दीर्घदृष्टिस्ततो
भवेत् । इच्छया कुर्वते सृष्टिमिच्छया घ्नंति ते जगत् ॥३८॥
त्रीनपीमान्पुनर्लोकान् कुर्वते ते च लीलया । सहस्रं योजनं
गत्वा पुनरायांति ते ध्रुवं ॥ ३९ ॥ नवकोटिगजानां च बलं
प्राप्य दिवं गताः तेषां संख्या न कर्तव्या देवदानवराक्षसैः ॥

मूर्छा में रहे ॥ ३१ ॥ फिर सुचेत हो सब रोग से छूट ईश्वर का स्मरण करने लगे जरामृत्यु से छूट गए ॥ ३२ ॥ दिव्य शरीर को धारण करते हुए मल और गंध से रहित हो सम्पूर्ण वेद के वक्ता और सर्व शास्त्र के पारंगत हुए ॥ ३३ ॥ देवता और ब्राह्मण के प्रसाद से गुरु और धर्म के बल से साधक तहां रुद्रतुल्य हुए ॥ ३४ ॥ वे सिद्ध बड़े ज्ञानी भये जिससे उनको जातिस्मरण रहा और स्वर्ग मृत्यु पाताल को देखते हैं ॥ ३५ ॥ बड़े वीर पराक्रमी बली तेजस्वी रूपवंत हुए ॥ ३६ ॥ रमणीय आकाश में शिखरों की सब पुरियों को आचार्य और साधक देखते हैं ॥ ३७ ॥ उनको दिव्य नेत्र होते हैं दृष्टि दीर्घ होती है अपनी इच्छा से सृष्टि को उत्पन्न और लय करते हैं ॥ ३८ ॥ लीला से तीनों लोकों में आ जा सकते हैं हजार योजन तक जाके फिर लौट आते हैं ॥ ३९ ॥ नौ करोड़ हाथियों के बल को पा स्वर्ग को जाते हैं उनके पराक्रम की गिनती देवता दानव राक्षसों से भी नहीं

४० ॥ स्वर्गं मृत्युं च पातालं लंघेरन् गोष्पदं यथा । एवंदेहे बलं तेषां सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ४१ ॥ तत्र ते साधकाः सर्वे भवंतु ह्यजरामराः । सिद्धाचार्यसमायुक्ता आत्मानं शोधयंति हि ॥ ४२ ॥ मनुष्यजन्मसंभूता स्थितास्ते नरकार्णवे । विहायैतन्महाशास्त्रं महामार्गभयानके ॥ ४३ ॥ न पश्यंति परं दिव्य मंधास्ते ज्ञानमोहिताः । अनेनैव च देहेन स्वर्गो यैर्नाधिगम्यते ॥ ४४ ॥ ये वदंति च आचार्यः सिद्धाश्च विस्मयं गताः । तत्र ते साधकाः सर्वे गतास्ते चोत्तरां दिशम् ॥ ४५ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम षोडशः पटलः ॥ १६ ॥

ईश्वर उवाच । कृत्वा शिवनमस्कारं सर्वज्ञाने विचक्षणाः । पुरा पश्यंति ते सिद्धाः नदीं पुलिनगामिनीम् ॥ १ ॥ व्रजंति स्वर्गभवनं प्राप्य वेगमनुत्तमम् । शोभते विमलं नीरं दृश्यते

होती है ॥ ४० ॥ स्वर्ग मृत्यु पाताल को गौ के पद के बराबर लांघते हैं इस प्रकार उनके देहमें बल है मैं सत्य २ कर बोलता हूं ॥ ४१ ॥ तहां वे साधक अजर अमर होते हैं आचार्य सिद्ध सब अपने आत्मा को शुद्ध करते हैं ॥४२॥ जो लोग महाशास्त्र महापथ को नहीं देखते हैं वे लोग मनुष्य जन्म पा के महाभयानक नरकसमुद्र में पड़ते हैं ॥ ४३ ॥ अज्ञान से मोहित हो इस देह से जो परम दिव्य मार्ग को नहीं देखते वे अंधे हैं और इस शरीर से स्वर्ग को नहीं जाते ॥ ४४ ॥ बोलते हैं आचार्य सिद्ध लोग परम विस्मय को प्राप्त हुए और उत्तर दिशा को गए ॥ ४५ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिव पुराणे कैलासगमनं नाम षोडशः पटलः ॥

शिवजी बोले उनोने शिवजी को नमस्कार कर आगे एक नदी को देखा ॥ १ ॥ उस नदी में बड़ा निर्मल मनोरम जल है वहां जाके बड़े वेग को पाय

च मनोरमम् ॥ २ ॥ सरस्वती महाभागा पवित्रं पुरमुत्तमम् । तस्य मध्ये निरीक्ष्यासन् परमानंदमास्थिताः ॥ ३ ॥ बहूनि पद्मपत्राणि परीतानि समंततः तृप्तिं ते साधका यांति महा गंधसुगंधिभिः ॥ ४ ॥ आनंदतोषिताः सिद्धाः परं निर्वाण मास्थिताः । महानद्याः सरस्वत्याः सिद्धास्तीरमुपेत्य ते ॥ ५ ॥ दृष्ट्वा ते चोत्तमां शोभां हर्षं यांति पुनः पुनः । दशयोजन विस्तीर्णा अतिरम्या मनोहरा ॥ ६ ॥ लहरीतुंगगंभीरानेकावर्त समाकुला । मणिरत्नसमाकीर्णा पुष्पाकारासुबालुका ॥ ७ ॥ शंखमुक्तासमायुक्ता हंससारसशोभिता । चक्रवाकयुगोपेता मत्स्यकूर्मसमाकुला ॥ ८ ॥ कर्पूरगंधवत्तोयमतिस्वादुसुशीत लम् । अनेकपुष्पसौगंधपद्मनीलोत्पलैरपि ॥ ९ ॥ अप्सरोदेव गंधर्वविद्याधरवरस्त्रियः । जलक्रीडार्थमागत्य पूजयंति सदा

स्वर्ग को जाते हैं ॥ २ ॥ वहां सरस्वती नदी है तहां एक उत्तम नगर है उस को देख वे लोग परम आनन्द को प्राप्त भये ॥ ३ ॥ तहां बहुत कमल चारों ओर से व्याप्त हैं उनके सुगंधों से वे साधक लोग तृप्ति को प्राप्त हुए ॥ ४ ॥ उस सरस्वती नदी के तीर में प्राप्त होके आनंद से संतुष्ट सिद्ध लोग बड़े शांति को प्राप्त हुए ॥ ५ ॥ उसकी उत्तम शोभा देख पुनः पुनः हर्ष को प्राप्त हुए वह नदी दश योजन चौड़ी अतिरमणीय और मन को हरनेवाली है ॥ ६ ॥ ऊंची लहरों से गंभीर और अनेक आवर्तों से युक्त मणि और रत्नों से भरी और जिस्के बालु पुष्पाकार हैं ॥ ७ ॥ शंख और मोतियों से संयुक्त हंस सारस पक्षियों से सोभायमान चक्रवाक पक्षियों के जोड़ा से युक्त और मत्स्य कछुवों से भरी हुई ॥ ८ ॥ उसका जल कपूर के गंधवाला अतिस्वादि-ष्ट और अतिशीतल है नीलोत्पल कमल आदि अनेक पुष्पों के सुगंधयुक्त है ॥ ९ ॥ तहां अप्सरा और देवता गंधर्व विद्याधरों की श्रेष्ठ स्त्रीलोग जल

शिवम् ॥ १० ॥ एवं पश्यंति ते सिद्धाश्चंद्रवेगांसरस्वतीम् । तत्र स्थाने महासेन पंथाश्चैव न दृश्यते ॥ ११ ॥ गंधर्वाणां ध्वनिं श्रुत्वा संमुखे यांति साधकाः । पश्यंति च महास्थान मतिरम्यं मनोहरम् ॥ १२ ॥ अत्युच्छ्रितं महादिव्यं शंकुपाल पुरं महत् । संप्राप्ताः साधकास्तत्र ह्यानंदो यत्र तिष्ठति ॥१३॥ प्राकारैर्गोपुराद्यैश्च निर्मितं दिव्यकांचनैः । प्रविस्फुरन्महा रत्नैर्दिव्यजालैश्च शोभितम् ॥ १४ ॥ ध्वजमालाकुलं दिव्यं चित्रकर्मोपशोभितम्।भेरीमृदंगशब्दैश्च शंखतूर्यसुवेणुकैः॥१५॥ शतैश्च शतपत्रैश्च लक्षकोटिभिरेवच। एकविंशतिगुणोपेतो दृश्य ते धवलो गृहः ॥ १६ ॥ नानापुष्पगुणोपेता नानागंधमनो हराः । देवता सदृशी दिव्या नानारत्नविभूषिता ॥ १७ ॥ द्वादशादित्यतेजस्का मंगलादपि मंगला । पुरी रम्या महा

क्रीडा के लिए आके सदाशिव का पूजन करते हैं ॥ १० ॥ इस प्रकार सिद्ध लोग चन्द्रमा के समान वेगवाली सरस्वती नदी को देखते भये हे स्कंद उस स्थान में मार्ग नहीं देख पड़ता ॥ ११ ॥ गंधर्वों के शब्द को सुन साधक लोग सन्मुख आये वहां बड़ा उत्तम मनोहर स्थान देखा ॥ १२ ॥ बड़ा ऊंचा और दिव्य शंकुपाल नगर है साधक तहां गये जहां आनंद रहता है ॥ १३ ॥ वह पुर गोपुर प्राकार से युक्त है दिव्य सुवर्ण से बना है बड़े रत्नों से खचित दिव्य जालों से शोभित है ॥ १४ ॥ ध्वजाओं की मालाओं से भरा हुआ दिव्य चित्रों से शोभायमान और भेरी मृदंग शंख तूर्य वेणु वाद्यों के शब्दों से विराजमान है ॥ १५ ॥ लाखों सैकड़ों कमलों से इकीस गुणयुक्त सुफेद घर दृष्ट आता है ॥ १६ ॥ नाना पुष्प और गंधों से युक्त मनोहर नाना रत्नों से विभूषित दिव्य रत्नों से अलंकृत ॥ १७ ॥ बारह सूर्य के समान तेजवाली और मंगल से भी मंगल तपाये हुए सोने के सदृश दिव्यपुरी ॥ १८ ॥ लाल पीले काले पांच रंग के

दिव्या तप्तकांचनसन्निभा ॥ १८ ॥ पीतरक्तासितश्यामनाना वर्णक्रमेण च । पंचवर्णपताकाश्च दृश्यंते पवनेरिताः ॥ १९ ॥ स्तंभा हेममयाः सर्वे सोमकांतिसमप्रभाः । सपक्वफलसंपूर्णा नानाद्रुमसमाकुलाः ॥ २० ॥ चूतचंदनसंयुक्तं कंदलीखंडमंडितं । देवगंधर्वसंकीर्णं वंशवादित्रनादितम् ॥ २१ ॥ हेमरत्नसमायुक्तं प्रासादैश्च गृहैस्तथा । शतयोजनवीस्तीर्णं शंकुपालपुरं महत् ॥ २२ ॥ हेम्नैव रचिता भूमिरुद्यदर्कसमप्रभा । इंद्रनीलमहानीलैः पद्मरागैश्च शोभितः ॥ २३ ॥ अर्धयोजनविस्तीर्णः शंकुपालस्य मंडपः । स्तंभा हेममयास्तत्र चंद्रकांतिसमप्रभाः ॥ २४ ॥ विशेषेण च तिष्ठंति दीपमालासमाकुलाः । रत्नमालासमायुक्तं शोभितं धवलैर्गृहैः ॥ २५ ॥ नानारत्नसमायुक्तं पुष्पमालाभिरावृतं । स्वस्तिकैरत्नपूगैश्च कुंकुमैर्यक्षकर्दमैः ॥ २६ ॥ नित्योत्सवसमाकीर्णं द्वारे च गणशोभितम् । तस्य

पताके पवन से कंपायमान जिस पुरी में दृष्ट आते हैं ॥ १९ ॥ चन्द्रमा के कांतिवाले सोने के खंभे जिसमें लगे हुए हैं नाना वृक्ष फल फूल से भरे हुए हैं ॥ २० ॥ आम्रवृक्ष और चंदनों के वृक्ष कदली के खंभों से सुशोभित बांस के बाजों से शब्दायमान और देव गंधर्वों से संयुक्त ॥ २१ ॥ नाना सुवर्ण और रत्नों से संयुक्त और बड़े महलों घरों से संयुक्त सौ योजन चौड़ा वहां शंकुपालपुर है ॥ २२ ॥ तहां संपूर्ण भूमि सुवर्ण से रचि हुई है उदय काल के सूर्य के सदृश प्रभा है जिसकी इंद्रनील महानील मणि और पद्म राग मणियों से शोभायमान है ॥ २३ ॥ आधायोजन चौड़ा यह शकुंपालनगर का मंडप है तहां सुवर्ण के खंभे चंद्रकांत के समान कांतिवाले ॥ २४ ॥ तहां विशेष कर दीपमालों से शोभित और रत्नों की मालाओं से संयुक्त सुफेद महलों से शोभित है ॥ २५ ॥ पुष्पमाला से नाना रत्नों से युक्त रत्न पूगों से कुंकुम इत्यादि सुगंध गंधों से युक्त प्रासादों से युक्त ॥ २६ ॥ और

मध्ये महाश्रेष्ठं शंखपालं नृपोत्तमम् ॥ २७ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नमयानि च । तत्र तिष्ठंति राजेंद्रं शंखपालं नृपोत्तमम् ॥ २८ ॥ अप्सरोगणगंधर्वास्तिष्ठंति ह्यत्र नैकधा । संप्राप्ता साधकास्तत्र ह्याश्रमो यत्र तिष्ठति ॥ २९ ॥ प्राकारैर्गोपुराट्टालैर्निर्मितं सर्वकांचनैः प्रस्फुरत्तन्महारत्नैर्वेष्टितं च पुरोत्तमैः ॥ ३० ॥ ध्वजमालाकुलोपेतं चित्रकर्मोपशोभितम् । भेरीमृदंगशब्दैश्च शंखतूर्यरवान्वितम् ॥ ३१ ॥ दुंदुभ्युत्ताल निर्घोषैर्वंशवादित्रनादितम् । तत्र स्थानं महादिव्यं गताः सर्वे च साधकाः ॥३२॥ तत्र तिष्ठंति वै कन्याः सर्वाभरणभूषिताः। दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः ॥ ३३ ॥ शोभिताशिर पुष्पैश्च तांबूलमुद्गिरन्ति च । मृगाक्ष्यो हंसगामिन्यः कुंडलाभरणोज्ज्वलाः ॥ ३४ ॥ संपूर्णचंद्रवदना वदंत्यः कोकिलस्वरम् । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः ॥ ३५ ॥ दिव्यदेहा महा

नित्य उत्सवों से युक्त द्वारपालगणों से शोभित है उस नगर में बड़ा श्रेष्ठ शंखपाल नामा राजा है ॥ २७ ॥ दिव्य सिंहासन सुवर्ण रत्नखचित तहां रखे हैं उनमें शंखपाल राजा विराजमान है ॥ २८ ॥ अप्सरागण गंधर्वलोग तहां विराजमान हैं जहां वह आश्रम है तहां वे साधक लोग पहुंचे ॥ २९ ॥ सुवर्ण के गोपुर प्राकार जहां निर्माण हैं और महारत्नों से प्रकाशित नाना नगरों से विराजमान ॥ ३० ॥ नाना चित्रों और ध्वजों की मालाओं से शोभित भेरी मृदंग शंख तूर्य आदि शब्दों से संयुक्त ॥ ३१ ॥ दुंदुभि ताल वंशवाद्यादिक बाजों के शब्दों से शब्दायमान है ऐसे महास्थान में साधक लोग गये ॥ ३२ ॥ वहां संपूर्ण आभरणों से भूषित और दिव्य वस्त्रों को धारण किए नाना गंधों से लिप्त कन्या विराजमान हैं ॥ ३३ ॥ शीशफूलों से शोभित और तांबूल चाबती हुई मृगी के समान नेत्र वाली हंसगामिनी कुंडलों से प्रकाशित ॥ ३४ ॥ पूर्णचंद्र के समान मुखवाली कोकिलस्वरवाली कंकणों से युक्त हार बाजूबंदों से अलंकृत ॥ ३५ ॥

काया विद्युत्तेजसमप्रभाः । अशोकपल्लवाहस्ता रूपयौवनगर्विताः ॥ ३६ ॥ जानुबाहू तथा सेन कदलीस्तंभसंनिभौ । कमलोदरसंपूर्णा रूपशोभायुताः स्त्रियः ॥ ३७ ॥ काश्चिद्गजसमारूढाः सर्वाः स्वच्छन्दगा मताः । काश्चिद्विमानसंरूढाः काश्चिच्च शिबिकाधिगाः ॥ ३८ ॥ मत्तमातंगगामिन्यः सर्वा यौवनगर्विताः ॥ ३९ ॥ इच्छावाहनमारूढा गच्छंति ललनागतिम् । शंकुपालसुताः सर्वा रमंते च पठंति च ॥ ४० ॥ सुधांशुनिभवक्त्रास्ता रमंते प्रचरंति च । वर्द्धमानलताकाराः पद्मनालभुजोपमाः ॥ ४१ ॥ नानाछंदा मदोन्मत्ताः पठंति पाठयंति च । सर्वा लक्षणसंयुक्तास्तपंति च परं तपः ॥ ४२ ॥ अचपगाश्चंबलाकाराः पद्मनालैः सकंटकैः । क्षणं शुक्ला क्षणं कृष्णा क्षणं दर्पणसंनिभा ॥ ॥ ४३ ॥ शंखपालसुताः सर्वाः कैर्मुखं चुंबयंति ताः । चंद्रवेगा तटाश्चैव बहुपुष्पोपशोभितः ॥ ४४ ॥ तस्य मध्ये महावृक्षः

बडे दिव्यशरीरवाली बिजली के तुल्य कांतिवाली हातों में अशोक वृक्ष के पत्तों को लिए रूप यौवन से गर्वित ॥ ३६ ॥ हे महासेन! जानु पर्यंत भुजावाली केले के खंभों के सदृश जंघा जिनकी कमल के समान उदर बड़े रूप से युक्त ॥ ३७ ॥ कोई स्त्री हाथियों में चढी और सब स्वाधीन विचरनेवाली कोई विमानों में चढ़ी कोई डोलियों में बैठी ॥ ३८ ॥ वह स्त्री सब मतवाले हाथि के सदृश चलनेवाली और अपने रूप यौवन से गर्वित हैं उनमें कोई स्त्री अपनी इच्छा के वाहनों मे चढी हुई और सुंदर गमनवाली ये सब शंकुपाल की पुत्री हैं चंद्रमा के समान मुखवाली बढ़ती हुई लताओं के समान चलती खेलती हैं पद्मनाल के समान भुजावाली ॥ ४१ ॥ तरह २ के छंदों से उन्मत्त हो पढ़ती और पढ़ाती हुई संपूर्ण लक्षण युक्त स्त्री जो हैं उत्कृष्ट तप को करती ॥ ४२ ॥ और तहां नदी चंचलाकार है जिनमें पद्मनाल कांटों सहित हैं कभी सुफेद कभी काली क्षण में स्वच्छ ॥ ४३ ॥ यह शंखपाल की कन्या किनको बरती है चंद्रवेगा नाम

सुवटो नाम नामतः । तस्मिंस्तु दोलितादोला घंटाचामरभूषि-
ताः ॥ ४५ ॥ रत्नमुक्ताप्रवालैश्च काँचनै रचितालयाः ।
हिंदोलयंति ताः कन्या गायंति क्रीडयंति च ॥४६॥ फल-
पुष्पसमाकीर्णास्तस्य शाखा विलंबिताः । नानापुष्पसमाकीर्णः
सुपक्वफलसंयुतः ॥ ४७ ॥ अर्धयोजनविस्तीर्ण उच्छ्रायो
दशयोजनम् । तस्य शाखा प्रमाणैः स्वैर्गताश्चैव दिशो दश
॥ ४८॥ दिव्यवर्णो महाकायश्छाया तस्य सुशीतला । रम्यो
मनोहरो दिव्यं चंद्रादित्यसमप्रभः ॥ ४९ ॥ तत्र तिष्ठंति
ताः कन्याः सर्वाभरणभूषिताः । पंचलक्षाश्च तिष्ठंति शंखपाल-
सुतास्तथा ॥ ५० ॥ साधकाश्च गतास्तत्र यत्र तिष्ठति सा
पुरी । दृष्ट्वा ताश्च ततः कन्याः साधका विस्मयं गताः ५१
आगताः स्वागताः सिद्धाः कन्यास्तत्र वदंति च । आचार्य-
सहितास्तत्र मूर्छा गच्छंति साधकाः ॥ ५२ ॥ कन्यकानां

की नदी का तट तहां बहुत पुष्पों से शोभायमान है ॥ ४४ ॥ उसके मध्य में सुवट नामका एक बड़ा वृक्ष है उसमें दोले रखे हैं और वे घंटा और चंवरों से शोभित हैं ॥ ४५ ॥ मोती प्रवाल और सुवर्णों से बने हुए वे दोले हैं अर्थात् हिंडोले हैं उनमें वे कन्या खेलती नाचती गाती हैं ॥ ४६ ॥ उस वृक्ष की शाखाओं में सुन्दर सुपक्व फल हैं वे शाखा पुष्पों से युक्त हैं ॥ ४७ ॥ आधा-योजन विस्तृत दश योजन ऊंचा है उसकी शाखा दशदिशों में फैली हुई हैं ॥ ४८ ॥ उसका बड़ा दिव्य वर्ण है और बड़ा शरीर है छाया उसकी बड़ी शीतल है बड़ा मनोहर चंद्र सूर्य के प्रभा के तुल्य उसकी विचित्र कांति है ॥ ४९ ॥ तहां शंखपाल की कन्या संपूर्ण आभरणों से भूषित पांच लाख रहती हैं ॥ ५० ॥ जहां वह पुरी है तहां साधक लोग पहुचे उन कन्याओं को देख साधक विस्मय को प्राप्त हुए ॥ ५१ ॥ वह सब कन्या उन साधकों कहती थीं कि आइए विराजिए इतने में वे साधक आचार्य सहित मूर्छाको

कृते चांते आचार्यसहितास्तु ते । शंकुपालसुतानां च नित्यं यानैर्व्रजंति ते ॥ ५३ ॥ कन्याः सर्वे निरीक्ष्येव मूचुराचार्य-साधकाः । अमृतं तासु सरति शंखपालसुतासु च ॥ ५४ ॥ नखाग्रात्सरते नित्यं ह्यमृतं बहुशीतलं । कामयित्वा महासेन पतंति साधकोपरि ॥ ५५ ॥ क्षणं तत्र च भाषंते संवादे सह साधकैः । सिंहासनं महादिव्यं हेमरत्नविभूषितम ॥ ५६ ॥ तत्र तिष्ठति चाचार्यः साधकैः परिवेष्टितः । अर्घ्यं पाद्यं प्रकुर्वंति तेषां ता कन्यकास्ततः ॥ ५७ ॥ करसंपुटितं कृत्वा कन्या-स्तत्र वदंति च । दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः ॥५८॥ दिव्यपुष्पाशिरोबद्धा दिव्याभरणभूषिताः । स्वागता भोमहासि-द्धाः क्षणमेकं च तिष्ठत ॥ ५९ ॥ साधु साधु महाप्राज्ञा दर्शनं वोत्र दुर्लभम् । कन्यका उचुः । स्वागता सुवना-

प्राप्त होती भई ॥ ५२ ॥ वे कन्या जो नित्य सवारी में चलती थीं आचार्य सहित साधक लोग उन कन्यों के लिए विचार करने लगे ॥ ५३ ॥ उन कन्याओं को आचार्य सहित साधक बोले उन कन्यों के शरीर में अमृत बहता था उनोंने उन साधकों पर अमृत का छिडकाव किया ॥ ५४ ॥ बड़ा शीतल अमृत उनके नखों के अग्रभाग से फैला तब वे इच्छाकर उनसाधकों पर कामुक भई ॥ ५५ ॥ क्षणभर उन साधकों के साथ संभाषण किया वहां एक सुवर्ण का दिव्य सिंहासन रत्नखचित था ॥ ५६ ॥ तहां आचार्य उन साधकों क सहित युक्त हुआ वे कन्या अर्घ्यपाद्यादिकों से उनका पूजन करती भई ॥ ५७ ॥ कन्या हाथ जोड दिव्य वस्त्रों को धारण करती हुई दिव्य गंधों को धारण करती हुई बोलीं ॥ ५८ ॥ वे कन्या फिर कैसी थीं दिव्य पुष्प शिर में धारण किए और दिव्य आभरणों को धारण किए उन साधकों को स्वागतकर बोली कि हे सिद्धों आप लोग क्षणभर रहिए ॥ ५९ ॥ हे विद्वान लोगों अच्छा २ आप लोगों का दर्शन मिलना बडा दुर्लभ है ऐसा वे कन्या

त्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते ॥ ६० ॥ एतद्ब्रूहि महाचार्य साधकैः परिवेष्टित। सिद्धा ऊचुः। कथयामि महायक्ष्यः शृणुतेदं वचो मम ॥ ६१ ॥ आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये। कन्यका ऊचुः। पितास्माकं गतः सिद्धा वाटिकां पुष्पकारणात् ॥ ६२ ॥ क्षणार्धं स्थीयतां तावद्यावत्तातो न चाव्रजेत्। यावद्वदंति ताः कन्या शंखपालः समागतः ६३ जटामुकुटधारी च दिव्यदेहश्च मूर्त्तिमान्। दिव्यवस्त्रपरीधानो दिव्यगंधानुलेपनः ॥ ६४ ॥ दिव्यपुष्पशिरोबद्धो रूपवांश्च महानृपः। महाराजेन तेनाथ दृष्टा वै पंच साधकाः ॥ ६५ ॥ हृष्टपुष्टस्ततो भूत्वा राजा तानवदत्तदा। साधकानां मुखं दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ६६ ॥ अद्य मे सफलं जन्म चाद्य मे सफलं तपः। अद्य मे सफलं राज्यमद्य मे सफलाः क्रियाः ॥ ६७ ॥ पुष्पकांडं ततस्त्यक्त्वा राजा तानभ्यवोचत। शंख

बोलीं आप कहां से आए और कहां को जाते हैं ॥ ६० ॥ हे आचार्य यह सब वृत्तांत कहिए। सिद्ध लोग बोले। हे यक्षिणिओ सुनिए हम बोलते हैं ॥ ६१ ॥ हम मृत्युलोक से आए हैं और शंकर के स्थान को जाते हैं तब कन्या बोलीं। हे सिद्धों। हमारा पिता पुष्प लेने बागीचे को गया है ॥ ६२ ॥ जब तक हमारा पिता नहीं आया तब तक आधाक्षण ठहरिए इतने में उनका पिता शंखपाल आगया ॥ ६३ ॥ जटामुकुट को धारण किये दिव्य देहवाला दिव्यगंध दिव्यवस्त्र पहिना ॥ ६४ ॥ दिव्य पुष्प शिर में धारण किए बड़ा रूपवान् राजा शंखपाल ने उन पांच साधकों को देखा ॥ ६५ ॥ बड़ा प्रसन्न हो शंखपाल बोला और उनसाधकों के मुख देख पापों से छूट गया ॥ ६६ ॥ बोला आज मेरा जन्म सफल भया तप सफल भया राज्य और सब क्रिया सफल हुई ॥ ६७ ॥ राजा ने उन पुष्पों को छोड उनसे बोला तब उन पुष्पों को

पाल उवाच । पुष्पाणि शिवपूजायां समर्प्य च शिवालये । कृतांजलिपुटो भूत्वा साधकांश्चनमस्यति ॥ ६९ ॥ क्वा गता भुवनात्सिद्धाः क्व स्थाने चैव गम्यते ॥७०॥ साधक उवाच । कथयामि महाराज शृणु मे वचनं शुभम् । आगता मृत्युलोकाच्च गतव्यं शंकरालये ॥ ७१ ॥ राजोवाच । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये बहुकन्यासमाकुले । पश्याचार्य इमाः कन्याः सर्वालंकारभूषिताः ॥ ७२ ॥ स्तनौ तालफलाकारौ सर्वास्ता मदाविह्वलाः । तिष्ठंति पंचलक्षा वै कन्यकाश्च ममालये ॥७३॥ क्रीडन्तु कन्यकाः सार्द्धमाचार्य साधकैरिह । भुंजते विपुलान्भोगान् साधकाश्च महारथाः ॥ ७४ ॥ साधक उवाच । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये कति वर्षाणि जीवति । पश्चाच्च कां गतिं गच्छेदिति नो वद सत्वरम् ॥ ७५ ॥ शंखपाल उवाच । सहस्रत्रयकन्यानां दीयते च पृथक् पृथक् । संवत्सरसहस्रं च ह्यायुरत्र विधीयते ॥ ७६ ॥ भुक्त्वा च विपुलान्भोगान् मृत्युलोके हि

शंकर की पूजा में शिवालय में अर्पण कर हाथ जोड़ उन साधकों को नमस्कार किया ॥ ६९ ॥ और बोला हे सिद्धों आपका आना कहां से भया और कहां जाते हैं तब साधक बोला हे महाराज सुनिए हम लोग मृत्युलोक से आये हैं और शिव भगवान् के स्थान को जाते हैं ॥ ७१ ॥ राजा बोला । इस सुन्दर नगर में बहुत कन्या हैं हे आचार्य देखिए यह कन्या सब अलंकारों से अलंकृत हैं ॥ ७२ ॥ यह कन्या मद से विह्वल हैं स्तनमंडल इन्के ताल फल के आकार के हैं यह मेरे घर में सब पांच लाख हैं ॥ ७३ ॥ इनके साथ बडे ऐश्वर्य को भोगो और आचार्य सहित तुम साधक लोग क्रीडा करो ॥ ७४ ॥ साधक बोला इस नगर में रहने वाला कितने वर्ष जीता रहता और पीछे किस गति को जाता यह शीघ्र कहो ॥ ७५ ॥ शंखपाल बोला । तीन हजार कन्या तुमको देते हैं यहां हजार वर्ष की आयु विधान है ॥ ७६ ॥ यहां बड़े

गम्यते। सर्वकामैः समृद्धे च जायंते विपुले कुले ॥ ७७ ॥
सर्वे गुणगणोपेताः राजानोऽपि भविष्यथ। चंद्रास्याश्च स्त्रियः
प्राप्या भुंक्ते भोगान्यथेप्सितान् ॥ ७८॥ धन्या माता पिता
धन्यो धन्यो देशो नृपस्तथा। धन्यो ग्रामः पुरी धन्या चोत्प-
न्ना यत्र साधकाः ॥ ७९ ॥ उत्थिता गमने सिद्धास्त्वरंत च
महापथं। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा पुनश्चिंतंति साधकाः॥ ८० ॥
साधका ऊचुः । आचार्यवदनं पश्य प्रत्यक्षं चैव दृश्यते। कि-
मत्र पांडुगात्राणि कन्यानां च महामुने ॥८१॥ राजोवाच ।
केतकीनां सुगंधेन लिप्तास्ताः पद्मरेणुभिः । आनन्देनोच्चकैः
कन्याः पद्मानां धुलिलेपनात् ॥८२॥ कामरागप्रपन्नाश्च तेन
पांडुरतां गताः। अत्र स्थाने महावारी भुंजंतु विपुलां श्रियम्
॥ ८३ ॥ साधकाऊचुः। शंखपाल महाराज गंतव्यं शंक-
रालये। तेषां तद्वचनं श्रुत्वा भूयो वचनमब्रवीत् ॥ ८४ ॥

भोगों को भोगकर फिर मृत्युलोक में जाकर बड़े संपन्न कुल में जन्म लेते हैं ॥ ७७ ॥ और संपूर्ण गुणों से युक्त होके राजे भी हो जाओ चंद्रमा के समान मुखवाली स्त्रियों को पामन की इच्छानुकूल भोगो ॥ ७८ ॥ धन्य माता पिता देश और राजा और ग्राम जहां साधक उत्पन्न भये ॥ ७९ ॥ इतने में वे साधक लोग तहां से महापथ को चलने को तयार हुए फिर उनके कहेको सुन साधक लोग चिंता करने लगे ॥८०॥ साधक बोले कि इन कन्याओं के ऐसे गौर वदन क्यों हैं ॥ ८१ ॥ राजा बोला। यह कन्या केतकी पुष्पों के सुगंधों से और कमलों के रेणुओं से लिप्त और कमलों के धुलि से भी लिप्त हैं ॥ ८२ ॥ और काम राग भी प्राप्त है इस कारण इनमें धवलता है हे वीरों आप यहां रहके इनके साथ बड़ी संपत्ति को भोगो ॥ ८३ ॥ साधक बोले हे शंखपाल राजा हम तो शंकर के स्थान को जावे हैं यह सुन फिर

राजोवाच । कथं भूयो न रोचंते कथं चैवात्र आगताः । मृत्युलोके महाभोगान् कथमेतान् ब्रवीमि वः ॥ ८५ ॥ नानाभोगान्परित्यज्य मृत्युलोकादिहागताः । नार्यश्च विविधाश्चापि त्यक्त्वा यौवनगर्विताः ॥ ८६ ॥ मृत्युलोके महाभोगान् कथयामि ततः शृणु । शालिमुद्गघृतं क्षौद्रं पयोऽन्नं गुडशर्करा ॥८७॥ चंदनादिमहाभोगा केतकीराजचंपकाः । जातयः शतपत्राणि बकुलाः पाटलैः सह ॥ ८८ ॥ मृत्युलोके महापीडा वायुवेगास्तुरंगमाः । गजो रथः सुखं चेति पूर्णचंद्रमुखास्त्रियः ॥ ८९ ॥ मृगाक्ष्यो हंसगामिन्यः कुंडलाभरणोज्ज्वलाः । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरमेखलाः ॥ ९० ॥ संपूर्णनागलतिकाः कर्पूरेण समन्विताः । इच्छाभोगाश्च सर्वेऽपी मृत्युलोके च साधकाः ॥९१॥ नानाफलसमाकीर्णो नानापुष्पसमाश्रितः । कदलीफलसंयुक्तो नारिकेलैश्च चूतकैः ९२

बोला ॥ ८४ ॥ राजा बोला कैसे आप लोग यहां आए मेरा कहा क्यों तुमारे मन में नहीं आता मृत्युलोक में जो जैसे भोग हैं तुमको कहता हूं ॥ ८५ ॥ नाना भोगों को छोडकर मृत्युलोक से यहां आये हो तहां नाना प्रकार की स्त्रियां जो अपनी जवानी के गर्व से गर्वित हैं उनको छोड आये हो ॥ ८६ ॥ मृत्युलोक में बडे जो भोग हैं मै कहता हूं सुनो चावल मूंग घी शहद दूध गुड शक्कर और अन्न ॥ ८७ ॥ जातीफल शतपत्र बकुल पाटलों सहित केतकी राजचंपक और चन्दनादि महा भोग हैं ॥ ८८ ॥ और मृत्युलोक में वायुवेगवाले घोडे हाथी रथ और पूर्णचन्द्रमा के समान मुखवाली स्त्री इत्यादि सुख हैं ॥ ८९ ॥ स्त्री कैसी हैं हंस के समान चलनेवाली और नाना आभरण कुंडलों से उज्ज्वल हाथों में कंकण पहने बाजूबंद मेखला हारों से सुशोभित हैं ॥ ९० ॥ तांबूल को चाबती और कपूर से युक्त ये सब इच्छाभोग मृत्युलोक में हैं ॥ ९१ ॥ मृत्युलोक नाना फलों से युक्त नाना पुष्पों से भरा

नानावृक्षसमाकीर्णो नानापक्षिसमाकुलः । मृत्युलोके महाचार्य साधनैः परिवेष्टितः ॥ ९३ ॥ भुंजतां साधकाः सर्वे स्वर्गतुल्यो न संशयः । भुक्त्वा च विपुलान्भोगान्क्रीडंतश्च यथा सुखम् ॥ ९४ ॥ साधका ऊचुः । मृत्युलोके महादुःखं कथयामि ततः शृणु । मातृपितृसुतानां च बांधवानां तथैव च ॥ ९५ ॥ वियोगेन महादुःखं तस्मात्स्थातुं न शक्यते । गर्भवासभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् ॥ ९६ ॥ संसारः स्वप्नमात्रश्च चलाः प्राणा धनं तथा । चिन्ता बहुतरा तत्र क्षुधा तत्र पुनः पुनः ॥ ९७ ॥ एवं दुःखभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् । एवं दुःखे महादुःखं मृत्युलोके व्यवस्थितम् ॥ ॥ ९८ ॥ कथयामि पुनर्दुःखं शृणु तत्तन्महानृप । अष्टोत्तरशतं देहं व्याधयः पीडयंति हि ॥ ९९ ॥ सागरश्च जलैस्तद्वत्संसारो दुःखपूरितः । सुखं तत्र न पश्यामि दुःखं तत्र दिने

कदली फल नारिकेल आम्रफलों से युक्त ॥ ९२ ॥ हे आचार्य फिर कैसा है नाना वृक्ष नाना पक्षि और अनेक साधनों से युक्त है ॥ ९३ ॥ हे साधकों मृत्युलोक स्वर्ग के तुल्य है भोगिए अपनी इच्छानुकूल सुख भोगकर क्रीडा करो ॥ ९४ ॥ साधक बोले मृत्युलोक में बड़ा दुःख है जिनको मैं कहता हूं सुनो माता पिता बन्धुओं के ॥ ९५ ॥ वियोग से बडा दुःख होता है तिस कारण तहां रहना अशक्य है ऐसे दुःख और गर्भवास के भय से हे राजन ! हम लोग यहां आये हैं ॥ ९६ ॥ संसार स्वप्नमात्र है प्राण धन सब चलायमान है और तहां अनेक प्रकार की चिंता हैं क्षुधा वारंवार दुःख देती है ॥ ९७ ॥ इस प्रकार दुःखों से डरते हुए हे राजन ! हम लोग यहां आये हैं दुःखरूप मृत्युलोक में बड़ा दुःख है ॥ ९८ ॥ हे राजन् ! मृत्युलोक में जो दुःख है फिर कहता हूं सुनो एक सौ आठ जो रोग हैं वे बडी पीडा देते हैं ॥९९॥ जैसा जल से समुद्र भरा होता है वैसा संसार दुःख से भरा है तहां सुख नहीं

दिने ॥ १०० ॥ तत्रैव विपुलान्भोगानायुर्हीनांश्च मानवान् । इंद्रजालमयं दृष्ट्वा संसारं सरितो यथा ॥ १०१॥ महादुःखं नृपश्रेष्ठ मया दृष्टं पुनः पुनः । मृत्युलोके महादुःखं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ १०२ ॥ अल्पं सुखं च संसारे पुनर्दुःखं गता वयम् । प्रथमं गर्भमध्ये हि उर्ध्वपादमधोमुखम् ॥१०३॥ द्वितीयं जन्मकाले च महादुःखं प्रवर्तते । तृतीयं यौवने दुःखं कामांधामद विह्वलाः॥१०४॥पश्चा।दुःखं महादुःखजर्जरीकृतदेहिनाम् । तत्र संकुचितं गात्रं जरया पांडुरं वपुः ॥ १०५ ॥ पुत्रदारा स्तथा बन्धुर्नैव कुर्वंति किंचन । नासानेत्रजलस्रावामुखे लाला च जायते ॥ १०६ ॥ अभ्रमध्ये च पश्यंति चंचलां विद्युतां गतिम् । क्षणं दृष्टा च नश्यंति तथा संसारिणो जनाः ॥ ॥ १०७ ॥ तस्मिन्काले महादुःखं पश्चाद्रूपं विनश्यति । एवं

देखता हूं दिन २ केवल दुःखमात्र है ॥ १०० ॥ तहां बडे भी भोग हों मनुष्य अल्पायु होते हैं संसार इन्द्रजालमय है जैसी कि इन्द्रजाल नदी हो ॥ १०१ ॥ हे राजन्! मृत्युलोक में मैंने तरह २ के बड़े दुःख देखे हैं मैं सत्य २ बोलता हूं ॥ १०२ ॥ संसार में सुख बहुत कम है और दुःख बहुत बड़े हैं पहले गर्भवास है उसमें शिर नीचे पांव ऊपर होते ॥ १०३ ॥ दूरा दुःख जन्म के समय में है फिर युवावस्था में काम से अंधे मद से विह्वल होते हैं ॥ १०४ ॥ पीछे वृद्धावस्था में शरीर जर्जरीभूत होता है शरीर घट के संकुचित हो शरीर के रोम सुफेद होते हैं ॥ १०५ ॥ स्त्री पुत्र भाई बंधु उस काल में कोई उसकी सेवा नहीं करता है नासिका नेत्रों से पानी बहता है मुख से लाल गिरता है ॥ १०६ ॥ जैसी बादल के बीच में चलायमान बिजली की गति है थोडी दीखती फिर नष्ट हो जाती वैसी गति संसारी जीवों की है ॥ १०७ ॥ तिस समय में बडा कष्ट होता है अंत में रूप भी नष्ट

दुःखभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् ॥१०८॥ अहं ते कथयिष्यामि पुनर्दुःखं महानृप । शंखपाल महाराज श्रूयतां वचनं मम ॥ १०९ ॥ यथा हि कूपमध्ये च घटमाला भ्रमंति च । गमागमौ हि पश्यामि तद्वत्संसारिणो जनाः ॥ ११० ॥ जले च बुद्बुदो यद्वत्तद्वत्संसारिणो जनाः । मया दृष्टा महाराज सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥१११॥ स्वकर्मणा समायुक्ताः पुनर्गर्भे पतंति च । तेन दुःखभयाद्भीताः श्रूयतां वचनं मम ॥ ११२ ॥ गिरेश्च शिखरे यद्वन्निर्मलं वर्षते जलम् । मोघं चैव हि तत्तोयं तथा संसारिणो जनाः ॥ ११३ ॥ लोचने च महाराज निमेषपरिपूरिते । मया दृष्टा महाराज तद्वत्संसारिणो जनाः ॥ ११४ ॥ चपलं सर्वसंसारमहं दृष्ट्वा पुनः पुनः । एवं दुःखभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् ॥ ११५ ॥ संसारस्य महाघोरैर्महादुःखैः प्रपीडिताः ।

होजाता है इस दुःख के भय से हम लोग यहां आए हैं ॥ १०८ ॥ हे शंखपाल राजा फिर भी सुनिए दुःख को कहता हूं मेरे वचन को सुनो ॥ १०९॥ जैसा कि कूँए के बीच में जल के लिये कई घडे पडके उनका समागम होता है और निकलते हैं वैसी ही संसारी जनों की गति है ॥ ११० ॥ पानी में जैसे बुद्बुद उठते हैं वैसे संसारी जन हैं हे महाराज मैने अच्छी तरह देखलिया सत्य २ बोलता हूं ॥ १११ ॥ अपने प्रारब्ध कर्म वश से फिर गर्भवास लेते तिस दुःख से भयभीत होते हुए हम आए हैं मेरे वचन को सुनो ॥ ११२ ॥ पर्वतशृंग में जैसा निर्मल जल वर्षता है वह जल निरर्थक है वैसे ही संसारी जन हैं ॥ ११३ ॥ हे महाराज नेत्र के जैसे पलक संसारी जीव हैं ॥ ११४॥ संसार चंचल है ऐसा वारंवार देख इस भय से डरते हुए हम लोग यहां आये हैं ॥ ११५ ॥ संसार के दुःखों से पीडित संसारी लोग हैं ॥ ११६ ॥

महाकष्टं श्रिता राजंस्तस्मात्संसारिणो जनाः ॥११६॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजा वचनमब्रवीत् । राजोवाच । मंदिरं मम द्रष्टव्यं यथेच्छसि तथा कुरु॥११७॥शंखपालेन सहिता गतास्ते नृपमंदिरम् । आचार्यसहिताःकन्या वदंति च परस्परम्॥११८॥ सिद्धा ऊचुः।कमाता कपिता वोद्य भ्रातरोवःक्व प्रियाःकामिन्यो ब्रूत तत्सर्वं यत्पृच्छामो वयं च वः ॥११९॥ कन्यका ऊचुः । वयं च कथयिष्यामो मद्वचः शृणुतादरात् । शंखपालसुताः सिद्धाः दोलिते दोलितास्तथा ॥ १२० ॥ कथयिष्यामहे वो वै शृणुतेमानिवचांसि नः । शंखपालसुता एता बलाढ्या मदविह्वलाः ॥ १२१ ॥ सिद्धा ऊचुः । कामिन्यस्तत्वतो वाक्यं शृणुत ब्रूमहे वयम् । शंखपालस्य राजर्षेः कथ्यंते कति पुत्रिकाः ॥ १२२ ॥ कन्यका ऊचुः । पंचलक्षैकपुत्रीणां सप्तलक्षैकपुत्रकाः । अर्धलक्षैकनारीणामेवं सिद्धा कुटुंबता ॥ १२३ ॥ सिद्धा ऊचुः । रथाश्च कति तिष्ठंति कति संति तुरंगमाः । ग-

राजा साधक के वचन को सुन बोला मेरे घर को देख लीजिए फिर जैसी इच्छा हो वैसा कीजिए ॥ ११७ ॥ तब शंखपालसहित साधक उनके घर को गए शंखपाल की कन्या आपस में बोलीं ॥ ११८ ॥ सिद्ध लोग बोले । कि हे कन्याओं तुमारे माता पिता भाई और प्रिय कहां हैं जो हम पूछते हैं सो कहो ॥ ११९ ॥ कन्या बोलीं । हम कहतीं हैं सुनो हम शंखपाल की पुत्री हैं और दोलों में झूलनेवाली हैं ॥ १२० ॥ हम कहतीं हैं हमारे वचन को सुनो हम मद से विह्वल बडी बलवती शंखपाल की पुत्री हैं ॥ १२१ ॥ सिद्ध बोले । हे कामिनिओं हमारे तत्व वाक्य को सुनो शंखपाल राजा की कितनी कन्या हैं ॥ १२२ ॥ कन्या बोलीं । पांचलाख पुत्री सात लाख पुत्र और आधा लाख स्त्री हैं हे सिद्धो इतना कुटुम्ब है ॥ १२३ ॥ सिद्ध बोले रथ

जाश्च कतिं तिष्ठंति कति योधाश्च भृत्यकाः ॥१२४॥ कन्यका ऊचुः । दशकोटिगजाश्चैव षोडशकोटितुरंगमाः । त्रिंशत्कोटीरथानां च पञ्चकोटिश्च भृत्यकाः ॥१२५॥ सिद्धा ऊचुः । रोचते नात्र वै स्थाने वासो नो मृगलोचनाः । अनेकव्यसनोपेते नानाभोगसमाकुले । नानाविचित्रचित्राढ्ये नानावस्त्रसुवासिते ॥ १२६ ॥ मृत्युलोके यदि पुनर्गन्तव्यं च महानृप । अस्मभ्यं रोचते नेदं यदि भोगा अनेकधाः ॥ १२७॥ राजोवाच । न रोचंते यदा भोगा रोचंते न च कन्यकाः। गच्छ गच्छ महामार्गं साधकैः परिवेष्टितः ॥१२८॥ अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः । अद्य मे सफलं राज्यं मया दृष्टाश्च साधकाः ॥ १२९ ॥ अद्य मे सफलं कर्म चाद्य मे सफलाः क्रियाः। अद्य मे सफला सेवा मया दृष्टाश्च साधकाः ॥ १३० ॥ अद्य मे सफला भूमिरद्य मे सर्वसाधनम् । तत्रैवं साधकाः

कितने हैं घोड़े कितने हैं हाथी कितने हैं और योधा लोग कितने हैं ॥१२४॥ कन्या बोली । दश करोड हाथी हैं सोलह करोड घोडे हैं तीन करोड रथ हैं पञ्चकरोड दास हैं ॥ १२५ ॥ सिद्धबोले हे कन्याओ इस स्थान में हमारी रुचि रहने की नहीं क्योंकि यहां नाना भोग नाना वस्त्र नाना चित्र विचित्र नाना दुःखों से आकुल हैं ॥ १२६ ॥ हे राजन् यहांसे फिर मृत्युलोक में जाना पड़ता है यहां भोग भी अनेक हैं यह स्थान हमको नहीं रुचता है ॥ १२७ ॥ राजा बोला आपको यह भोग यदि न रुचते और कन्या में रुचि नहीं तो हे आचार्य साधकोंसहित महापंथ को चलेजाओ ॥ १२८ ॥ आप लोगों के दर्शन से आज मेरा जन्म तप राज्य सुफल भया ॥१२९॥ आज साधकों के दर्शन से मेरे कर्म क्रिया सेवा सब सुफल भई ॥ १३० ॥ आज यह मेरी भूमि सफल हुई और साधन भी सब सफल हुए इतने में साधक लोग उत्तर दिशा को गए

सर्वे गतास्ते चोत्तरां दिशम् ॥ १३१ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम सप्तदशः पटलः ॥ १७ ॥

ईश्वरउवाच । तस्मात् ते साधकाः सर्वे गताश्चैवोत्तरामुखम् । अग्रातो दृश्यते तत्र ह्यप्रमादो महागिरिः ॥ १ ॥ अप्रमादपुरो दृश्यो ज्ञानाह्वः पर्वतोत्तमः । पर्वतद्वयमध्ये च क्षीराद्रिसदृशप्रभः ॥ २ ॥ अप्रमादस्य सोपानो हेमरत्नविभूषितः । तदा तेनैव मार्गेण गंतव्यं साधकैः सह ॥ ३ ॥ तस्य शृंगे पुरारम्या अतिदिव्या मनोरमाः । शतयोजनविस्तीर्णा बालार्कसदृशप्रभाः ॥ ४ ॥ प्रतोलीद्वारसंयुक्ता हेमप्राकारवेष्टिताः । तत्र गच्छंति मार्गे च साधकाः सत्वरं ततः ॥ ५ ॥ प्रासादगृहसंकीर्णास्तरणैरुपशोभिताः । हेम्ना विरचिता भूम्यो वन्हिज्वालासमप्रभाः ॥ ६ ॥ पुष्पप्रकरसंपूर्ण

॥ १३१ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम सप्तदशः पटलः ॥

भगवान् बोले । वे सब साधकलोग वहांसे उत्तरमुख हो चले तहां आगे अप्रमादपर्वत दीखता है ॥ १ ॥ अप्रमादपर्वत और ज्ञाननामा पर्वत भी दूसरा दृष्ट आया इनके बीच में बड़ा क्षीरसागर जैसा था ॥ २ ॥ अप्रमाद पर्वत की सीढ़ी सुवर्ण की बनीहुई रत्नों से जड़ित थी उसी राह से साधक लोग गए ॥ ३ ॥ उस पर्वत के शिखर में बड़ी मनोहर सौ योजन विस्तीर्ण और बाल सूर्य के सदृश ॥ ४ ॥ प्रतोली और द्वार से संयुक्त और सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित नगरी देख साधक शीघ्र चले गए ॥ ५ ॥ प्रासाद महलों से संकीर्ण और नाना विस्तरों से शोभायमान और सुवर्ण से बनी भूमि अग्नि की शिखा के समान प्रभावाली ॥ ६ ॥ पुष्पों के समूह से युक्त नाना चित्रों से शोभायमान

चित्रकर्मोपशोभितम्। अर्धयोजनविस्तीर्णं मंदिरे तत्र मंडपम् ॥ ७ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि रत्नैश्च जडितानि च। तत्र तिष्ठति राजेन्द्रः श्रुतपालो महानृपः ॥ ८ ॥ सर्वलक्षणसंपूर्णो महाबलपराक्रमः। दीप्तदेहा महाकन्या दिव्याभरणभूषिताः॥९॥ दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः। संपूर्णचंद्रवदनाः सर्वालंकारभूषिताः ॥ १० ॥ साधकाश्च गतास्तत्र दृष्टा वै नृपमंदिरे साधकैः सह चाचार्यमालिंगति परस्परम् ॥ ११॥ राजोवाच। आगता भवनात्कस्मात् क्व स्थाने चैव गच्छत। सत्यं ब्रूत महासिद्धा ममाग्रे कार्यविस्तरम् ॥ १२ ॥ सिद्धा ऊचुः। शृणु राजन् महद्वाक्यं वृत्तान्तः कथयिष्यते। आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यः शंकरालयः॥ १३॥ राजोवाच। पृथिव्यां तु रुचिर्नैव किमर्थं चागतः प्रभो। सत्यं ब्रूहि महाचार्य साधकैः परिवेष्टितः ॥ १४ ॥ सिद्ध उवाच। संसारः स्वप्नशदृशो ह्यपारो

आधा योजन चौड़ा तहां एक मंडप था ॥ ७ ॥ तहां दिव्य सिंहासन रत्नों से जड़ित थे तहां श्रुतपाल नामा राजा रहता था॥८॥ वह बड़ा बली पराक्रमी सर्वलक्षणसंपन्न था और दिव्य आभरणों से भूषित दिव्य देहवाली कन्या भी थीं ॥ ९ ॥ वे दिव्यवस्त्रों को पहने दिव्य गंध को धारणकिए संपूर्ण अलंकारों से भूषित पूर्णचंद्रमा के समान मुखवाली थीं ॥ १० ॥ साधकलोग तहां पहुंचे और राजा के घर में उन कन्यों को देखा वे कन्या आचार्यसहित साधकों को आलिंगन करती भई ॥ ११ ॥ राजा बोला। हे सिद्धलोगों आपका आना कहां से भया और कहां जाते हैं मेरे आगे सच २ कहिए ॥ १२ ॥ सिद्धलोग बोले। हे राजन् सुनिये हम वृत्तान्त कहते हैं हम मृत्युलोक से आये शंकरालय को जाते हैं ॥ १३ ॥ राजा बोला। पृथिवी में तुमारी रुचि क्यों नहीं यहां किस कारण आए सत्य २ कहिए॥ १४ ॥ सिद्ध बोला। संसार स्वप्न-

दुःखसागरः । महादुःखतरो राजञ्छोकचिंताप्रपीडितः ॥ १५॥ जननीगर्भमध्ये च महादुःखं प्रवर्त्तते । भोक्तव्यो नरको घोरो महादुःखेन पीडितैः ॥१६॥ गर्भाग्निज्वालया दग्धैर्मलज्वाला-दिभिर्नवैः । भोक्तव्यं च महादुःखमतिकष्टं प्रवर्तते ॥ १७ ॥ पश्चादुत्पद्यते भूमौ महाप्रसववेदना । काले तस्मिन्नजानांति सुखं दुःखं च ते जनाः ॥१८॥ तुच्छमायुर्मनुष्याणामर्धं गृह्णाति शर्वरी । तस्यार्धं च वियोगेन शेषं बालं च यौवनम् ॥ १९ ॥ एतद्दुःखभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् । मृत्युलोके महादुःखं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ २० ॥ इन्द्रजालं यथा स्वप्नः संसा-रश्च तथा नृप । विह्वलः सर्वसंसारो मया दृष्टः पुनः पुनः ॥ २१ ॥ मायामोहमहालोभतृष्णाव्याकुलचेतसः । कुर्वते मनुजाः कर्म दैवोपहतबुद्धयः ॥ २२ ॥ चपलः सर्वसं-सारो मया दृष्टः पुनः पुनः । चपलं च धनं तत्र चपलं तत्र

तुल्य है और अगाध समुद्र है जिसके पार होना कठिन है हे राजन् अत्यन्त दुःख का पद है इस शोक चिन्ता से पीड़ित हूं ॥ १५ ॥ माता के गर्भ में रहने पर बड़ा कष्ट है केवल नरक भोगना है दुःखों से पीड़ित रहना है ॥ १६ ॥ गर्भ की अग्नि से दग्ध हो मल से लिप्त होता हुआ प्राणी बड़े कष्ट को भोगता है ॥ १७ ॥ गर्भ से बाहर आने में प्रसव वेदना होती है उस समय में जन्तु सुख दुःख को नहीं जानता है ॥ १८ ॥ मनुष्यों की आयु बहुत अल्प है उसमें भी आधा रात्री लेलेती है कुछ वियोग में जाती है और बाकी बाल यौवन अव-स्था में चली जाती है ॥ १९ ॥ इस दुःख के भय से हमलोग यहां आये हैं हे राजन् ! मृत्युलोक में बड़ा दुःख है मैं सच २ बोलता हूं ॥ २० ॥ संसार इंद्र-जाल और स्वप्न के समान है हे राजन् ! यह संसार मैंने दुःखरूप ही बार बार देखा है ॥ २१ ॥ माया मोह लोभ तृष्णा से व्याकुलचित्त होते हुए मनुष्य अपने प्रारब्ध से हतबुद्धि होते हुए कर्म करते हैं ॥ २२ ॥ यह संसार चंचल है

यौवनं। स्वजनैर्भृत्यवर्गैश्च धनैर्हीनं च मंदिरम्॥ २३ ॥
एतत्सर्वं मया दृष्टं चपलं च महानृप। अतिकष्टं च संसारे महा-
नरकपूरिते ॥२४॥ एतद्दुःखभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम्।
पितृबंधून्परित्यज्य स्वजनानि च नैकधा ॥२५॥ पुत्रदारास्तथा
सर्वे त्यक्त्वा ह्यत्रागता वयम्। वैभवं धनराज्ये च भूमिं वैडू-
र्यमौक्तिकान्॥ २६ ॥ सर्वस्वं च मया त्यक्तं नानादेशो
महानृप। गजाश्वाश्वरथास्तत्र तिष्ठंति च गृहे मम॥ २७ ॥
उष्ट्रश्च वाहनं चैव शुभं शिबिकया सह। तिष्ठंति मंदिरे सर्वे
गंतव्यो हि शिवालयः॥ २८ ॥ सर्वमेतत्परित्यज्य राज्यं चैव
मनोरमम्। चलं सर्वं तथा दृष्ट्वा तस्मादत्रागता वयम्॥२९॥
एतद्दुःखं च संसारे श्रूयतां वचनं मम। तत्र तिष्ठति रम्यं च
यत्र देवो महेश्वरः॥ ३० ॥ तत्र स्थाने महासेन विमानेन
गता बहु। आगताश्च सुरास्तत्र विमानैश्च मनोरमैः॥३१॥

मैंने बार बार देखा धन यौवन भी चंचल है भाई बंधु नौकर चंचल हैं क्षण में घर धन से हीन हो जाता है॥ २३ ॥ हे राजन्! इतना सब मैंने खूब देखा है नरक से परिपूर्ण यह संसार केवल कष्टरूप है॥ २४ ॥ इस दुःख से त्रस्त होते हुए हमलोग यहां अपने माता पिता भाई बन्धुओं को छोड़ आये॥२५॥ स्त्री पुत्र धन राज्य ऐश्वर्य मणि रत्न और भूमि को छोड़ हम यहां आये हैं॥२६॥ हे राजन्? मेरे घर में हाथी घोडे रथ सब कुछ हैं देश भी बडा सुंदर है सर्वस्व को छोड आया॥२७॥ ऊंट अच्छे वाहन और डोला पालकी मेरे घर में हैं सब छोड शिवालय को जाता हूँ॥२८॥ सुंदरराज्य सब इतना छोड आया यह जितना है सब चलायमान देख यहां आए हैं॥२९॥ संसार में यह दुःख है मेरे बचन को सुनो जहां शंकर भगवान् हैं वहीं उत्तम मनोहर है॥३०॥ शिव भगवान् स्कंद से बोले कि उस स्थान में अच्छे सुंदर विमानों में चढ बहुत देवता आये॥३१॥ सब

आरूढाश्च सुराः सर्वे वामाश्चैव समागताः । तथैवाप्सरसो दिव्या देवगंधर्वयोषितः ॥३२॥ सुरेन्द्रसहितास्सर्वे देवाश्चैव समागताः । आगताश्च ततः सर्वा रंभाद्याः सकलाः स्त्रियः ॥ ३३ ॥ देवता दिव्यकन्याश्च सर्वभूषणभूषिताः । आगताश्च तथा सिद्धाः वाद्यंते च ह्यनेकधा ॥३४॥ इन्द्र उवाच । साधु साधु महाप्राज्ञ आचार्य साधकैः सह । विमानैश्च शतैर्वीरा शिवलोके च गच्छत ॥३५॥ अहं च प्रेषितः सिद्धा ब्रह्मविष्णुमहेश्वरैः । युष्मासु तुष्टो देवेश उमासहितशंकरः ॥३६॥ उत्थाय गम्यतां सिद्धा गंतव्यः शंकरालयः । विमानसहितास्तत्र आगताः स्युरनेकधा ॥३७॥ शंखदुंदुभिनिर्घोषैः काहलैभेरिमर्दलैः । पटहैर्वेणुवंशैश्च वादयंति ह्यनेकधा ॥ ३८ ॥ आगताश्च ततः कन्या रूपयौवनगर्विताः । संपूर्णचंद्रवदना वदंत्यः कोकिलस्वरम् ॥३९॥ मृगाक्ष्यो हंसगामिन्यः कुंडलाभरणोज्ज्वलाः । विद्युत्तेजोनिभाः सर्वा नूपुरारावसंकुलाः ॥ ४० ॥ दिव्यवस्त्र-

देवता और देवांगना दिव्य अप्सरा देव गंधर्वों की स्त्री ये विमानों में चढ आए॥३२॥ देवता लोग इंद्रसहित और रंभादिक सब स्त्री भी आईं ॥३३॥ संपूर्ण दिव्य भूषणों को पहने देवतों के साथ दिव्यकन्या सिद्धलोग आए अनेक बाजे बजने लगे ॥३४॥ इंद्र बोला अच्छा २ हे महाप्राज्ञ ? आचार्य ! साधकोंसहित विमान में बैठ शिवलोक को चलिए ॥३५॥ मैं ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ने भेजा हूं हे सिद्धो तुमपर उमासहित शंकर प्रसन्न हुए हैं ॥३६॥ हेसिद्धों ! उठिए चलिए शंकर के स्थान को चलना है विमान में बैठ अनेक देवतालोग आये हैं ॥३७॥ शंख दुंदुभि काहल मर्दल पटह वेणु वंशवाद्य आदि अनेक बाजों के शब्द हो रहे हैं ॥३८॥ रूप यौवन से गर्वित कोकिलस्वरवाली पूर्णचंद्र के समान मुखवाली कन्या आई हैं ॥३९॥ यह सब मृगनयनी हंसगामिनी कुंडलों के आभरणों से उज्वल बिजली के समान कांतिवाली और नूपुरों के शब्दों से संकुल हैं ॥४०॥ और दिव्यवस्त्र को

परीधाना दिव्यगंधविलेपनाः । शिरस्सु शोभिताः पुष्पैर्नागवल्लीविभूषिताः ॥ ४१ ॥ स्वर्णकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः । सर्वलक्षणसंपूर्णा भानुबिंबसमप्रभाः ॥ ४२ ॥ कन्यका सहिता देवा विमानारूढसंपदः । चामरैर्वीज्यमानाश्च छत्रैरुपरि शोभिताः ॥ ४३ ॥ इंद्रस्य वचनं श्रुत्वा आचार्यो वदते तदा । आचार्य उवाच । शृणु राजन्वचः शक्र एकचित्तो व्यवस्थितः । न रोचते विमानं मे सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ४४ ॥ विमाना नैव रोचंते गुरुधर्मबलेन च । अहं चात्रागतो देवालं विमानैर्न संशयः ॥ ४५ ॥ शंकरस्य प्रसादेन विमानं नैव रोचते । विमानैर्न च मे कार्यं शृणु शक्र महाप्रभो ॥ ४६ ॥ विमानं च नमस्कृत्य आचार्यः साधकैः सह । गतानि च विमानानि यत्र ब्रह्मा हरो हरिः ॥ ४७ ॥ श्रुतपाल उवाच । शृणु साधक तत्वेन मम वाक्यं तु निश्चितम् । अस्मिन् स्थाने महारम्ये भुंक्ष्व भोगान्यथेप्सितान् ॥ ४८ ॥ साधक उवाच ।

पहने दिव्यगंधों को विलेपन किए शिरों में पुष्प पहने तांबूल चाबती हुई ॥४१॥ हाथों में सुवर्ण के कंकण पहने हार बाजुबंदों से अलंकृत संपूर्ण लक्षणसंयुक्त सूर्यबिंब के समान कांतिवाली ॥४२॥ विमानों में चढी छत्रों को धारणकिए जिनके ऊपर चंवर ढुलाएजाते हैं इनके सहित सब देवता आए हैं ॥४३॥ आचार्य इन्द्र के वचन को सुन कहने लगा हेराजन्! हेइंद्र! एकचित्त हो सुन इन विमानों में मेरी रुचि नहीं है मैं सत्य २ बोलता हूं ॥४४॥ मैं अपने गुरु और धर्म के बल से यहां आया हूं बस विमानों से मेरा कोई प्रयोजन नहीं है॥४५॥ शंकर भगवान के कृपा से विमान की इच्छा नहीं है हेप्रभो! विमानों से कोई काम नहीं॥४६॥ साधकसहित आचार्य ने विमान को प्रणाम किया जहां ब्रह्मा विष्णु शिव थे विमान वहां गए ॥ ४७ ॥ श्रुतपाल बोला हे साधक ? मेरे तत्ववाक्य को सुन इस स्थान में रहके अपनी इच्छा के अनुकूल भोगों को भोग ॥ ४८ ॥

मह्यं भोगा न रोचंते राज्यं च विपुलं धनम् । यत्र स्थाने महादेव उमासहितशंकरः ॥ ४९ ॥ तत्र स्थाने महाराज गंतव्यं साधकैः सह । भोगलोभो न मे राजंल्लोभः शंकरदर्शने ॥५०॥ आगताश्च ततः कन्याः श्रुतपालस्य वै सुताः । सर्वारूढविमानाश्च गजैश्चैव रथैस्तथा ॥ ५१ ॥ रूपयौवनसंपन्नाः सर्वाभरणभूषिताः । भूतिमत्यः प्रधानाश्च कन्या लक्ष्मीसमप्रभाः ॥ ५२ ॥ सर्वा लक्षणसंयुक्ताः सकामा मदविह्वलाः । ईदृश्यश्चागताः कन्या मायिनामपि मोहिकाः ॥ ५३ ॥ कन्यका ऊचुः । अस्मिन्स्थाने वरं लब्ध्वा भुंक्ष्व भोगान्यथप्सितान् । किं करिष्यति कैलासः किं करिष्यति शंकरः ॥ ५४ ॥ देवा अस्मान्वरिष्यंति ह्युमासहितशंकरम् । किमर्थं वृण्वते सिद्धाः किमर्थं न सुखे रतिः ॥ ५५ ॥ रूपपात्रं ततः कन्याः पूर्णचंद्रनिभाननाः । दिव्यवस्त्रपरिधानाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ ५६ ॥ पंचलक्षा महासेन श्रुतपालस्य वै सुताः । दिव्य-

साधक बोला । मुझे भोग की रुचि नहीं और राज्य धन कुछ नहीं चाहिये जहां शिवपार्वती हैं ॥ ४९ ॥ उस स्थान को जाना है हेराजन् ! हमे भोग का लोभ नहीं शंकर के दर्शन का लोभ है ॥ ५० ॥ इतने के अनंतर विमानों में हाथियों मे रथों में चढ श्रुतपाल की कन्या आई ॥ ५१ ॥ यह सब रूपयौवनसंपन्न सब आभरणों से भूषित सब ऋद्धिसंपन्न साक्षात् लक्ष्मी के समान कांतिवाली ॥५२॥ और संपूर्ण लक्षणों करके युक्त कामपद से विव्हल मायावालों को भी मोहित करनेवाली ऐसी सब आई ॥५३॥ कन्या बोलीं इस स्थान में रहो मनमाने भोगों को भोगों क्या कैलास करेगा क्या शंकर करेंगे ॥५४॥ देवतालोग हमको वरेंगे उमाशंकर को क्या चाहते हे सिद्धों ! सुख में क्या प्रीति तुमारी नहीं ॥५५॥ सुंदर रूपवती पूर्णचन्द्रमा के समान मुखवाली दिव्य वस्त्र पहने

देहा महाकाया महाबलपराक्रमाः ॥ ५७ ॥ राजोवाच । अस्मिन्नेत्र पुरे रम्ये स्वर्गतुल्ये न संशयः । इच्छ यां यां च साचार्य संवरिष्यति सत्वरम् ॥ ५८ ॥ इच्छावस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः । अस्मिन्स्थाने महाभोगा ये भोगा देवदुर्लभाः ॥ ५९ ॥ आचार्य उवाच । किमत्र भोग्यमायुष्यं कति कन्याः प्रदास्यसि । पश्चाच्च का गती राजन् सत्यं कथय सुव्रत ॥६०॥ राजोवाच । कन्याः पंचसहस्राणि दीयंते च पृथक् पृथक् । संवत्सरायुतं सिद्धा आयुरत्र विधीयते ॥ ६१ ॥ भुक्त्वा च विपुलान्भोगान्मृत्युलोकं व्रजंति च । सर्वकामसमृद्धे च जायंते विमले कुले ॥ ६२ ॥ चक्रवर्त्तीमहाराजो भवेद्भूयो न संशयः । मृत्युलोकान्महाप्राज्ञ पुनरायाति चात्र वै ॥ ६३ ॥ आचार्यउवाच । मृत्युलोको यदि पुनर्गंतव्यश्च मया नृप । मृत्युलोकभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् ॥ ६४ ॥ रांचते

सब आभरणों से भूषित वे कन्या ॥५६॥ हे महासेन ! श्रुतपातल की कन्या दिव्यशरीरवाली बड़े बल पराक्रमवाली पांच लाख थीं ॥५७॥ राजा बोला स्वर्ग के समान रमणीय इस नगर में जो जो कन्या को तुम चाहो वह तुमको शीघ्र वरेगी ॥ ५८ ॥ यहां जो जो वस्त्र चाहो सो पहनो और जो गंध चाहो सो लेपन करो यहां बड़े भोग हैं जो देवतों को भी दुर्लभ हैं ॥ ५९ ॥ आचार्य बोला हेराजन् ? यहां कितनी आयुष्य भोग्य है और कितनी कन्या दोगे पीछे क्या गति होगी सच २ कहिये ॥ ६० ॥ राजा बोला पांच हजार कन्या दी जायेंगी हे सिद्धो ! यहां दश हजार वर्ष की आयु है ॥ ६१ ॥ यहां उत्तम भोगों को भोगकर मृत्युलोक में जाते हैं तहां बडे संपन्न शुद्ध कुल में जन्म होता है ॥ ६२ ॥ मृत्युलोक में जाके बडा चक्रवर्त्ती राजा होवे इसमें सन्देह नहीं हे प्राज्ञ ! फिर वहांसे यहां आता है ॥ ६३ ॥ आचार्य बोला । यदि मृत्युलोक को जाना है तो मृत्युलोक के भय से हम यहां आये हैं ॥६४॥

गर्भवासो न तस्माद्भोगा निरर्थकाः। अवश्यं तत्र गंतव्यं यत्र ब्रह्मा हरो हरिः ॥ ६५ ॥ अस्मिन्नेव पुरे रम्ये रुचिर्नैव महा-नृप। प्रत्यक्षं यत्र दृश्यंते ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ६६ ॥ अस्मि-न्स्थाने न मे कार्यं राज्यं च विपुलं नृप । मया च तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः ॥ ६७ ॥ पतिहीना च या नारी नासिका-हीनमास्यकम् । शर्वरी चंद्रहीना च रविहीनं दिनं यथा ॥६८॥ नृपहीनं यथा सैन्यं शिवहीनं पुरं तव । तस्मान्न रोचतेऽस्माकं गमिष्यामो न संशयः ॥ ६९ ॥ राजोवाच । यदा न रोचते सिद्धाः क्षणमेकं च तिष्ठत । अपूर्णता भवेत्तावद्यावद्भक्ष्यसमा-गमः ॥ ७० ॥ क्षीरं मधु दधि द्राक्षाममृतं ये पिबंति च। क्षण-मात्रं च ते धीरा मूर्च्छां गच्छंति साधकाः ॥ ७१ ॥ पश्चाच्च सा-धकाः सर्वे रुद्रतुल्यपराक्रमाः । चतुर्वेदप्रवक्तारः सर्वशास्त्र विशारदाः ॥ ७२ ॥ यदा न रोचते राज्यं देवकन्यास्तथैव

हमको गर्भवास नहीं रुचता है तिससे मृत्युलोक के भोग निरर्थक हैं जहां ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हैं हमको अवश्य वहां जाना है ॥ ६५ ॥ हे राजन् ! इस नगर में हमारी रुचि नहीं जहां प्रत्यक्ष ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हैं वहां जाएंगे ॥ ६६ । यहां हमारा कोई काम नहीं राज्य मिले चाहे बहुत धन मिले हमको वहीं जाना है जहां शंकर हैं ॥ ६७ ॥ जैसी पति से रहित स्त्री नासिका से हीन मुख चन्द्रमा से हीन रात्रि सूर्य से हीन दिन ॥ ६८ ॥ राजा से हीन सैन्य वैसा शंकर से हीन तुमारा नगर है तिससे हमको नहीं रुचता है चले जाते हैं ॥ ६९ ॥ राजा बोला हे सिद्धो ! जब तुमारी यहां रहने की इच्छा नहीं क्षणमात्र ठहरो जबतक भक्ष्य पदार्थ आते हैं ॥ ७० ॥ दही दूध मधु द्राक्षा अमृत उन साधकों ने पिया तिससे क्षणभर उनको मूर्छा प्राप्त भया ॥ ७१ ॥ पीछे मूर्छा से चैतन्य हो रुद्र के तुल्य पराक्रमी चार वेदों के वक्ता और संपूर्ण शास्त्र में निपुण हुए ॥ ७२ ॥ राजा बोला यदि तुमको राज्य में

च । गच्छ गच्छ महासत्त्व यत्र देवो महेश्वरः ॥ ७३ ॥ व्रजंति साधकाः सर्वे चोत्तरस्यां दिशि स्वयम् ॥ ७४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्त्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम अष्टादशः पटलः ॥

ईश्वरउवाच । अप्रमादस्य सोपान उत्तीर्य गम्यते ततः । अग्रतो दृश्यते तत्र चंद्रादित्यसमप्रभः ॥ १ ॥ साधकाश्च महासत्वा गतास्ते ह्युत्तरामुखम् । अप्रमादस्य सोपाने हेमरत्न-विभूषिते ॥ २ ॥ ज्वलंत्यः पद्मरागैश्च वैडूर्यमणिरश्मिभिः चंद्रकांतशिलास्तत्र भानुर्बिंबसमप्रभाः ॥ ३ ॥ महागिरि-र्महाशृंगो ह्यतिरम्यो मनोहरः । दिव्यवृक्षैर्महातेजा दृश्यते च दिशोदश ॥ ४ ॥ अप्रमादो गिरिश्रेष्ठ उत्तीर्य गम्यते ततः । अग्रतो दृश्यते तत्र क्षीरोदसागरोपमः ॥ ५ ॥ शतयोजनविस्तीर्णस्तडागो विपुलो महान् । सुवर्णपंकजा-

और देवकन्या में रुचि नहीं तो जहां शंकर हैं तहां जाओ ॥ ७३ ॥ वे सब साधक लोग उत्तर दिशा को गये ॥ ७४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम अष्टादशः पटलः ।

भगवान् शंकर बोले । अप्रमाद पर्वत को उतरकर आगे गए तो चन्द्र सूर्य के समान कांति दृष्ट आई ॥ १ ॥ बड़े पराक्रमी वे साधकलोग उत्तर-मुख हो चले तहां अप्रमादपर्वत की सीढी सुवर्ण की बनी हैं और उनमें रत्न जडे हुए हैं ॥ २ ॥ पद्मराग वैडूर्य मणियों की कांति से प्रकाशमान चंद्रकांत शिला तहां सूर्यबिंब समान कांतिवाली ॥ ३ ॥ तहां पर्वत का शृंग बडा रमणीय दिव्यवृक्षों से शोभायमान था तहांसे बडी प्रकाशवाली दशदिशा दृष्ट आई ॥ ४ ॥ अप्रमादपर्वत से उतर आगे गए तो क्षीरसमुद्र के सदृश तालाव दृष्ट आया ॥ ५ ॥ वह तालाव सौ योजन चौडा बडाभारी है सुवर्ण

कीर्णो बहुपुष्पोपशोभितः ॥ ६ ॥ कुमुदोत्पलपद्मैश्च कल्हारैरुपशोभितः । तडागो हेमसोपानैर्वेष्टितश्च दिशो दश ॥ ७ ॥ सुवर्णकर्दमस्तत्र रेणुकांचनशोभितः । इन्द्रनीलमहानीलै वैडूर्यमणिरश्मिभिः ॥ ८ ॥ तत्र वृक्षो महादिव्यो हंससारसशोभितः । तस्मिन्स्थाने महातीर्थे धर्मकर्मसमागमे ॥ ९ ॥ पितॄणामुदकं दत्वा पिंडदानं तथैव च । श्राद्धं कृत्वा विधानेन ते च पंच पृथक् पृथक् ॥ १० ॥ अथ श्राद्धमंत्रः ॥ ॐ हुं हुं क्षु क्षुं रुं रुं हुं हुं ॐ एकोत्तरशतं चैव पितृवंशं समुद्धरेत् । मातृपक्षेण संयुक्तं श्वश्रूपक्षं समुद्धरेत् ॥ ११ ॥ कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च । अत्र श्राद्धप्रभावेण पितृभ्यश्चाक्षया गतिः ॥ १२ ॥ साधकाः सह पित्रा च जल्पंति च परस्परम् । प्रत्यक्षं तत्र दृश्यंते पितरोऽपि वदंति च ॥ १३ ॥ प्रसादात्तव भोपुत्र ह्यक्षया च गतिर्मम । तेन पुण्यप्रभावेण निर्विघ्नो भव

के कमलों से भरा और नाना पुष्पों से शोभित ॥ ६ ॥ कुमुद कमल कल्हार पुष्पों से शोभायमान उस तालाब के चारों ओर सुवर्ण की सीढी लगी हैं ॥ ७ ॥ सुवर्ण का कीचड़ और सुवर्ण की धूलि से शोभायमान और इन्द्रनील महानील वैडूर्य मणियों के किरणों से प्रकाशमान ॥ ८ ॥ तहां एक बडा दिव्य वृक्ष है जो हंस सारस पक्षियों से शोभित है उस स्थान में बडा तीर्थ है तहां धर्म कर्म का समागम रहता है ॥ ९ ॥ तहां पितरों को तिलतर्पण पूर्वक श्राद्ध पिंडदान विधान करके पांच देवतों को पृथक् २ स्थापन करे ॥ १० ॥ श्राद्ध का यह मंत्र है इस मंत्र से श्राद्ध करने से एकसौ एक पिता के वंश के और इतने ही माता के वंश के और सास के वंश के पितरों का उद्धार होता है ॥ ११ ॥ हजार करोड़ कल्प सौ करोड़ कल्प पर्यंत पितरों की अक्षय गति यहां श्राद्ध करने से होती है ॥ १२ ॥ तहां महापंथ जानेवाले साधकों के श्राद्ध करने से उनके पितर प्रत्यक्ष हो परस्पर भाषण करते हैं ॥ १३ ॥ कहते हैं कि हे

पुत्रक ॥ १४ ॥ ब्रह्मणा स्थापितं लिंगं मध्ये पूर्वं महात्मनाम् । शंखमुक्ताप्रवालैश्च हंससारसशोभितः ॥ १५ ॥ चक्रवाकयुगोपेतो मत्स्यकूर्मैश्च संश्रितः । कर्पूरगंधवत्तोयाऽमृतस्वादुसुशीतलः ॥ १६ ॥ दुग्धं दधि घृतं क्षौद्रममृतं खंडशर्कराः । एतैस्तु पूरितो नित्यं क्षीरोदसागरोपमः ॥ १७ ॥ सहस्रस्तंभविन्यस्तः प्रासादश्चित्रवेष्टितः । ध्वजमालाकुलो दिव्यश्चित्रकर्मोपशोभितः ॥ १८ ॥ गयाकोटिगुणं पुण्यं तत्पुण्यं क्षीरसागरे । प्रत्यक्षं तत्र दृश्यंते पितरोपि वदंति च ॥ १९ ॥ साधकाश्च गतास्तत्र सर्वे ते विस्मयं गताः । स्तुतिं कुर्वंति देवस्य साधकाश्च पृथक् पृथक् ॥ २० ॥ अप्सरो यक्षगंधर्वा अर्चयंति ह्यनेकधा । भेरीमृदंगशब्देन शंखतूर्यरवेण च ॥ २१ ॥ पटहैर्घोषशृंगैश्च मंजीरैस्तालनादितैः । गीतं कुर्वंति गंधर्वा वीणा रणति सुंदरी ॥ २२ ॥ विलिंपंति

पुत्र तुमारी दया से मेरी अक्षय गति हुई इस पुण्य के प्रभाव से तुमको निर्विघ्न होवे ॥ १४ ॥ वहांपर ब्रह्मा ने शिवलिंग स्थापन कर रखा है शंख मोती प्रवाल हंस सारस से शोभायमान ॥ १५ ॥ और चक्रवाक पक्षियों के युगलों से युक्त मत्स्य कूर्मों से युक्त अमृत के समान स्वादिष्ट शीतल कर्पूरगंधवाला जिसमें जल है ॥ १६ ॥ दहि दूध घी शहद अमृत शर्करों से भरा हुआ क्षीरसमुद्र के सदृश है ॥ १७ ॥ सहस्रखंभवाला चित्रों से वेष्टित ध्वजाओं की मालाओं से युक्त दिव्य एक मंदिर है ॥ १८ ॥ गया से करोड़ गुणा पुण्य उस क्षीरसागर में है जहां प्रत्यक्ष पितर दीखते हैं और भाषण करते हैं ॥ १९ ॥ साधकलोग तहां पहुंचे देख कर विस्मय को प्राप्त हुए पृथक् पृथक् देवतों की स्तुति करने लगे ॥ २० ॥ अप्सरा यक्ष गंधर्व अनेक प्रकार पूजन कर रहे थे और शंख मृदंग भेरी तूर्यों के शब्द हो रहे थे ॥ २१ ॥ पटहवाद्य शृंगवाद्य मंजीरों के तालों से शब्दों से गंधर्वलोग गीत गाय रहे थे और गंधर्वों की स्त्री वीणा बजा रही थीं ॥ २२ ॥ सब शिवलिंग को कर्पूर अगरु चंदनों से लेप रहे थे हे महासेन ?

च ते लिंगं कर्पूरागरुचंदनैः । भवभक्त्या महासेन नमस्कृत्य पृथक् पृथक् ॥ २३ ॥ अर्धरात्रे च ते देवं स्तुतिं कृत्वा पुनः पुनः । अप्सरोगणगंधर्वा अर्चयंतिह्यनेकधा ॥ २४ ॥ नाना प्रकारभक्त्याच नानापूजा व्यवस्थया सुवर्णपंकजैस्तत्रपूजयंति सदाशिवम् ॥ २५ ॥ आरार्त्तिकं प्रकुर्वंति लिंगस्याग्रे निरंतरम् । सरसः पश्चिमे भागे आस्ते वनमनुत्तमम् ॥२६॥ रणितं भृंगराजैश्च रक्तकृष्णं च कर्बुरम् । वनेन तेन तच्चारु शोभते सर उत्तमः ॥ २७ ॥ तच्च भ्रमरगुंजारैर्नानापद्मैश्च शोभितम् । चूतचंदनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितम् ॥ २८ ॥ सुवर्णकेतकी जाती नानापुष्पोपशोभितम् । बकुलैः शतपत्रैश्च तिष्ठंति राजचंपकाः ॥ २९॥ कूष्मांडफलरूपेण सर्वे वृक्षा फलंति च । वनमध्ये महाचार्यः साधकैः परिवेष्टितः ॥ ३० ॥ सौवर्णकास्तत्र वृक्षा दृष्ट्वा तत्र दिशोदश । अग्रतो दृश्यते तत्र प्रोत्तुंगश्च महा-

भक्तिपूर्वक पृथक् २ नमस्कार कर रहे थे ॥ २३ ॥ अप्सरागण गंधर्व अर्धरात्रि में अनेक प्रकार भगवान् का पूजन करते थे ॥ २४ ॥ भक्ति भाव में तत्पर हो नाना प्रकार पूजा व्यवस्था कर सदाशिव को सुवर्ण के कमलों से पूजरहे थे ॥ २५ ॥ नित्य लिंग के आगे आर्ति करते थे तहां तालाव के पश्चिम तर्फ एक अच्छा रमणीय वन है ॥ २६ ॥ वह वन लाल कर्बुर काले कमलों से युक्त था उनमें भौंरे गूंज रहे थे उस वन से उस तालाव की शोभा विचित्र ही हो रही थी ॥ २७ ॥ वह सरोवर कमलों में बैठे हुए भौंरों के गूंज से अत्यंत शोभायमान हो रहा था और केलों के वृक्षों से युक्त था ॥ २८ ॥ सुवर्णकेतकीपुष्प जातीपुष्प और बकुल शतपत्र राजचंपकों से विराजमान था ॥ २९ ॥ कूष्मांड फल रूप से सब वृक्ष फले हुए थे उस वन में साधकों सहित आचार्य ने ॥ ३० ॥ सुवर्ण के वृक्ष दश दिशों में देखे और आगे से एक बड़ा ऊंचा पर्वत देखा ॥ ३१ ॥ उस पर्वत पर सीढी लगी है उसमें

गिरिः ॥ ३१ ॥ तस्य सोपानमार्गेणगंतव्यं च ततःपरम् । तस्य शृंगे पुरी रम्या हेमरत्नविभूषिता ॥ ३२ ॥ साधकाश्च गतास्तत्र पश्यंति चहिमालयम् । नानाविनोदसंयुक्ताः पश्यंति च दिशो दश ॥ ३३ ॥ विवाहोत्सवसंकीर्णां मंगलादपि मंगलम् । दृष्ट्वा तत्र पुरीं रम्यां चंद्रादित्यसमप्रभाम् ॥ ३४ ॥ ध्वजमालाकुलां दिव्यां बहुगंधाधिवासिताम् । अग्नितेजःसमोपेतां चित्रकर्मोपशोभिताम् ॥ ३५ ॥ वापीकूपतडागाढ्यां प्राकारेण प्रवेष्टिताम् । रम्यां मनोहरां दिव्यां विस्तरे शतयोजने ॥ ३६ ॥ प्रतोलीद्वारसंयुक्तां हेमप्राकारशोभिताम् । यस्या मध्ये मुनिश्रेष्ठ पूर्वधन्यो महामुनिः ॥ ३७ ॥ जटामुकुटधारी च दिव्यदेहश्च मूर्त्तिमान् । दिव्याभरणशोभाढ्या दिव्यवस्त्रपरिच्छदाः ॥ ३८ ॥ दिव्यपुष्पशिरोबद्धाः दिव्यकुंडलभूषिताः । चतुर्वेदप्रवक्तारः सर्वशास्त्रविशारदाः ॥ ३९ ॥ अर्धयोजनविस्तीर्णं मंडपं तत्र मंदिरे

जाने का वह मार्ग है उसके शिखर पर सुवर्ण और रत्नों से अलंकृत एक पुरी है ॥ ३२ ॥ वे साधकलोग वहां गए तहां हिमालय देखा बड़े आनंदयुक्त होतेहुए दश दिशाओं को देखा ॥ ३३ ॥ उस पुरी में विवाहोत्सव होरहे थे मंगल से मंगल होरहा था और पुरी बड़ी सुंदर सूर्य चंद्र के समान कांतिवाली थी ॥ ३४ ॥ ध्वजाओं की मालाओं से संयुक्त दिव्य गंधों से वासित अग्नि के समान तेजवाली चित्र से शोभायमान ॥ ३५ ॥ बावडी कूंए तालावों से युक्त और प्राकार से वेष्टित मन को हरनेवाली दिव्यपुरी सौ योजन चौडी थी ॥ ३६ ॥ प्रतोली द्वार सुवर्ण के प्राकार से शोभित वह पुरी है उसमें पूर्व धन्य बडे मुनि विराजरहे थे ॥ ३७ ॥ जिनके जटा मुकुट धारण किए दिव्य शरीरवाले दिव्य आभूषण पहने दिव्य वस्त्र धारण किए थे ॥ ३८ ॥ शिर में दिव्य पुष्प को धारण किए दिव्य कुंडलो से अलंकृत चारों वेद के वक्ता सर्वशास्त्रनिपुण थे ॥ ३९ ॥ तहां आधा योजन चौडा मंडप था वहां अनेक

सिंहासानि दिव्यानि हेमरत्नचितानि वै ॥ ४० ॥ तत्र तिष्ठति-राजेंद्रः सभायां परिवेष्टितः । साधकाश्च गतास्तत्र दृष्ट्वा दिव्यं महामुनिम् ॥ ४१ ॥ ऋषिराजउवाच । क्कागता भुवनात्सिद्धाः क्क स्थाने चैव गम्यते । सत्यं वदत भोसिद्धा यदि कल्याणमिच्छथ ॥ ४२ ॥ सिद्धउवाच । शृणु राजन्प्रवक्ष्यामि मम वाक्यं सुनिश्चितम् । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यः शंकरालयः ॥ ४३ ॥ ऋषिराजउवाच । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये नानाभोगसमाकुले । तिष्ठन्तु साधकाः सर्वे भुंजंतां विपुलां श्रियम् ॥ ४४ ॥ किं करिष्यति कैलासः किं करिष्यति शंकरः । मम स्थाने महाभोगादेवदानव दुर्लभाः ॥ ४५ ॥ साधकउवाच । किमत्र भोग्यमायुष्यं पश्चात्किं च भविष्यति । कस्य लोके भवेद्वासः सत्यं कथय सुव्रत ॥ ४६ ॥ ऋषिराजउवाच । कन्याः सप्तसहस्राणि दीयंते च पृथक् पृथक् । तथा लक्षं भवेदायुर्महाभोगसमन्वितं ॥ ४७ ॥ भुक्त्वा च विपुला-

मंदिर सुवर्ण के दिव्य रत्नखचित सिंहासन रखे थे ॥ ४० ॥ तहां सभा में एक बड़ा राजा बैठा था साधकलोग वहां गए उस दिव्यमुनि को देखा ॥ ४१ ॥ ऋषिराज बोला हे सिद्धलोगों ? आप कहांसे आए और कहां जाते हो यदि अपना कल्याण चाहते हो तो सत्य २ कहो ॥ ४२ ॥ सिद्ध बोला हेराजन ? सुनिए हम मृत्युलोक से आये और शंकरालय को जाते हैं ॥ ४३ ॥ ऋषिराज बोले हे साधकों ? नाना भोगों से युक्त इस नगर में रहके बडी संपत्ती को भोगिए ॥ ४४ ॥ क्या कैलास करेगा क्या शंकर करेगा यहां मेरे स्थान में बडे भोग हैं जो देव दानवों को भी दुर्लभ हैं ॥ ४५ ॥ साधक बोला यहां आयु कितने वर्ष का है और पीछे क्या होता है कहां जाना होता है हेसुव्रत ? सच कहिए ॥ ४६ ॥ ऋषिराज बोला पृथक् २ सात हजार कन्या दीजायंगी बडे भोगयुक्त यहां लाख वर्ष की आयु है ॥ ४७ ॥ पीछे बडे

न्भोगान् मृत्युलोके च गम्यते । चक्रवर्त्ती भवेद्भूपः पश्चाज्जातिस्मरो भवेत् ॥ ४८ ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनधान्यसमाकुलः। दीर्घायुर्विपुलान्भोगान्पुनस्ते स्वर्गगामिनः ॥ ४९ ॥ साधकउवाच मृत्युलोको यदि पुनर्गतव्यः शंकरालयः । मृत्युलोकभयाद्भीता राजन्नत्रागता वयम् ॥ ५० ॥ मृत्युलोके महादुःखं त्यक्त्वेह समुपागताः । तत्र चैवागताः सर्वा विमानारूढयोषितः ॥ ५१ ॥ साधकांस्तास्ततो दृष्ट्वा हृष्टपुष्टा वदंति च । दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः ॥ ५२ ॥ कर्णालंबिततातंकाः कटिघंटा सुशोभिताः । शिरःपुष्पैः सुगंधाश्च तांबूलेन मुहुर्मुहुः ॥ ५३ ॥ मृगाक्ष्यो हंसगामिन्यो रूपयौवनगर्विताः। करकंकणसंयुक्ता हार केयूरभूषिताः ॥ ५४ ॥ संपूर्णचंद्रवदना नूपुरैः समलंकृताः । कट्या मृगेंद्रमानिन्यः कुचतालफलैः शुभाः ॥ ५५ ॥ कन्यं-

भोगों को भोगकर मृत्युलोक में जाके चक्रवर्त्ती राजा होता है और जातिस्मरण रहेगा ॥ ४८ ॥ धन धान्य और पुत्र पौत्र युक्त दीर्घायु होताहुआ बहुत भोगों को भोगकर फिर स्वर्ग को जाते हैं ॥ ४९ ॥ साधक बोला यदि मृत्युलोक में जाना होता है तो हम कैलास को जाते हैं हेराजन ? मृत्युलोक की डर से हम यहां आए ॥ ५० ॥ मृत्युलोक में बडा दुःख है तब उन साधकों के निकट बिमानों में चढ स्त्री आई ॥ ५१ ॥ वे स्त्री उन साधकों को देख बोलीं स्त्री कैसी हैं दिव्य वस्त्रों को धारणकिए दिव्य गंधों को लेपकिए हृष्ट पुष्ट थीं ॥ ५२ ॥ और कानों में तातंक लगे कटि में घुंघुरु लगे शिर में सुगन्धवाळे पुष्प विराजते थे और तांबूल चाबती थीं ॥ ५३ ॥ मृगनयनी हंसगामिनी अपने रूप और यौवन से गर्वित हाथों में कंकण पहने हार केयूर से शोभायमान ॥ ५४ ॥ फिर कैसी थीं सब चंद्रमा के समान मुखवाली और नूपुरों से अलंकृत सिंह के सदृश कटि जिनकी और तालफल के समान कुचों से शोभायमान थीं ॥ ५५ ॥ कन्या बोलीं हे सिद्धों ? आप कहांसे

काऊचुः। आगताः स्थ कुतः सिद्धाः क्व स्थाने चैव गच्छथ। कन्याः पृच्छंति तान् सेन वरार्थे सुंदरभ्रुवः ॥ ५६ ॥ आचार्यउवाच। शृण्वन्तु कन्यकाः सर्वा मम वाक्यं सुनिश्चितम्। आगता मृत्युलोकाच्च गच्छामः शंकरालयम् ॥ ५७ ॥ कन्यकाऊचुः । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये नानाभोगसमाकुले। तिष्ठंतु साधकाः सर्वे भुंजंतां विपुलां श्रियम् ॥ ५८ ॥ साधकउवाच । अस्मिन्स्थाने महारम्ये कामिन्यो न रुचिर्मनाक्। अस्माभिस्तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः ॥५९॥ एवं वदंति ते सिद्धाः शृण्वतीनां सुयोषिताम्। तस्माच्च साधकाः सर्वे गताश्चैवोत्तरामुखम् ॥६०॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनंनाम एकोनविंशःपटलः ॥

ईश्वरउवाच। अग्रतो दृश्यते तत्र कृतरूपांतरोहरः। वृद्धब्राह्मणरूपेण जर्जरीकृतदेहवान् ॥ १ ॥ रूपयौवनहीनश्च क्षीणकुब्ज-

आए और कहां जाते हैं हे महासेन ? वे सुन्दर भौंवाली कन्या वरने की इच्छाकर पूछने लगीं ॥ ५६ ॥ आचार्य बोला मेरे वचन को निश्चयकर सब कन्या लोग सुनें हम मृत्युलोक से आए हैं और कैलास को जाते हैं ॥ ५७ ॥ कन्या बोलीं सब साधक लोग नाना भोगों से युक्त इस रमणीय नगर में रहैं बड़े भोगों को भोगें ॥ ५८ ॥ साधक बोला हेस्त्रियों ? इस रमणीय नगर में हमारी किंचित् भी रुचि नहीं है हमने तो जहां शंकर हैं वहां जाना ॥ ५९ ॥ साधक लोग इतना कहकर सब उत्तर दिशाको गये ॥ ६० ॥ इति श्री केदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषा टीकायां कैलासगमनं नाम एकोनविंशः पटलः ।

शंकर बोले आगे वृद्ध ब्राह्मण के रूप से शंकर भगवान् को देखा जिनका शरीर वृद्धत्व से जर्जर हुआ है ॥ १ ॥ वह रूप से यौवन से रहित

श्चदेहिनाम् । मंदान्मन्दतरो दीनो वेपमानश्च रोगवान् ॥ २ ॥ अस्थिचर्मावशेषश्च क्षुत्तृड्भ्यां च प्रपीडितः। ईदृशो ब्राह्मणो वृद्धो दृष्ट्वाचार्यश्च तत्क्षणात ॥३॥ ब्राह्मणउवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धाः क्व स्थाने चैव गम्यते। सर्वं कथय वृत्तांतं ब्राह्मणाग्रे महातपः ॥ ४ ॥ साधकउवाच । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये । एतन्मतं द्विजश्रेष्ठ प्रसादेन हरस्य च ॥ ५ ॥ ब्राह्मणउवाच। नैव दृष्टो महासिद्धा रुद्रस्त्रिभुवनेश्वरः। स्वर्गे मर्त्ये च पाताले भ्रामितो हि दिशो दश ॥ ६ ॥ दिव्यवर्षसहस्राणि नैव दृष्टो महामुने। मया निरीक्षिता सिद्धाः कनिष्ठा प्राप्यते जरा ॥७॥ कुतस्त्वं गच्छसे सिद्ध मा गच्छ कुरु भाषितम्। रुद्रस्य दर्शनं कुत्र देवानामपि दुर्लभम् ॥ ८ ॥ आचार्यउवाच । यच्च त्वयोदितं विप्र हृदये नैव रुच्यते। अवश्यं तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः९

बहुत दुबला और कूबड़ निकली अत्यंत मंद और दीन, रोग से पीडित कांपता हुआ ॥ २ ॥ केवल हड्डी और चर्म उसके शरीर में बाकी है क्षुधा तृषा से पीडित ऐसे वृद्ध ब्राह्मण को देख आचार्य उस काल में आश्चर्ययुक्त हुआ ॥ ३ ॥ ब्राह्मण बोला हे सिद्धो ? तुम कहांसे आये और कहांको जाते हो मेरे पास सब वृत्तांत कहो ॥ ४ ॥ साधक बोला हे ब्राह्मण ? हम मृत्युलोक से आए हैं और शंकरालय को जाते हैं ऐसा सिद्धांत है ॥५॥ ब्राह्मण बोला हे सिद्धों ? मैं दश दिशा को घूम आया परन्तु स्वर्ग मृत्यु पाताल कहीं भी तीनों लोक का ईश्वर रुद्र नहीं देखा ॥ ६ ॥ इस खोज में लगे मुझे दिव्य हजार वर्ष होगए और इतना बूढ़ा होगया पर मैंने शंकर को नहीं देखा ॥ ७ ॥ हे सिद्ध ? कहां जाते हो मेरा कहा मानो मत जाओ रुद्र का दर्शन कहां मिलता है जो देवतों को भी दुर्लभ है ॥ ८ ॥ आचार्य बोला हे ब्राह्मण ? तुम्हारा कहा मन में नहीं रुचता है हमने तो जहां शंकर हैं वहां अवश्य जाना है

ब्राह्मणउवाच । कुत्र स्थाने वसेद्रुद्रः किं रूपं कीदृशं फलम् । कथं कायो महादेवः किं फलं किं प्रयोजनम् ॥१०॥ आचार्यउवाच । दुर्लभः सर्वसंसारे दुर्लभ्यो हीतरैर्जनैः । दुर्लभः सर्वभूतानां सरतामतिदुर्लभः ॥११॥ कस्य चैव समो रुद्रः केनरूपेण दृश्यते । कथंकायो महादेवः कथं वाच्यः स शंकरः ॥१२॥ ब्रूहि तन्मे महावीर किं करिष्यति शंकरः । रुद्रस्य दर्शनं दृष्ट्वा कथयामि शृणुष्व तत् ॥१३॥ सिद्धउवाच । शृणु विप्रेंद्र यद्रूपं कथयामि यथाश्रुतं । नीलकंठं वृषारूढं शूलपाणिं महाबलम् ॥ १४ ॥ त्रिनेत्रं च दशभुजं चंद्रार्धकृतशेखरं । भस्मना धूलितं गात्रं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥ १५ ॥ कर्पूरगौरं शिरसा जटामुकुटभूषणम् । देवदेवं जगन्नाथं भक्तानामभयप्रदम् ॥१६॥ एवमुक्ते साधकेन रुद्रो वै दर्शनं ददौ । विप्ररूपविनाशेन साक्षाद्देवोमहेश्वरः ॥१७॥

॥ ९ ॥ ब्राह्मण बोला रुद्र कहां रहता है कैसा उसका रूप है कैसा शरीर है और उनसे क्या फल प्रयोजन है ॥ १० ॥ आचार्य बोला । भगवान् रुद्र संपूर्ण संसार में लोगों को दुर्लभ हैं ॥ ११ ॥ रुद्र किसके समान है और किस रूप करके दीखता है कैसा शरीर है कैसा कहाजाता है ॥ १२ ॥ हे महावीर ? शंकर क्या करेगा और उनके दर्शन देख के क्या होगा कैसा दर्शन है मैं तुमसे सुनना चाहता हूं कहिए ॥ १३ ॥ सिद्ध बोला हे विप्रेंद्र जैसा उनका रूप है और जैसा सुना है वैसा कहता हूं नीलकंठ है शूल हात में लिए और नन्दी पर चढे रहते हैं ॥ १४ ॥ तीन नेत्र हैं और दश बाहु हैं अर्धचंद्र शिर पर है भस्म से शरीर लिप्त है और करोड सूर्य के समान कांतिवाले हैं ॥ १५ ॥ कर्पूर के समान गौरवर्ण और जटामुकुट आभूषण किए देवताओं के देव जगत् के स्वामी भक्तों को अभय देनेवाले हैं ॥ १६ ॥ इस प्रकार साधक के कहने पर शंकर ने ब्राह्मण के रूप को छोड देव देव शिव ने

रुद्रस्य दर्शनं कृत्वा सर्वाभरणभूषितः । दिव्यदेहो महाकायो दिव्यगंधानुलेपनः ॥१८॥ जटामुकुटधारी च चंद्रार्धकृतशेखरः । दिव्यज्योतिर्महाभूतिर्महारूपो महाप्रभुः ॥ १९ ॥ नीलकंठो वृषारूढः शूलपाणिः पिनाकधृक् । सर्वलक्षणसंपूर्णो बालार्कस्य समप्रभः ॥२०॥ दशबाहुस्त्रिनयन उमासहित शंकरः । प्रत्यक्षं दर्शनं लब्ध्वा साधकाः प्रवदंति च ॥२१॥ नमस्कृत्य ततो देवं पिनाकिवृषभध्वजम् । दंडवच्च प्रणम्याथ पततो धरणीतले॥२२॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा प्रणम्याति पुनःपुनः । अद्य मे सफलं जन्म ह्यद्य मे सफलं तपः॥२३॥ अद्य मे सफलं जाप्यमद्य मे सफलाः क्रियाः । अद्य मे सफलः पंथा अद्य मे सफलार्चनः ॥२४॥ अद्य मे सफलं कर्म मया दृष्टः सदाशिवः।नमस्यंचरणं पूज्यं दृष्टः संभाषितः शिवः ॥ २५ ॥ श्रीशिवउवाच । वरं ब्रूहि महासिद्ध

दर्शन दिया ॥ १७ ॥ रुद्र के दर्शन उनको मिले रुद्र कैसा है संपूर्ण आभरणों से भूषित दिव्यदेह दिव्य गंध से लिप्त ॥ १८ ॥ और जटामुकुट धारणकिए शिर में आधा चंद्रमा धारणकिए दिव्य ज्योति सुंदर दिव्य रूप ॥ १९ ॥ नीलकंठ और वृष पर चढे त्रिशूल हाथ में लिए पिनाक धनुष को धारण किए सर्व लक्षणों से परिपूर्ण उदय काल के सूर्य के समान कांतिवाले ॥ २० ॥ दश भुजा और तीन नेत्रवाले ऐसे उमासहित शंकर का प्रत्यक्ष दर्शन पाकर साधक बोलने लगे ॥ २१ ॥ शंकर भगवान को नमस्कार दंड के समान भूमि में पड़कर किया ॥ २२ ॥ अंजलि को बांध वार वार प्रणामकर कहने लगा आज मेरा जन्म और तप सफल भया ॥ २३ ॥ और आज मेरे सब जाप्य और सब काम और पूजन मार्ग सफल हुए ॥ २४ ॥ जो आज मैंने भगवान् शंकर का दर्शन पाया और उनके चरणों को प्रणाम किया पूजन किया और भगवान् से भाषण किया इससे मेरे सब काम सफल होगए ॥ २५ ॥ श्री शिव बोले हे सिद्ध ? साधकोंसहित तुम वर मांगो ? तुमपर मैं

साधकैः परिवेष्टितः। तत्र तुष्टो महादेवो महावीरो महातपाः॥२६॥ साधकउवाच । यदि तुष्टो महादेव उमायुक्तस्त्रिलोचनः । गर्भवासं न पश्यामि तादृशं कुरु मां प्रभो ॥ २७ ॥ कस्मिन्काले तु संप्राप्ते मृत्युलोके न याम्यहम्। गृहीत्वा गम्यते तत्र शिवकल्पं महापथे ॥ २८॥ तव मार्गेण गंतव्य रुद्रदेव महेश्वर। एवं देहि वरं देव यदि तुष्टोसि शंकर ॥ २९ ॥ एतादृशं वरं लब्ध्वा चित्ते ते ह्यतिहर्षिताः । हृष्टपुष्टमनाः सिद्धा प्रणमंति महेश्वरम् ॥ ३० ॥ स्तुतिं कुर्युस्ततः सर्वे प्रणमंति मुहुर्मुहुः। साधकानां वरं दत्वा शिवलोकं गतो हरः ॥३१॥ क्षणमेकं च तिष्ठंति साचार्याः साधकाः पुनः । तत्र ते साधकास्तत्र गताश्चैवोत्तरामुखाः ॥ ३२ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम विंशतिः पटलः ॥ २० ॥

ईश्वरउवाच। अग्रतो दृश्यते तत्र चेंद्रगजो महानृपः। कृत्वा-

शिव प्रसन्न हूं ॥ २६ ॥ साधक बोला हे प्रभो ? यदि मेरे ऊपर उमासहित महादेव प्रसन्न हुए तो ऐसा कीजिए कि जिससे गर्भ में वास लेना न पड़े ॥ २७ ॥ कभी मृत्युलोक में न जावें शिवकल्पकाल में महापथ को प्राप्त होवें ॥ २८ ॥ हेप्रभो ? तुम्हारे मार्ग से जावें यदि आप प्रसन्न हुए हो तो यह वर दीजिए ॥ २९ ॥ सिद्ध इसप्रकार वर को पाकर चित्त में बड़े हर्षित हुये प्रसन्न मनहो भगवान् को प्रणाम करते भए ॥ ३० ॥ साधकों ने वार वार प्रणाम किया और स्तुति किई भगवान् शंकर साधकों को वर देकर शिवलोक को गए ॥ ३१ ॥ तब आचार्यसहित साधक क्षणभर वहां रहे फिर उत्तर दिशा को चलेगए ॥ ३२ ॥ इति श्री केदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम विंशतिः पटलः ।

शिव बोले जब वहांसे आगे गए इंद्र राजा जिसने अत्यंत भयंकर सिंह

वै सिंहरूपं च महारौद्रो भयंकरः ॥ १ ॥ पर्वतस्य दरीवक्त्रो गिरिशृंगशिरास्तथा । तस्य शूरनिनादश्च यथा मेघस्य गर्जितः ॥ २ ॥ भूमिश्च स्फोटते क्रोधात्कंपते भुवनत्रयम् । एवंदृष्ट्वा महासिंहं तीक्ष्णदंष्ट्राभयानकम् ॥ ३ ॥ वर्द्धते च ततः सिंहो-नखलांगूलवेगतः । जिह्वाचातिचला दिव्या वर्धते च पुनःपुनः ॥ ४ ॥ ततो दृष्ट्वा महासेन वने सिंहं भयंकरम् । दृष्ट्वा सिंहं महारूपं तीक्ष्णदंष्ट्रं महाबलम् ॥ ५ ॥ साधकाश्च ध्वनिं श्रुत्वा वर्धमानं पुनः पुनः । सिंहं दृष्ट्वा महाप्रौढं साधका विस्मयं गताः ॥ ६ ॥ भयभीतास्ततः सिंहादात्मनः शोचयंति हि । अघोरे-णैव मंत्रेण सर्वविघ्नः क्षयं गतः ॥ ७ ॥ अथ मंत्रः ॥ ॐ हुंफट् स्वाहा ॥ सिंहउवाच । भुवनात्कुत आयाताः क्व स्थाने चैव गच्छथ । सत्यं ब्रूत ममाग्रे हि यदि कल्याणमिच्छथ ॥ ८ ॥ सिद्ध उचाव । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालयम् । एवं नो हि

के रूप को धारण किया था वह दृष्ट आया ॥ १ ॥ जिसका मुख पर्वत की गुहाकासा था और शिर पर्वत के शृंगकासा और शब्द मेघ के गर्जन के समान था ॥ २ ॥ क्रोध से पृथ्वी को फाडताहुआ और तीन लोक को कंपाता हुआ और तीखे दांतों से अत्यंत भयानक ऐसे सिंह को देखा ॥ ३ ॥ वह सिंह तब लांगूल के वेग से बढने लगा और जिव्हा उसकी अति चंचल बार बार बढती जाती थी ॥ ४ ॥ हे महासेन ? बडे रूपवाला और बड़ा बल-वान् तीखे दाढोंवाला महाभयंकर सिंह को देख के ॥ ५ ॥ साधक लोग उस प्रौढ वार वार बढतेहुए सिंह को देख और उसके शब्द को सुन विस्मय को प्राप्त हुए ॥ ६ ॥ साधक उस सिंह से भयभीतहुए विचारने लगे तब अघोर मंत्र को जपा उससे सब विघ्न नष्ट हुए ॥ ७ ॥ ॐ हुं फट्स्वाहा ॥ यह अघोर मंत्र है ॥ सिंह बोला । यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो मेरे आगे सच कहो तुम कहांसे आए और कहांको जाते हो ॥८॥ सिद्ध बोला ।

मतं सिंह तत्रेच्छा परमेश्वरी॥९॥ सिंहउवाच । आयान्तु साधकाः सर्वे वांच्छामि वश्च दर्शनम् । आगंतव्यं समीपे च पातव्यं रुधिरं हि वः ॥१०॥ कुतो गच्छत यूयं हि मम दृष्ट्यावलोकिताः । तृप्तं करोमि आत्मानं मांसेन रुधिरेणच॥११॥ सिंहरूपं समाश्रित्य यत्र तिष्ठामि वै सदा । नैव गच्छंति वै स्वर्गे स्वयं देहेन मानवाः ॥ १२ ॥ आचार्यसाधकाः सर्वे मा गच्छत शिवालये । यदि गच्छथ चेत्सिद्धाः भोजनं न कृतं मया ॥ १३ ॥ षण्मासाभ्यंतरे सिद्धाः भोजनं न कृतं मया । मया दैवाच्च भोक्तव्यं मांसंभो साधका ध्रुवम् ॥१४॥ जीवंतो नैव पश्यंति उमया सहितं हरम् । महापथे महाघोरं जपंतश्च शनैः शनैः ॥ १५ ॥ आगता दिव्यमार्गेण दृष्ट्वा सिंहं भयंकरम् । आकर्ण्यागर्जितं घोरं शब्दं त्रैलोक्यव्यापिनम् ॥ १६ ॥ आचार्यमूचिरे सिद्धाः सिंहत्रासेन

हम मृत्युलोक से आए हैं और कैलास को जाते हैं ऐसा हमारा मत है आगे ईश्वर की जैसी इच्छा होगी ॥ ९ ॥ सिंह बोला । सब साधक लोग यहां मेरे पास आवें मैं तुह्मारा दर्शन चाहता हूं तुह्मारे रुधिर को पीऊंगा ॥ १० ॥ अब तुम मेरी दृष्टि में पड़े कहां जावोगे तुह्मारे रुधिर और मांस से अपने आत्मा को तृप्त करता हूं ॥ ११ ॥ मैं सिंह के रूप को धारणकर यहां सदा रहता हूं मनुष्य सदेह जिससे स्वर्ग को न जाने पावें ॥ १२ ॥ इस कारण तुम आचार्य और साधक सब शिवालय को मत जाओ यदि जाओगे तो मैंने भोजन नहीं किये ॥ १३ ॥ छः महीने बीते अभीतक भोजन नहीं किया आज प्रारब्ध से मिला हे साधकों ? निश्चय तुह्मारे मांस को खाऊंगा ॥ १४ ॥ जीवतेहुए मनुष्य पार्वती शंकर को नहीं देख सकते ऐसा सुन साधक धीरे २ अघोर मंत्र को जपतेहुए महापथ को जाने लगे ॥ १५ ॥ दिव्य मार्ग में आये उस भयंकर सिंह को देखा तीनो लोक में व्याप्त हुआ उसके शब्द को जो घोर गर्जित था सुनकर ॥ १६ ॥ सिद्ध लोग उस सिंह के भय से व्याकुल

व्याकुलाः। आचार्यो वदते तांश्च सिंहान्नैव भयं मम ॥१७॥
अघोरस्तु महामंत्रो ह्यघोरो देवदुर्लभः। भीतैश्च जपितो मंत्रः
सर्वत्रासक्षयंकरः ॥ १८ ॥ अथ मंत्रः ॐ श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं ॐ हुंफट्
स्वाहा ॥ अघोरश्च महामंत्रः सर्वविघ्नविनाशनः। अघोराय
नमस्तस्मै दुर्लभो भुवनत्रये ॥ १९ ॥ अघोराय नमस्तुभ्यं
अघोराय च ते नमः। अघोरः सर्वसिध्यर्थं शिवेन निर्मितः पुरा
॥ २० ॥ अघोरं जपमानश्च पिनाक्येवाभिजायते। मूर्त्तिरूपो
भवेद्रुद्रः सर्वालंकारभूषितः ॥ २१ ॥ सिंहरूपं परित्यज्य
प्रत्यक्षोऽसौ बभूव च। गजारूढः सहस्राक्षो वज्रायुधसुशोभितः
॥ २२ ॥ इंद्रउवाच। धन्या धन्या महासिद्धा एकचित्ते व्यव-
स्थिताः। आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ २३ ॥
अहं तुष्टो महासिद्धा वरं वृणुत सुव्रताः। तत्सर्वं च प्रदास्यामि

होतेहुए आचार्य को बोले आचार्य बोला सिंह से मुझे भय नहीं ॥ १७ ॥ अघोर मंत्र बड़ा श्रेष्ठ है यह मंत्र देवतों को भी दुर्लभ है तब डरेहुए उनोंने सब भय को दूर करनेवाले अघोर मंत्र को जपा ॥ १८ ॥ यह अघोर मंत्र है ॥ यह सब विघ्नों को दूर करनेवाला है और तीनों लोक में दुर्लभ है इस अघोर मंत्र को नमस्कार है ॥ १९ ॥ अघोर के लिए वारंवार नमस्कार है यह मंत्र पहले सर्व सिद्धि के वास्ते शिवजी ने निर्माण किया ॥ २० ॥ अघोर मंत्र को जपताहुआ मनुष्य सब अलंकारों से भूषित मूर्त्तिरूप साक्षात् रुद्र होजाता है ॥ २१ ॥ साधकों ने मंत्र जपा तो सिंहके रूप को छोड़कर यह प्रत्यक्ष ऐरावत हाथी में चढ़े वज्र आदि आयुधों को धारण करताहुआ इन्द्र दृष्ट आया ॥ २२ ॥ इन्द्र बोला। हे महासिद्धो ! धन्य हो धन्य हो एकचित्त होकर मृत्युलोक से आए कैलास को जाते हो ॥ २३ ॥ हे सुन्दरव्रत को धारणकिए सिद्धों ! मैं तुमपर बड़ा प्रसन्न हूं जिससे तुमको कल्याण हो उस

येन श्रेयो ह्यवाप्स्यथ ॥ २४ ॥ आचार्यउवाच । यदितुष्टोऽसि मे देव शक्रराज सुरोत्तम । महापथे च यत्किंचिद्विघ्नंमाभूत्कदाचन ॥ २५ ॥ यत्र स्थाने सुराः सर्वे ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । तत्र स्था ने महाराज न भयं मार्गयायिनाम् ॥ २६ ॥ महापथेन गंतव्यंन विकल्पो भवेत्ततः । तत्र विघ्नं न पश्यामः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ २७ ॥ साधकेभ्यो वरं प्रार्थ्यमिंद्रो राजा गतस्तदा । तत्पश्चात्साधकैः सर्वैर्गंतव्यमुत्तरां दिशम् ॥ २८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम एकविंशतिः पटलः ।

ईश्वरउवाच । अग्रतश्च महासेन दृश्यते च महापुरी । साधकाश्च गतास्तत्र दृष्ट्वा च विस्मयं गताः ॥ १ ॥ हेमशृंगे महारम्ये नानारत्नविभूषिते । अग्नितेजःसमं रूपं चंद्रादित्यसमप्रभम् । ॥ २ ॥ चंद्रवेगातटे चैव पुरी रुद्रेण निर्मिता । स्थिता कैलासस्व

वर को मांगो मैं देता हूं ॥ २४ ॥ आचार्य बोला । हे इन्द्र ! आप जो प्रसन्न हुए हो तो महापथ जाने में कभी थोड़ा भी विघ्न न होने पावे जिस स्थान में ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हैं तहां रास्ता चलनेवालों को भय नहीं ॥ २६ ॥ महा पथ जाने में विकल्प नहीं तहां विघ्न नहीं सच २ बोलता हूं ॥ २७ ॥ तदनंतर साधकों के लिए वरप्रदान दे चला और साधक आगे उत्तर दिशा को चले ॥ २८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम एकविंशतिः पटलः ।

शिव भगवान् बोले । हे महासेन ? आगे एक पुरी दृष्ट आई उसको देख साधकों को बड़ा आश्चर्य हुआ तहां गये ॥ १ ॥ तहां सुवर्ण के नाना रत्नों से आभूषित बड़े शिखर और अग्नि के तेज के सदृश चंद्र सूर्य के समान कांति वाले थे ॥ २ ॥ यह पुरी चंद्रवेगा नदी के तट में रुद्र ने निर्माण किई है जो

च्छांशे महागिरिवरोत्तमे ॥ ३ ॥ शतयोजनविस्तीर्णा रत्नकांच नशोभिता । प्रत्यक्षं तत्र दृश्येते ज्वलितौ शशिभास्करौ ॥ ४ ॥ इंद्रनीलमयं रम्यं चंद्रकांतापशोभितम् । हैमेन रचिता भूमीरुद्रप्राकारतोरणम् ॥ ५ ॥ जलमध्ये च शोभंते नक्षत्राणि च तारकाः । एतस्मिंश्च गृहे रम्ये बहुगंधाधिवासिते ॥ ६ ॥ चंपिकास्तत्र तिष्ठंति कन्या कोटिसमावृताः । कोकिलास्वरनादेन नागवल्ली विभूषिताः ॥ ७ ॥ नानापुष्पसमाकीर्णा बहुगंधादिशोभिताः । भेरीमृदंगशब्देन शंखवीणास्वनेन च ॥ ८ ॥ वेणुतालाश्च वाद्यंते पटहं तत्र नादितं । ब्राह्मणा वेदनिर्घोषैःसर्वशास्त्रविशारदाः ॥ ९ ॥ विदग्धा स्वरभेदैश्च गायंति क्रीडयंति च । कुंकुमैर्दिव्य गंधैश्च दिव्यवस्त्रपरिच्छदाः ॥ १० ॥ हारकंकणकेयूरनूपुरैश्च ह्यलंकृताः । पद्मपत्रविशालाक्ष्यो रूपयौवनगर्विताः ॥ ११ ॥

स्वच्छ कैलास के एक हिस्से में बड़े पर्वत में है ॥ ३ ॥ जो सौ योजन चौड़ी और सुर्वण और रत्नों से शोभायमान है तहां प्रत्यक्ष चंद्र सूर्य दीख पड़ते हैं ॥ ४ ॥ इंद्रनील मणियों से शोभायमान और चंद्रकांत मणियों से रमणीय सुर्वण की भूमि रुद्र की रची प्राकार तोरण से युक्त ॥ ५ ॥ उस नदी के जल में नक्षत्र तारे शोभायमान होते थे और तहां घर जो थे बहुत गंधो से सुवासित थे ॥ ६ ॥ करोड़ों कन्याओं से युक्त तहां चंपिका थीं जिनका स्वर कोयल के समान है तांबूल करिके शोभायमान थीं ॥ ७ ॥ नाना गंधों से युक्त और बहुत पुष्पों से आकीर्ण भेरी मृदंग शंख वीणा के शब्द होते थे ॥ ८ ॥ वेणुवाद्य पटहवाद्य बजते थे वेद शास्त्र विशारद ब्राह्मणों के वेदघोष से शब्दायमान था ॥ ९ ॥ तहां चतुर देवांगना स्वरभेदों से गाती और नाचती हैं जिनके दिव्य गंध दिव्य कुसुम से युक्त दिव्य वस्त्र पहने हैं ॥ १० ॥ और हार कंकण नूपुरों से अलंकृत हैं कमल के समान नेत्र और रूप यौवन

उद्गिरंति च तांबूलं कर्पूरेण समन्वितम् । कैशैर्भ्रमरसंकाशैर्विह्वला गजगामिनी ॥१२॥ प्रोत्फुल्लपद्मवदना बिंबोष्ठी कोकिलस्वराः । मृदुकोमलदेहाश्च दिव्यगंधानुलेपनाः ॥ १३॥ मुष्टिग्राह्यसुमध्याश्च करिकुंभोपमस्तनी । अशोकपल्लवौ हस्तौ नातिह्रस्वौ न लंबितौ ॥१४॥दृष्ट्वा च ताद्विधाः कन्याः साधका विस्मयं गताः।स्वागतं स्वागतं सिद्धाः कन्यास्तत्र वदंति च ॥१५॥ कन्यकाऊचुः। वदाचार्य च सर्वं मे विस्तरेण महातपः। क्वागताभुवनात्सिद्धाः क स्थाने चैव गम्यते ॥ १६ ॥ सिद्धउवाच । शृणु सुंदरि यत्नेन एवं वदाति साधकः । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ १७ ॥ कन्यकाऊचुः। चंपिका तिष्ठते तत्र कन्याकोटिसमावृता। चंपिका तिष्ठते तत्र पुष्पदर्शनकारणम् ॥ १८ ॥ चंपिका तिष्ठते तत्र चंपिका अतिहर्षिता । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये नानाभोगसमाकुले

से गर्वित हैं ॥ ११ ॥ कर्पूरयुक्त तांबूल को चावतीहुई गजगामिनी भ्रमरों के सदृश जिनके केश हैं ॥ १२ ॥ खिलेहुए कमल के सदृश मुखवाली और बिंबफल के समान ओंठ जिनके कोयल के समान स्वरवाली और कोमल देहवाली दिव्य गंधों से लिप्त हुई ॥ १३ ॥ मुठी के भीतर कमरवाली हाथी के कुंभस्थल के समान कुचवाली अशोक के पत्ते हाथों में रखे बहुत छोटे न बड़े ॥ १४ ॥ साधक लोग उन कन्याओं को देख विस्मय को प्राप्त हुए और कन्या उनको स्वागत बोलने लगीं ॥ १५ ॥ कन्या बोलीं हे महातप ? आचार्य विस्तार से कहो तुम कहांसे आए और कहांको जाते हो ॥ १६ ॥ सिद्ध बोला हे सुंदरि ? यत्न से सुनो हम मृत्यु लोक से आये कैलास को जाते हैं ॥ १७ ॥ कन्या बोलीं । करोड़ कन्याओं से युक्त यहां चंपिका रहिती हैं और अनेक पुष्पों के कारण प्रसन्न हैं ॥१८॥ चंपिका यहां अति हर्ष के कारण इस संपूर्ण भोगों करिके युक्त इस रमणीय नगर में रहती

॥ १९ ॥ तिष्ठंतु साधकाः सर्वे भुंजन्तु विपुलां श्रियम् । साधकाश्चंपिकां दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २० ॥ चंपिकोवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धाः क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद्ब्रूहि महाचार्य ममाग्रे त्वमशेषतः ॥ २१ ॥ साधकउवाच । चंपिकावचनं सत्यं कथयामि च तच्छृणु । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ २२ ॥ चंपिकोवाच । तिष्ठ तिष्ठ महाचार्य भुक्त्वा भोगसमाकुलाम् । एवमुक्त्वा ततः कन्या साधको वाक्यमब्रवीत् ॥ २३ ॥ साधकउवाच । किमत्र भोगमायुष्यं पुनः स्थानं क्व लभ्यते । एतत्सर्वं समासेन ममाग्रे शीघ्रमुच्यताम् ॥ २४ ॥ चंपिकोवाच । कन्याशतसहस्राणि दीयंते च पृथक् पृथक् । कोटिवर्षं च त्वायुष्यं महाभोगसमन्वितम् ॥ २५ ॥ आचार्य मंदिरे भोगान् देवानामपिदुर्लभान् । आचार्यउवाच चंपिके वचनं सत्यं तव शब्देच्छया शृणु ॥ २६ ॥ सर्वैर्मया प्रतिज्ञा च

हैं ॥ १९ ॥ तुम साधक यहां रहो बड़े ऐश्वर्य को भोगो साधक चंपिका को देख सब पापों से छूट जाते हैं ॥ २० ॥ चंपिका बोली हे सिद्धों ? तुम कहां से आए और कहां जाते हो मेरे पास तुम यह सब वृत्तांत कहो ॥२१॥ साधक बोला । हे चंपिके मैं सत्य कहता हूं सुनो हम मृत्युलोक से आये कैलास को जाते हैं ॥ २२ ॥ कन्या बोली । हे आचार्य ? यहां रहो यहां बहुत बड़े भोगों को भोगो इस प्रकार कन्याओं ने कहा तब साधक बोला ॥२३॥ यहां आयुष्य का भोग कितना है फिर कहां जाना होता है यह सब मेरे आगे शीघ्र कहो ॥ २४ ॥ चंपिका बोली ? सौ हजार कन्या अलग २ दी जाती हैं और बड़े भोगों से युक्त यहां करोड वर्ष का आयु है ॥ २५ ॥ हे आचार्य जो भोग देवताओं को भी दुर्लभ हैं उन भोगो को यहां भोगो आचार्य बोला हे चंपिके तुमने जो कहा सो सत्य है पर मेरे वचन को सुन ॥ २६ ॥ साधक सहित सब हमने कैलास

गतव्यं शंकरालये। किं कन्याया च कथ्यंते ह्येकचित्तेऽव्यवस्थितम् ॥ २७ ॥ किंचिन्मात्रां प्रतिष्ठंति किंतु संख्या च पातने । चंपिकोवाच। अस्मिन्नेव पुरे रम्ये बहुकन्यासमाकुले ॥ २८ ॥ तिष्ठ तिष्ठ महासिद्धा भुंजन्तु विपुलां श्रियम्। अस्मिन्नेव पुरे भोगा भोक्तव्याः साधकैः सह ॥ २९ ॥ सर्वदैव समं सिद्धा भुंजन्तु विपुलां श्रियम्। पश्चाच्च मृत्युलोके वै जायंते सर्वसंपदः ॥ ३० ॥ साधकउवाच । किमर्थं चैव तिष्ठामि यागतासत्वयातने । स्थापिता च पुरा दिव्या कन्या सह विनिर्मिताः ॥३१॥ चंपिकोवाच । तच्छुत्वा वचनं तेषां गच्छाचार्य यथासुखम् । अस्मिन्न स्थाने न रुच्यंते यत्रेच्छा तत्र गम्यताम् ॥ ३२ ॥ मया त्वं पृच्छताचार्य कामिनो मदविव्हलाः । आराधिता मया पूर्वैः कामांधा मदविव्हलाः ॥ ३३ ॥ दिव्यवर्षसहस्राणि तत्र तुष्टो महेश्वरः।महापथेन ते सिद्धा गच्छंते च सुमध्यतः ॥ ३४ ॥

को जाने की प्रतिज्ञा की है ऐसे संकल्पवालों का कन्याओं से क्या उपयोग है ॥ २७ ॥ यहां थोडे काल तक रहके फिर भी यहां से गिरने का भय है चंपिका बोली बहुत कन्याओं से युक्त इस रमणीय नगर में ॥ २८ ॥ हे सिद्धों ? रहो २ इस नगर में साधक सहित बडे भोगों को भोगो ॥ २९ ॥ हे सिद्धो ? सर्वदा बड़ी श्री को भोगो पीछे सर्व संपन्न युक्त होके मृत्युलोक को जाना है ॥ ३० ॥ साधक बोला । हम किस प्रयोजन ऐसे दुःख यातना को सहें पहले ही ऐसी कन्या प्राप्त थीं ॥ ३१ ॥ चंपिका बोली । जब उनके वचन को सुना कहा कि हे आचार्य यहां रहने की तुमारी इच्छा नहीं है तो जहां इच्छा है तहां चले जाओ ॥ ३२ ॥ हे आचार्य ? हम कामी हैं मद से विव्हल हैं इस कारण प्रार्थना की थी तुमको मैने पूछा था ॥ ३३ ॥ हे सिद्धों ? दिव्य हजार वर्ष में शंकर प्रसन्न होते हैं तब महापथ को जाया जाता है ॥ ३४ ॥

त्वया पादप्रसादेन गृहमेकं च चंपिकाः । गृहीत्वा चंपिकामेकं प्रास्थिता पंचमुत्तम् ॥ ३५ ॥ साधकास्तिष्ठते तत्र तस्य चित्त समुद्भवेत् । साधकउवाच । ब्रूहि मे चंपिका सत्यं किं त्वया सुकृतं कृतम् ॥ ३६ ॥ एवं तु दिव्यलोकेस्मिन्नुत्पन्ना काम यौवनाः । गृहीत्वा साधका कन्या तावद्दृष्ट्वा च व्याकुलं ॥ ३६ ॥ साधकउवाच । क स्थानं कश्च लोकश्च किं पुण्यं फलमाप्यते । क्व तीर्थं च प्रसादेन किं गृह्णंति च साधकाः ॥ ३८ ॥ चंपिकोवाच । केदारनामक्षेत्रस्य तत्र मंदाकिनी नदी । केशेहजूपिकानाम लोके यदि परमां गतिः ॥ ३९ ॥ लोकेशजपनं कृत्वा भक्तिभावसमन्वितम् । नाचेष्टा क्वागता ज्ञाताः साधकाः सहसा स्थिताः ॥ ४० ॥ तस्य तीर्थप्रसादेन शिवसोपानमास्थितः । अप्सरसो मया प्राप्ता पूर्वकामसमन्विताः ॥ ४१ ॥ सर्वदेवसमोपेता राज्यं प्राप्तं मया त्विदम् । महारुद्र-

तुम्हारे चरण की कृपा से जो चंपिका हैं उनमें से एक को लेके महापथ को जाइए ॥ ३५ ॥ साधक तहां रहे चंपिका का कहना उनके मनमें आया। साधक बोला। हे चंपिके। तुमने क्या ऐसा पुण्य किया सत्य २ बोल ॥ ३६ ॥ इस प्रकार उस दिव्य लोक में उत्पन्न यौवनवती कन्याको देख वे साधक व्याकुल हुए ॥ ३७ ॥ साधक बोला । कहां स्थान है कौन लोक है कहां तीर्थ है उसके प्रसाद से क्या फल मिलता है ॥ ३८ ॥ चंपिका बोली। केदार नाम क्षेत्र में मंदाकिनी नदी केशजूपिका नाम परमगति देती है ॥ ३९ ॥ लोकेश जो है शिव तिसका जप भक्ति भाव से करने से दुष्ट बुद्धि दूर हो जाती है कहां गई मालूम नहीं होती ॥ ४० ॥ उस तीर्थ के प्रसाद से श्री शंकर का पद प्राप्त हुआ वहां अप्सरा जैसी पहले चाही थी वैसी मिली ॥ ४१ ॥ संपूर्ण देवताओं करके युक्त महारुद्र के प्रसाद से मैंने यह राज्य और महा-

प्रसादेन महापंथप्रदायकम् ॥ ४२ ॥ केदारस्यैव पथि च ये मृता हैमपूर्णिताः । शूलहस्ताः शिवसमाः भुंजंति विपुलां श्रियम् ॥४३॥ एवं तन्मेऽर्चनं सिद्धा गृह्णंति ह्येकसाधकाः ॥ तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा आचार्यः साधकैः सह ॥ ४४ ॥ साधकउवाच । शृणु कामिनि तत्वेन कस्ते धर्मः प्रकाशितः महापथं गता नैव तिष्ठस्यत्र तपस्विनी ॥४५॥ चंपिकोवाच । शृणुध्वं साधकाः सर्वे मम वाक्यं तु निश्चितम् । पृथिव्यां च बभूवैको राजा वै मंडलेश्वरः ॥ ४६ ॥ उग्रं राज्यं कृतं तेन नानालंकारवेष्टिताः । पृथिव्यां च हि तिष्ठंति राजपत्न्योऽधिकाः शुभाः ॥ ४७ ॥ महालक्ष्मीमहारत्नधनधान्यसमाकुले । तस्य राज्ञो गृहे रम्ये जाताहं बुधपुत्रिका ॥ ४८ ॥ कामरूपा कलाभिज्ञा यौवने मदविह्वला । पूर्वपुण्या कृतज्ञा च शुभवाक्यं समाचरम् ॥ ४९ ॥ धर्ममार्गदृशः सर्वे मंदभावेन वंचिताः ।

पंथ पाया ॥ ४२ ॥ केदार के मार्ग में जो हिम से दबकर मरते हैं वे शूल हाथ में लिए शिवके समान ही बड़ी संपत्ति को भोगते हैं ॥ ४३ ॥ हे सिद्धों ! इस प्रकार अर्चन करने से यह प्राप्त भया आचार्य साधकों सहित चंपिका के तिस बचन को सुन साधक बोले ॥ ४४ ॥ साधक बोला हे कामिनि ! तत्व से सुन यह कौन धर्म तैने प्रकाश किया महापथ को क्यों न गई यहां कैसे रही ॥ ४५ ॥ चंपिका बोली हे साधकों ! तुम सब मेरे वाक्य को निश्चय कर सुनो कि पृथिवी में एक मंडलेश्वर सार्वभौम राजा भया ॥ ४६ ॥ उसने बड़ा उग्र राज्य किया और उसकी पृथिवी में अनेक आभूषणों से युक्त बहुत स्त्री थीं ॥ ४७ ॥ बड़ी लक्ष्मी बड़े रत्न और धन धान्य युक्त उस राजा के घर में मैं कन्या उत्पन्न भई ॥ ४८ ॥ इच्छानुकूल रूपवाली और कामकला को जाननेवाली यौवन के मद से विह्वल पहले जन्म में बहुत पुण्य किया शुभ वाणी को बोलनेवाली कृतज्ञ थी ॥ ४९ ॥ धर्म मार्ग को दिखलाने

वाक्यं न रोचते तस्या अभ्याशे ह्यागतो मुनिः ॥ ५० ॥ तस्यार्थं सिद्ध शृणु च मनसा धर्मप्रीतये । तत्फलं भुंजते सर्वे पूर्वकर्मोपभोगिनः ॥ ५१ ॥ देहश्च धार्यते पूर्वैरिद्धते नारिकुंडके । पूर्वजेन च न मां प्राप्तो गृहीत्वा चेह साधकः ॥ ५२ ॥ कामरूपकलाभिज्ञं तेन संराधितेश्वरम् । वासितं च पुरं दिव्यं कोटिसुंदरिसंगमम् ॥५३॥ मम पुरीनायकः सोऽपि तिष्ठते च विनायकः । शिवमपृच्छत्कन्यायै शंकरेण चभाषितम् ॥५४॥ दातव्या वररुद्राय साधकाय सुरक्षिता । महापथे सदेहो यो ह्यागता पथि दिव्यकः ॥ ५५ ॥ वदते कन्यकाः सत्यं शृणु वाक्यं शुभावहम् । बलं तव महाश्रेष्ठमस्यास्त्वं रक्षणं कुरु ॥५६॥ शंकरं वरमिच्छामि साधकं वरवल्लभम् । मृषा न भाषणं मां च समादाय च गच्छ त्वम् ॥ ५७ ॥ प्रसाद ऐश्वरः सिद्ध: शृणु साधो महातपः । किं करोमि मोहरूपं तस्मात्संवसनं

वाले सब मंदभाव से वंचित किए पास में आते हुए महात्माओं का भला वचन मुझे अच्छा नहीं लगा ॥ ५० ॥ हे सिद्ध ! धर्मप्रीति के लिए मन से सुन कर्मफल जो हैं मनुष्य को प्राप्त होते हैं ॥ ५१ ॥ पूर्वजन्म के कर्मानुसार शरीर धारण किया जाता है पहले वाले ने मुझे लेके यहां रखा ॥ ५२ ॥ उसने काम रूप कलाओं को जाननेवाला ईश्वर आराधित करोड सुंदरियों से सुयुक्त दिव्य नगर निर्माण किया ॥ ५३ ॥ वही मेरी पुरी का मालिक है उसने कन्याओं के लिए शंकर को पूछा तब शिव ने कहा ॥ ५४ ॥ अच्छे प्रकार रक्षण किई गई यह कन्या रुद्र रूप साधक के लिए देना जो सदेह महापथ को आता हो ॥ ५५ ॥ कन्या सच कहती है मेरे वाक्य को सुनो तुम्हारा बल बहुत बड़ा है तुम इनकी रक्षा करो ॥ ५६ ॥ मैं शंकर रूप साधक को पति चाहती हूं मेरा कहना असत्य नहीं तुम मुझे ले चलो ॥ ५७ ॥ हे साधो ! सुनिए मुझे ईश्वर का प्रसाद सिद्ध है परन्तु क्या करूं मोहरूप से

मम ॥ ५८ ॥ प्रकटे ह्यांतरे देशे सहिता शब्दभाषिते सेवा वासादिभक्तिश्च रक्ष्यते च गृहे मया ॥ ५९ ॥ तिष्ठन्तः प्रथमं सिद्धास्ते रोचंते च संगमे । पाश्चच्च ह्यागताः सिद्धास्ते भाषंते स्म नायकम् ॥ ६० ॥ पृच्छन्तः साधकाः सर्वे भाषिते ह्यामरांगने । त्यक्त्वा तु चंपिकालोकं गतास्ते चोत्तरामुखम् ॥ ६१ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम द्वाविंशः पटलः ।

ईश्वरउवाच । ॐ अग्रतो दृश्यते तत्र पुंगिरिर्नाम पर्वतः । सूर्यकोटिप्रतीकाशोऽग्निज्वालासमप्रभः ॥ १ ॥ योजनानां शतं चैव दृष्ट्वा च पर्वतोत्तमम् । उत्तमं शिखराकारं रक्तकांतिविभूषितम् ॥ २ ॥ सौवर्णकास्तथा वृक्षाः फलपुष्पसमान्विताः । सर्वाभरणसंयुक्ता देवास्तत्र समागताः ॥ ३ ॥ सप्तद्वीपा वसुमती सप्तसागरसंयुता । तस्मिंस्तु शिखरारूढः पश्यते सर्व-

वसी हूं ॥ ५८ ॥ भीतर बाहर शब्द जो कहा जाता सेवा और वास भक्ति मुझसे रक्षण किई जाती है ॥ ५९ ॥ सिद्धलोक पहले संगम को रोचते थे पीछे वहां के नायक से बोलने लगे ॥ ६० ॥ सब साधकों ने उस नायक से भाषण कर चंपिका को छोड उत्तर दिशा को गए ॥ ६१ ॥ इति श्री केदारकल्पे शिवपुरणे शिवकार्तिकेय संवादे भाषाटीकायां कैलासगमनंनाम द्वाविंशःपटलः ॥

शंकर बोले । वहां से वे साधक जब चले तो आगे पुंगिरिनामा पर्वत दृष्ट आया जो करोड सूर्य के समान प्रकाशवाला और अग्नि की ज्वाला के समान प्रभावाला है ॥ १ ॥ सैकड़ों योजनों से उस पर्वत को देखा जो कि बड़ा उत्तम शिखराकार और लाल कांति से भूषित था ॥ २ ॥ तहां सुवर्ण के वृक्ष फल फूलों से युक्त और सब आभरण युक्त देवता भी आए हुए थे ॥ ३ ॥ उस शिखर में चढ़ सप्तद्वीप सागर सहित पृथ्वी सब दृष्ट आई ॥ ४ ॥

गोचरम् ॥ ४ ॥ सप्तसागरपृथ्वी च गोष्पदं चात्र दृश्यते । पथं भयानकं दृष्ट्वा मंत्रं जप्त्वा च निर्मलम् ॥ ५ ॥ अथ मंत्रः । ॐ हुं क्षीं क्षीं हूं ॐ हुं फट् स्वाहा ॥ अघोरोऽयं महामंत्रो महासिद्धिकरो नृणाम् ॥ ६ ॥ महाविघ्नहरं नित्यं स्वर्गपंथ-प्रदायकम् । मेरुशृंगं महारुद्रं दिव्यमालाकुलध्वजम् ॥ ७ ॥ पश्यतां तस्य शैलस्य कलापूर्णं सभा पुरी । आपदा कर्महंता च वैताला यक्षराक्षसाः ॥ ८ ॥ गणगंधर्वसंस्थानं पुरीं पंचक-लान्वितां । शतयोजनविस्तीर्णां रत्नकांचनभूषिताम् ॥ ९ ॥ ब्राह्मणा वेदनिर्घोषैर्वैडूर्यमणिरश्मिभिः । ऋषयो यक्षगंधर्वा एवं ते पुरवासिनः ॥ १० ॥ इंद्रस्य नगरी दिव्या श्रूयते कन्यको-त्तमाः । ज्वलिता पद्मरागस्य वैडूर्यमणिशोभिताः ॥ ११ ॥ इंद्रनीलमहानीलैर्दृश्यते च मनोहरम् । तिष्ठंति च ततः सर्वे

संपूर्ण सप्तसागर सहित पृथ्वी गौ के पैर के यानी गौ के खुर के समान दृष्ट आई मार्ग को भयानक देख सिद्ध लोग निर्मल अघोर मंत्र को जपने लगे ॥ ५ ॥ यह अघोर मंत्र है जो मनुष्यों की सब सिद्धि करनेवाला है ॥ ६ ॥ और सदा संपूर्ण विघ्न को नष्ट करने वाला स्वर्ग के मार्ग को देने वाला है मेरु के शिखर पर दिव्य ध्वजों की माला से युक्त मेरुशिखर देखा ॥ ७ ॥ उसको देख तहां एक उत्तम पुरी थी औ सब आपत्ति को हरनेवाले यक्ष राक्षस वेताल हैं ॥ ८ ॥ तहां गणगधर्वों का संस्थान है और रत्न और सुवर्ण से भूषित सौ योजन विस्तीर्ण पंचकला युक्त पुरी वह पुरी है ॥ ९ ॥ ब्राह्मणों के वेदघोष वैडूर्य मणिकी कांतियों से युक्त ऋषि यक्ष गंधर्व और पुरवासी जनों से युक्त ॥ १० ॥ सुना है कि इंद्र की पुरी में उत्तम कन्या हैं परन्तु यहां पद्मराग मणियों से दैदीप्यमान और वैडूर्य मणियों से शोभायमान कन्या दृष्ट आई ॥ ११ ॥ इंद्रनील महानील मणियों से मनोहर दृष्ट आई और तहां सब स्त्री पुत्रों

पुत्रदारासमन्विताः ॥ १२ ॥ क्षीरोदधि यथा विष्णुं संप्राप्ते दीर्घनिद्रया। तत्र स्थाने तथा लोके भुंजंति विपुलां श्रियम् ॥१३॥ स्वयं तुष्टो महादेव उमासार्धं त्रिलोचनः। अर्चयित्वा ऋषिः सर्वे गणगंधर्वसेविताः ॥ १४ ॥ भेरीमृदंगशब्देन शंखतुर्या च वेणुकाः। गीतं गायंति गंधर्वा वीणा वाद्यंति सुंदरी ॥१५॥ तालवादननिर्घोषैर्लिंगस्याग्रे निरंतरम्। केचित्पक्षोपवासैश्च केचिन्मासोपवासिनः ॥ १६ ॥ केचित्पुष्पफलाहारं केचिन्मारुतभोजनम्। अग्निहोत्र रताः केचित् केचित्पूज्यंति ब्राह्मणम् ॥ १७ ॥ केचित्कामरता शक्तिः केचिद्विपुलभोजनाः। केचिद्यज्ञरता विप्रा केचिल्लोका तपंति च ॥ १८ ॥ केचिच्च पवना शक्तिः केचिध्यानतपोरताः। ऊर्ध्वपादास्थिताः केचित्केचिच्चांद्रायणेरताः ॥१९॥ एकपादेस्थिताः केचित् केचिद्येकांगुष्ठया। महाध्यानरता योगी वायुविंदुसमागमम् ॥ २० ॥ इति

सहित रहती हैं ॥ १२ ॥ क्षीरसागर में जैसे दीर्घ निद्रा को प्राप्त हुए विष्णु हैं वैसे इस स्थान में बड़ी संपत्ति को भोगते हैं ॥ १३ ॥ यहां उमासहित शिव भगवान् स्वयं प्रसन्न रहते हैं ऋषि सब गण गंधर्व से सहित पूजन करते हैं ॥१४॥ तहां भेरी मृदंग शंख तुर्य वेणुओं के शब्दों से गंधर्व गीत गाते हैं स्त्री वीणा बजाती हैं ॥ १५ ॥ और तालवाद करिके नित्य लिंग के आगे नाचते हैं कोई एक पक्ष तक कोई मास तक उपवास करते हैं ॥ १६ ॥ कोई फल फूल के आहार करते हैं कोई वायु भोजन करते हैं कोई अग्नि होत्र में तत्पर हैं ॥ १७ ॥ कोई काम में तत्पर कोई अधिक भोजन करनेवाले हैं कोई यज्ञ याग में तत्पर हैं कोई तप करते हैं ॥ १८ ॥ कोई वायु समान बल वाले कोई ध्यान और तप में तत्पर हैं कोई पांव को ऊपर किये कोई चांद्रायण व्रत कर रहे हैं ॥ १९ ॥ कोई एक पांव से खडे कोई एक अंगूठे से खडे कोई अष्टांग योगमें स्थित कोई ध्यान में स्थित कोई जल के बिंदु को खानेवाले हैं ॥ २० ॥

श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम त्रयोविंशः पटलः ।

एवं बहुविधा लोका अर्चयंति सदाशिवम् । भृगुर्मुनिर्नारदश्च वाल्मीकिः कश्यपस्तथा ॥ १ ॥ मरीचिमार्कंडेयदुर्वासाव्यासपंडिताः । वशिष्ठगौतमश्चैव कृष्णद्वीपा च अंगिरा ॥ २ ॥ ऋषिकन्या रथारूढा दृष्ट्वा काममयो ध्वनिः । गौरी च सदृशा सर्वे पद्मिनी मृगलोचनी ॥ ३ ॥ दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः । दिव्यपुष्पाशिरोबध्दा दिव्याभरणभूषिताः ॥४॥ दिव्यदेहा महाकाया दिव्यदेहसमावृता । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिता ॥ ५ ॥ नातिदीर्घ नातिस्थूला करिकुंभौ कुचस्तथा । एवं सर्वगुणैर्युक्ता ऋषिकन्या मनोरमाः ॥ ६ ॥ सिद्धाश्चैवागता दृष्ट्वा आगता साधकाश्रये । पश्चाच्च साधकाः सर्वे वृंदे वृंदे सहस्रशः ॥ ७ ॥ स्वागता भो महासिद्धा कन्या-

इति श्री केदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेय संवादे भाषाटीकायां कैलासगमनंनाम त्रयोविंशः पटलः ॥

इस प्रकार बहुत तरह के लोग भगवान् शिव को पूजते हैं भृगु नारदमुनि वाल्मीकि कश्यप ॥ १ ॥ मरीची मार्कण्डेय दुर्वासा व्यास प्रभृति पंडित बशिष्ठ गौतम कृष्ण द्वैपायन अंगिरा ॥ २ ॥ ऋषिकन्या रथ में चढी सुंदर स्वरवाली गौरी के समान सब पद्मिनी और मृगनयनी ॥ ३ ॥ दिव्य वस्त्र धारण किए और दिव्य गंध लेपन किए दिव्य पुष्प शिर में रखे दिव्य आभरणों से आभूषित हुई ॥ ४ ॥ दिव्य शरीर वाली हाथों में कंकण पहने हार बाजूबंदों से अलंकृत ॥ ५ ॥ न बहुत लंबी न बहुत स्थूल हाथि के गंडस्थल के समान कुचोंवाली इस प्रकार सब गुण संपन्न मन को हरनेवाली ऋषि कन्या ॥ ६ ॥ ये सब साधकों को आते देखवे कन्या उनके निकट आई पीछे सब समुदाय २ हो स्थित हुई ॥ ७ ॥ कन्या बोली हे सिद्धो ! कहांसे आए और कहांको

स्तत्र वदंति च ॥ कन्यकाऊचुः । स्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते ॥ ८ ॥ एतद्ब्रूहि महाचार्य साधकैः परिवेष्टितः ॥ साधकउवाच ॥ कथयामि महाकन्या शृणु मे वचनं परम् ॥ ९ ॥ आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये । कन्यकाऊचुः ॥ अस्मिन्स्थाने महावीरा नानाभोगसमाकुलाः । भुंजंति सस्त्रियाः सर्वे जरामृत्युविवर्जिताः ॥ १० ॥ साधक उवाच । मम भोगा न रुच्यंते सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । अस्माभिस्तत्र गंतव्यं यत्र ब्रह्मा हरो हरिः ॥ ११ ॥ यत्र स्थाने महादेवस्तत्र गच्छंति कामिनी । साधकाः सहसा कन्या गता यत्र महामुनिः ॥ १२ ॥ ऋषिभिर्महतो दृष्ट्वा हर्षतुष्टो समाहिताः स्वागता भो महासिद्धा ऋषिस्तत्र वदंति च ॥ १३ ॥ ऋषिरुवाच । कन्यकास्तत्र तिष्ठंति संख्या चैव न विद्यते एतानि सर्वरूपाणि क्रीडयंति दिशो दश ॥ १४ ॥ साधक उवाच । किमर्थं भोगमायुष्यं पश्चाच्च किं भविष्यति । एतद्ब्रूहि

जाते बडे आदर से स्वागत करने लगीं ॥ ८ ॥ हे आचार्य साधकों सहित आप कहिए तब साधक बोला हे कन्याओं मै कहता हूं सुनो ॥ ९ ॥ हम मृत्युलोक से आए और शंकर के स्थान को जाते हैं तब कन्या बोलीं हे वीरों ? इस स्थान में बडे भोग हैं जरा और मृत्यु नहीं स्त्रियों सहित उत्तम भोगों को भोगो ॥ १० ॥ साधक बोला मेरी भोग की इच्छा नहीं है सच २ कहता हूं जहां ब्रह्मा विष्णु शिव हैं वहां हमने जाना है ॥ ११ ॥ हे कामिनि ? जिस स्थान में शिव हैं वहां जाना है तब वह कन्या उनको मुनिके पास लेगई ॥१२॥ ऋषियों ने साधकों को देखा प्रसन्न हो कहने लगे हे सिद्धो ! आइए विराजिए ॥ १३ ॥ ऋषि बोले । यहां असंख्य कन्या हैं रूप उनका अति उत्तम है दशदिशाओं में क्रीडा करती हैं ॥ १४ ॥ साधक बोला यहां आयु कितनी है

मुनिश्रेष्ठ कुत्र स्थानेषु गम्यते ॥ १५ ॥ ऋषिरुवाच । स्वरूपं च ततो कन्या क्रीडयंति यथासुखम् । क्रीडयित्वा महाभोगं यावच्चंद्रार्कतारकाः॥१६॥भुक्त्वा च विपुलान् भोगान् मृत्युलोके व्रजंति च । सर्वकामसमृद्धश्च जायते विपुले कुले ॥ १७ ॥ सर्वक्रियासमः सिद्धा सर्वाचारो भवेच्छुचिः । सर्वशास्त्रे भवेद्वक्ता सर्वश्रीकसमृद्धिमान् ॥ १८ ॥ चक्रवर्त्ती भवेद्राजा जातो जातिस्मरो भुवि । भुक्त्वा भोगान्महाश्चर्यान् विविधान्मनसेप्सितान् ॥ १९ ॥ आचार्य उवाच । यदि भूयो मृत्युलोके गंतव्यं च महामुने । किं ततो राज्यभोगेन शिवलोको न प्राप्यते ॥२०॥ साधकान्प्रस्थितान्दृष्ट्वा निःश्वसंति वराननाः। यौवनस्था मदोन्मत्ताः सर्वशास्त्रविशारदाः ॥ २१ ॥ सर्वलक्षणसंपन्नाः सुभोगैर्वस्त्रकुंकुमैः । सुकोमलाश्चंद्रवदना साधकास्ते

पीछे क्या होगा कहां जाना होता है हे मुने ! यह सब कहिए ॥ १५ ॥ ऋषिबोला । ये स्वरूपवती कन्या हैं जब तक चंद्र सूर्य तारे हैं तब तक इनके साथ क्रीड़ा पूर्वक बड़े भोगों को भोगो ॥ १६ ॥ यहां बहुत बड़े भोगों को भोगकर मृत्युलोक को जाते हैं तहां जाके बड़े शुद्ध और संपन्न कुल में जन्म होता है ॥ १७ ॥ सर्व कामों में सिद्धिवाला सब आचारों से शुद्ध संपूर्ण शास्त्रोंका वक्ता संपत्तिवाला और सब ऋद्धिओं से युक्त होवे ॥ १८ ॥ चक्रवर्ती राजा होके जातिस्मरण रहे बड़े ऐश्वर्य को जो इच्छानुकूल हों उनको भोगे ॥ १९ ॥ आचार्य बोला यदि फिर भी मृत्युलोक को जाना है तो और शिवलोक नहीं मिलता तो उस राज्य भोग से क्या है ॥ २० ॥ संपूर्ण शास्त्र को जाननेवालीं यौवन में प्राप्त मद से उन्मत्त वे वरांगना साधकों को जाते देख श्वास भरने लगीं ॥ २१ ॥ कन्या सब संपूर्ण संपन्न थीं सुंदर भोग वस्त्रों से युक्त बड़ी कोमल चंद्रमा के समान मुखवालीं थीं उनको छोड़ साधक

त्यजंति च ॥ २२ ॥ तत्र ते साधकाः सर्वे गतास्ते चोत्तरामुखे । यः शृणोति महापंथं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २३ ॥ शिवकल्पं पठति च ईश्वरं प्रति गच्छति ॥ २४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम चतुर्विंशः पटलः ।

श्रीश्वर उवाच । ॐअग्रतो दृश्यते तत्र हेमस्तंभपरिच्छदः । ज्वलंतं पद्मरागं च चंद्रकांतिसमप्रभम् ॥ १ ॥ दर्शनं ह्यद्भुतं रूपं दृष्ट्वा तत्र महामुनिः । संप्राप्ताः साधकास्तत्र ऋषिं दृष्ट्वा ह्यधोमुखम् ॥२॥ हेमस्तंभं ततो दृष्ट्वा नानारत्नविभूषितम् । अर्धयोजनविस्तीर्णं उच्छ्रायो दशयोजनम् ॥ ३ ॥ चंद्रादित्यसमं तेजश्छाया तस्य सुशीतला । इंद्रनीलमहानीलैः पद्मरागोपशोभितम् ॥ ४ ॥ ध्वजमालाकुलं दिव्यं चित्रकर्मोपशोभितम् । तस्य शृंगे पुरं दिव्यं शोभितं धवलं गृहम् ॥ ५ ॥

चले ॥ २२ ॥ वे साधक लोग उत्तरमुख हो चले गए जो कोई इस महापंथ को सुनते हैं वे सब पापों से छूट जाते हैं ॥ २३ ॥ शिवकल्प को जो पढ़ता है वह साक्षात् शंकर के पास पहुंचता है ॥ २४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम चतुर्विंशः पटलः ।

शंकर बोले वे साधक जब आगे चले तो तहां सुवर्ण के स्तंभयुक्त पद्मराग मणि और चंद्रकांतमणि के समान भूमि दृष्ट आई ॥ १ ॥ तहां आश्चर्य रूप वाले मुनि को देखा जिसका मुख नीचे है साधक लोग तहां गए उस मुनि को देखा ॥ २ ॥ और नाना रत्नों से भूषित सुवर्ण के स्तंभ को देखा जो आधा योजन चौड़ा और दश योजन ऊंचा है ॥ ३ ॥ जिसका तेज सूर्य चंद्र के सदृश है छाया बड़ी शीतल और इन्द्रनील महानील पद्मराग रत्नों से शोभित है ॥ ४ ॥ ध्वजों की मालों से युक्त चित्रकर्मों से शोभायमान है उसके शिखर पर एक दिव्य पुर है वह स्वच्छ घरों से विराजमान है ॥ ५ ॥ उसमें पहल

तस्य मध्ये महालिंगं अप्सरःस्थापितं पुरा । पूजयंति ततः कन्या त्रिकालं भक्तवत्सलम् ॥ ६ ॥ नृत्यंत्यप्सरसस्तत्र गीतं गायंति योषितः । प्रेक्षणीयं प्रकुर्वंति वंशवादित्रनादितम् ॥७॥ भेरीमृदंगशब्देन शंखतूर्यरवेण च । गानं कुर्वंति गंधर्वा अर्चयित्वा वृषध्वजम् ॥ ८ ॥ हेमपुष्पैर्महाभक्ताः पूजयंति ह्यनेकधा । पटहो वेणुवंशश्च वाद्यंते विविधानि च ॥ ९ ॥ चंदनागरुकर्पूरदिव्यैर्धूपैश्च धूपिताः । तस्य शृंगे महासेन गतास्ते सर्वसाधकाः ॥१०॥ अर्चयित्वा महादेवं हेमपुष्पैः समन्विताः । आरार्त्तिकं प्रकुर्वंति लिंगस्याग्रे निरंतरम् ॥ ११ ॥ तत्र ते साधकाः सर्वे उत्तीर्णं तत्र तिष्ठति । पठंति सर्वशास्त्राणि चतुर्वेदभवो ध्वनिः ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा सर्वे प्रवक्ष्यंति ब्रूहि तस्य शुभाशुभम् । ततो दृष्ट्वा मुनिश्रेष्ठं साधको वाक्यमब्रवीत ॥ १३ ॥ साधक उवाच । मया दृष्ट्वा महादुःखमूर्ध्वपादं

अप्सरा का स्थापित किया हुआ लिंग है उस भक्तवत्सल का कन्या त्रिकाल पूजन करती हैं ॥ ६ ॥ तहां अप्सरा नाचती हैं स्त्री लोग गीत गाती हैं और वंशवाद्यों के शब्द करते हैं ॥ ७ ॥ भेरी मृदंग शंख तुर्यों को बजाते हुये श्रीभगवान का पूजन कर गंधर्व गाते हैं ॥ ८ ॥ बड़े भक्त लोग सुवर्ण के पुष्पों से अनेक तरह पूजन करते हैं और पटह वेणु वंश आदि नाना वादित्र बजाते हैं ॥९॥ चंदन अगरु कपूर आदि दिव्य धूपों से धूपित उस शिखर पर वे सब साधक गए ॥ १० ॥ सुवर्ण के पुष्पों से महादेव का पूजन कर लिंग के आगे नित्य आर्त्ति करते हैं ॥ ११ ॥ वे साधक तहां स्थित होकर चारों वेद और सर्व शास्त्र पढ़ने लगे ॥ १२ ॥ तब साधक शुभाशुभ जानने की इच्छा कर मुनि को बोलने लगे ॥ १३ ॥ साधक बोला । मैंने आपको देखा नीचे मुख और ऊपर को पांव किए हैं ऐसा कठिन तप किस कारण किया जाता है

ह्यधोमुखम् । सत्यं ब्रूहि महासिद्ध किं दुःखं हि तपः कृतम् ॥ १४ ॥ ऊर्ध्वपाद उवाच । पूर्वजन्मकृतं पापमूर्ध्वपादमधोमुखम् । मृत्युलोकेषु संजातो राजाहं मंडलेश्वरः ॥ १५ ॥ अहर्निशं शिवध्यानं पूजयित्वा पुनः पुनः । यजंतो हि महादेवं न विष्णोरर्चनं कृतम् ॥ १६ ॥ विष्णुधाम महादिव्यं प्रसंगाद्गतवानहम् । विष्णुना शापितं तत्र ह्यूर्ध्वपादमधोमुखम् ॥ १७ ॥ साधक उवाच । अस्मिन् स्थाने सुराः सर्वे गणगंधर्वसेविताः । अप्सरोयोषितः सर्वा भुंजंति विपुलां श्रियम् ॥ १८ ॥ एकाकी त्वं मुनिश्रेष्ठ दुःखसागरपीडितः । कस्मिन्काले भवेन्मोक्षो भविष्यसि महासुखः ॥ १९ ॥ ऊर्ध्वपाद उवाच । कोटिसिद्धा गमिष्यंति मम मोक्षो भविष्यति । चांद्रायणं भवेत्कृच्छ्रं तदा मोक्षो भविष्यति ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमनं नाम पंचविंशः पटलः ।

॥ १४ ॥ ऊर्ध्वपाद बोला पहले जन्म के पाप से ऊपर को पांव नीचे मुख हुए हैं मैं मृत्युलोक में चक्रवर्ती राजा था ॥ १५ ॥ रात्रि दिन मैंने केवल शिव ही का ध्यान पूजन किया बारंबार महादेव को यजन करता हुआ कभी विष्णु का पूजन नहीं किया ॥ १६ ॥ एक समय प्रसंग से मैं विष्णु के महादिव्य धाम को गया था तो विष्णु ने ऐसा शाप दिया ॥ १७ ॥ साधक बोले । इस स्थान में संपूर्ण देवतागण गंधर्वों सहित अप्सरा देवांगना सब बड़ी संपत्ति को भोग रहे हैं ॥ १८ ॥ केवल तुम अकेले बड़े दुःख को भोग रहे हो इस शाप का मोक्ष कब होगा जिससे सुखी हो ॥ १९ ॥ ऊर्ध्वपाद बोला । जब करोड़ सिद्ध शिवलोक को जायेंगे या कृच्छ्रचांद्रायण व्रत किया जाय तब इस शाप का मोक्ष होगा ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिव कार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम पंचविंशः पटलः ।

आकाशपथमारूढाः पश्यंति च हिमालयम् । तत्र च्छाया महाकायं मेरुशृंगं व्यवस्थितम् ॥ १ ॥ गच्छंति च महासिद्धाः पथि चैव हिमालये । तस्य संदर्शनेनैव मम मोक्षो भविष्यति ॥ २ ॥ हेमस्तंभं च ते दृष्ट्वा सर्वरत्नविभूषितम् । अर्धयोजनविस्तीर्णो उच्छ्रायो दशयोजनम् ॥ ३ ॥ चंद्रादित्यसमज्योतिश्छाया तस्य सुशीतला । इंद्रनीलमहानीलैः पद्मरागोपमानि च ॥ ४ ॥ ध्वजमालाकुलं दिव्यं नानारत्नोपशोभितम् । ज्वलंतं पद्मरागं च स्फुरन्तं किरणैर्यथा ॥ ५ ॥ तस्य शृंगे महादिव्यं शोभितं धवलं गृहम् । तस्य मध्ये महालिंगं ह्यप्सरःस्थापितं पुरा ॥ ६ ॥ पूजयंति तथा कन्यास्त्रिकालं भक्तवत्सलम् । नृत्यंत्यप्सरसस्तत्र गायंति ताश्च योषितः ७ प्रदक्षिणं प्रकुर्वंति वेणुवाद्यं च नादितम् । शंखतूर्यं च वीणा च भेरीमृदंगशब्दयोः ॥ ८ ॥ गीतं गायंति गंधर्वा अर्चयंति

आकाश मार्ग को चढ़कर सुमेरु पर्वत के शिखर में स्थित हिमालय पर्वत की छाया को देखते हैं ॥ १ ॥ सिद्ध लोग वहां हिमालय मार्ग में जावें उसका दर्शन होने से मेरा शाप से मोक्ष होगा ॥ २ ॥ वहां जो हेमस्तंभ है वह आधा योजन चौड़ा दश योजन ऊँचा रत्नों से जड़ित है उसको देखा ॥ ३ ॥ सूर्य चन्द्र के समान जिसकी ज्योति प्रकाश है और छाया बड़ी ठंढी है इन्द्रनील महानीलमणि पद्मरागमणि के कांतिवाला है ॥ ४ ॥ ध्वजों की माला करके युक्त नाना रत्नों से शोभायमान जलता हुआ पद्मरागमणि के समान चमकता ॥ ५ ॥ उसके शिखर में बड़ा उत्तम दिव्य शुभ्र मन्दिर शोभायमान है उसमें पहले अप्सरा ने शिवलिंग को स्थापन कर रखा है ॥ ६ ॥ उस लिंग की तीनों काल में कन्या पूजन करती हैं अप्सरा नाचती हैं देवांगना गाती हैं ॥७॥ उस भक्तवत्सल लिंग की वे प्रदक्षिणा करते हैं शंख वेणु तूर्य वीणा भेरी मृदंगों का शब्द करते हैं ॥ ८ ॥ गंधर्व लोग गीत गाते हैं सुवर्ण के पुष्पों से

महेश्वरम् । हेमपुष्पैर्महापद्मैरर्चयंति ह्यनेकधा ॥ ९॥ गुग्गुलैर्धूपितास्तत्र कर्पूरैर्मंत्रितस्तथा । धूपितं देवदेवस्य अतिगंधं मनो रमम् ॥ १० ॥ सर्वप्रकारैः कुर्वीत धूपदीपसमन्वितम् । पटहा सलवीणाश्च वाद्यंते बहु नैकधा ॥ ११ ॥ कौतूहलं बहुगुणान्नानारंगमनेकधा । चंदनं ह्यगरुं तत्र कर्पूरं च सुवासितम् ॥१२॥ तस्य शृंगे महासेन गतास्ते सर्वसाधकाः । अर्चयित्वा महादेवं हेमपुष्पैस्तु पूजितम् ॥ १३ ॥ पूजयेध्दूपदीपाद्यैः कर्पूरागरुचंदनैः । आवासास्तत्र सौवर्णा अग्निज्वालासमप्रभाः ॥ १४ ॥ मौक्तिकैश्चंद्रकांतैश्च प्रासादा विविधास्तथा । प्रवालैश्च महामूल्यैर्मणिकिरणोपशोभितम् ॥ १५ ॥ संप्राप्ता साधकास्तत्र गृहद्वारमुपस्थिताः ॥ १६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे कैलासगमनं नाम षड्विंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । ॐ पश्यंति दक्षिणे भागे पृथिव्यां तिलकं

और महाकमलों से शिव भगवान का पूजन करते हैं ॥ ९ ॥ गुग्गुल का धूप देते हैं मंत्रित कर्पूर की आर्ति करते हैं और अत्यन्त मनोरम गंध से शिवजी को धूपित करते हैं ॥ १० ॥ सब प्रकार धूप दीप करते हैं और पटह वीणा इत्यादिक अनेक प्रकार बहुत बाजे बजते हैं ॥११॥ और बड़ा कौतूहल होता है नाना रंग अनेक तरह के अगरु चंदन कर्पूर गंध से सुगंधित करते जाते हैं ॥१२॥ हे महासेन ! उस शिखर में साधक लोग पहुंचे सुवर्ण पुष्पों से महादेवजी की तहां पूजा हो रही थी ॥ १३ ॥ और अनेक प्रकार धूप दीपादि अगरु चंदन से अर्चना हो रही थी और अग्नि शिखा के समान सुवर्ण के मंदिर देखे ॥१४॥ और वे मन्दिर बड़े सुन्दर हैं मोती और चन्द्रकान्त शिला उन्में लगे हैं बहुत मूल्य के प्रवाल और मणियों से शोभित हैं ॥ १५ ॥ साधक तहां घर के द्वार में उपस्थित हुए ॥ १६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवकार्तिकेयसंवादे शिवपुराणे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम षड्विंशः पटलः ।

शिवजी बोले । तहां दाहिनी ओर में एक बड़ा दिव्य स्थान दृष्ट आया

यथा । हंसस्वरेण दिव्येन वदंति च सुरोत्तमाः ॥ १ ॥ देवदानवगंधर्वा पश्यंते चैव साधकाः ॥ साधक उवाच । मनुष्यसदृशं वाक्यं कस्य संवदते गृहः ॥ २ ॥ महारम्यं महादिव्यं ह्यधऊर्ध्वे दिशो दश । गृह उवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धाः क्व स्थाने चैव गम्यते ॥ ३ ॥ सिद्ध उवाच । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये । गृहस्य वचनं श्रुत्वा साधका विस्मयं गताः ॥ ४ ॥ नैव दृष्टं श्रुतं वापि कनकं वदते गृहम् । पृच्छंति साधकाः सर्वे गृहमेकाग्रचेतसः ॥ ५ ॥ ब्रूहि वेश्म ममाग्रेण कस्य संबंधिनो गृहम् । गृह उवाच । ततः प्रीताः स्तुतिं सिद्धाः दृश्यते न महागृहम् ॥ ६ ॥ गृहसंबंधिनो कस्य सर्वलक्षणसंयुतम् । हेममयं सुविस्तीर्णं सर्वालंकारभूषितम् ॥ ७ ॥ मुक्तादिकैर्महाभागैर्वैडूर्यमणिशोभिताः । गोवत्सशतसंकीर्णं नानाविहगसेवि-

मानो यह पृथिवी का तिलक है जहां उत्तम देवता हंस के समान स्वर से गाते थे ॥१॥ साधक लोग तहां देवता दानव गंधर्वों को देखते भए तब साधक बोला यहां घरों में मनुष्य की जैसी बोली बोल रहे हैं ॥ २ ॥ घर बड़ा मनोहर दिव्य बना है चारों ओर दश दिशा बड़ी शोभायमान थीं वह घर साधकों से बोला कि हे सिद्धों ! आप कहां से आए कहां को जाते हैं ॥ ३ ॥ सिद्ध बोला । हम मृत्युलोक से आए हैं और कैलास को जाते हैं घर के वचन को सुन साधक विस्मय को प्राप्त भये ॥ ४ ॥ हमने कहीं आज तक घर बोलता नहीं सुना न देखा सब साधक एकाग्र चित्त होकर घर को पूछने लगे ॥ ५ ॥ हे घर ! हमारे आगे सब कहो यह किसका घर है ? घर बोला । हे सिद्धो ! इसका स्वामी नहीं दीखता ॥ ६ ॥ किसका यह घर है जो सर्वलक्षण संयुक्त है बड़ा लम्बा चौड़ा केवल सुवर्ण का बना हुआ है और संपूर्ण अलंकारों से युक्त है ॥ ७ ॥ उत्तम मोती और वैडूर्य मणियों से और गाय

ता ॥ ८ ॥ नानागंधर्वसिद्धाश्च नागानां सेवितं शिवम् ।
पुरंदरगृहं चैव प्राकारशतमाकुलम् ॥ ९ ॥ पदं पश्यंति
चाचार्यमेतत्कांचनवद्गृहम । उच्यंते साधकाः सर्वे किमिदं चैव
दृश्यते ॥१०॥ न मनुष्याश्च देवाश्च न यक्षा न च राक्षसाः ।
किन्नरा न च गंधर्वाः संपूर्णैः सदृशैर्भृतः ॥ ११ ॥ आस्थि-
ता भुवने नैव अधउर्ध्व दिशो दश । मम नाथकुले गत्वा
उदधेर्दक्षिणे तटे ॥ १२ ॥ स्वपाणिभ्योस्तो पथि महादेवस्य
साधुना ॥ पंथिरुवाच ॥ किमर्थं साध्यते देवं महादेवेन
भोगृहम् ॥१३॥ गृह उवाच ॥ ईश्वरस्य स्वयं लिंगं प्रकाशितं
तपोमुनिः । समुत्थं वै श्रुते नित्यं समुद्रस्य तटे शुभे ॥१४॥
तेनैव क्रियते स्वामी गृहस्य शततं वदेत् । न यत्र स्थाने
संकोधः एतत्पश्यंति कारणम् ॥ १५ ॥ यः स्थित्वा यत्र स्थाने
च तत्रासौ पार्वतीपतिम् । नंदनस्य गृहं नाम वेदशास्त्रार्थ-
पारगः ॥ १६ ॥ तेनाहं निर्मितः सिद्धा गृहं वै स्फाटिकं

घछड़ों से सुशोभित नाना पक्षियों से सेवित है ॥ ८ ॥ नाना गंधर्व नाग सिद्धों से सेवित सैकड़ों प्राकारों से संयुक्त पुरन्दर का अर्थात इन्द्र का यह घर है ॥९॥ इस घर को साधक देखते हैं जो सुवर्णमय है कहते हैं कि क्या अद्भुत दीखता है ॥ १० ॥ न मनुष्य न देवता न यक्ष न राक्षस किन्नर गंधर्व हैं ॥ ११ ॥ यह घर ऊपर नीचे दश दिशों में स्थित है समुद्र के दक्षिण तट में मेरे स्वामि ने ॥ १२ ॥ इसको स्थापन किया है यह महादेवजी ने पथिकों के लिए बनाया है यह देख पथिक बोले हे घर ! किसलिए महादेव ने बनाया ॥ १३ ॥ घर बोला । हे मुने ! ईश्वर का लिंग यहां प्रकाशित है ॥ १४ ॥ उसके स्वामी ने यह घर मोल लिया ॥ १५ ॥ इस स्थान में पार्वती के पति स्थित हैं यह नंदन का घर है जो वेद शास्त्र में पारंगत है ॥१६॥ हे सिद्धो ! उसने हमको

वदेत् । सोपि संगतपुष्पार्थं ततः क्षीरोदसागरे ॥ १७ ॥ यावद्वदंति ते सिद्धा नंदनो गृहमागतः । कारंडहेमपुष्पैश्च मुक्ता चंपकपूरिताः ॥ १८ ॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा तेषां कृत्वाभिवादनम् । नंदनोवाच । स्वागतं च महासिद्धा दुर्लभं तव दर्शनम् ॥ १९ ॥ कृतं च दुष्कृतं कर्म एकाकी विचराम्यहम् । साधक उवाच । ततः पृच्छाम्यहं ब्रूहि किं त्वया दुष्कृतं कृतम् ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने सप्तविंशः पटलः ।

एकाकी तिष्ठते चात्र सर्वलोकविवर्जितः । नंदनोवाच । अज्ञानाद्बालभावेन पुरा पूर्वे व्यवस्थिता ॥ १ ॥ पूर्वकर्मविपाकेन एतत्पापं कृतं मया । शुभं वाप्यशुभं वापि भुंक्ते कर्माणि चानघ ॥ २ ॥ यैर्दृष्टं स्फुटितं लिंगं दग्धखंडं च मेव च । समुत्थितं दुच्छ्रितं चापि शिवलिंगं न चालयेत्

स्फटिक मणियों से रचा है और वह पुष्प लेने क्षीरसागर को गया है ॥१७॥ इनके इतने कहने में नंदन घर को आया कारंडव अर्थात् हंस सुवर्ण पुष्प मोति चंपकों से पूरित ॥१८॥ अंजलि को बांध प्रणाम कर बोला । हे महासिद्धो ! आपका शुभागमन हो आपका दर्शन दुर्लभ है ॥१९॥ मैं बड़े दुःख से अकेला यहां विचरता हूं । साधक बोला । ऐसा तुमने क्या पाप किया इससे मैं पूछता हूं कहो ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने सप्तविंशः पटलः ।

यहां अकेला निर्जन स्थल में तुम रहते हो । तब नंदन बोला, पहले मैं बालक अवस्था से अज्ञान से यहां रहा ॥१॥ पहले के कर्म के विपाक से मैंने पाप किया है सिद्ध ! पूर्वकर्म के फल को अवश्य भोगना है ॥ २ ॥ जिनोने फूटा जला कटा शिवलिंग देखा उसको उखाड़ना नहीं चाहिए ऐसे

॥ ३ ॥ उद्यानजलमाभावः पुरी पंथेनमास्थिताः । पूर्वकर्मविपाकेन लिंगमुत्पाटितं मया ॥ २४ ॥ निःश्वासितं यथा नागा सर्वलोकविवर्जिताः । भुंजंति सर्वकर्माणि ह्येकस्तिष्ठाम्यहं वनम् ॥ ५ ॥ ब्रह्महत्यासहस्राणि गोहत्याशतानि च । कोटिकन्याहते पापं पितृमातृवधेन च ॥ ६ ॥ यत्पापं प्रभवेत्सिद्धा तत्पापं लिंगभग्नकम् । तेन पापेन संयुक्तं न गच्छेच्छंकरालये ॥ ७ ॥ साधक उवाच । एकाकी च मुनिश्रेष्ठ दुःखसागरपीडितः । कस्मिन्काले भवेन्मोक्षस्तन्मे ब्रूहि महामुने ॥ ८ ॥ नंदनोवाच । कोटिसिद्धा गमिष्यंति महापंथस्य दर्शनम् । प्रवक्ष्यामि शैव सर्वे मम मोक्षो भविष्यति ॥ ९ ॥ पूर्वकर्मविपाकेन एतत्पापं कृतं मया । भुनज्मि तेन कर्माणि ह्येकस्तिष्ठन्महामुने ॥ १० ॥ यादृशं स्फुटितं लिंगं दग्धं खंडं महामुने । दृष्ट्वा च एव दग्धानि शिवलिंगं न चालयेत् ॥ ११ ॥ एवं श्रुत्वा ततो सिद्धा गंतव्यं पवनो यथा ।

लिंग को नहीं लावै ॥ ३ ॥ बागीचे में जल न था मार्ग में नगर न था पूर्वकर्म के बल से मैंने लिंग को उखाड़ा ॥४॥ जैसा सब लोग नागों का विश्वास नहीं करते अपने कर्मों के वश मैं अकेला यहां रहता हूं ॥ ५ ॥ हजार ब्रह्महत्या सौ गौहत्या करोड कन्या मारने से माता पिता को मारने से जो पाप है ॥ ६ ॥ वह पाप शिवलिंग के तोड़ने या उखाड़ने से होता है–हे सिद्ध! इस कारण शिवलोक को नहीं जाता हूं ॥ ७ ॥ साधक बोला । तुम अकेला बड़े दुःख से रहते हो कब इस पाप से छूटोगे मुझे कहो ॥ ८ ॥ नंदन बोला । जब करोड़ सिद्ध लोग शिवलोक को जावेंगे महापथ में उनका दर्शन मिलेगा तब इस पाप से छूटूंगा ॥ ९ ॥ यह पहले जन्म के कर्म फल से पाप किया है उसको भोगता हूं जो अकेला यहां रहता हूं ॥ १० ॥ इस तरह फूटा टूटा कैसा भी लिंग हो या जला हो देखकर हेमुने ! उसको उखाड़ नहीं लावै ॥ ११ ॥ इस प्रकार वचन

तत्पश्चात्साधकाः सर्वे गता चैवोत्तरामुखे ॥ १२ ॥ इति श्री केदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमनं नाम अष्टाविंशः पटलः ।

ईश्वरउवाच । ॐअग्रतो दृश्यते तत्र अपूर्वं च मम प्रिये । अकाशे उत्तरे भागे ईशाने दिग्विभागके ॥ १ ॥ ज्वलंतः पद्मरागश्च सूर्यकांतिसमप्रभम् । ध्वजमालाकुलं दिव्यं नगेन्द्रो रत्नभूषितम् ॥ २ ॥ हेमशृंगे महाकूटे बद्धं दृष्टा च कांचनैः । द्वादशादित्यतेजाढ्यं नानारत्नप्रशोभितम् ॥ ३ ॥ सहस्रयोजनविस्तीर्णं उत्तुगं च चतुर्गुणम् । तस्य शृंगे पुरी दिव्यं चित्रकर्मोपशोभितम् ॥ ४ ॥ अप्सरोभिः स्थापितं लिंगं पद्मरागमयानि च । पूजयंति महादिव्यं त्रिकालं भक्तवत्सलम् ॥ ५ ॥ त्रिंशत्कोटिसहस्राणि पूज्यंते कन्यकोत्तमाः । भेरीमृदंगशब्देन शंखकोलाहलं तथा ॥ ६ ॥ दुंदु

को सुन सिद्ध लोग वायु के समान उत्तर दिशा को चले ॥१२॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे भाषाटीकायां कैलासगमनं नाम अष्टाविंशः पटलः ।

शिवभगवान् बोले । तहां से आगे उत्तर ईशान के ओर आकाश में एक अपूर्व दृष्ट आया ॥ १ ॥ दैदीप्यमान पद्मराग सूर्य की प्रभा के समान ध्वजों की मालाओं से व्याप्त दिव्य रत्नों से भूषित एक उत्तम पर्वत दृष्टआया ॥ २ ॥ सुवर्ण के शिखर में सुवर्ण से बंधा सूर्य के समान तेज युक्त नाना रत्नों से शोभायमान ॥ ३ ॥ हजार योजन विस्तीर्ण चार हजार योजन ऊंचा उसके शिखर में एक दिव्य पूरी चित्रकर्मों से शोभायमान है ॥ ४ ॥ तहां अप्सराओं से पद्मराग मणिका लिंग स्थापन किया है उस दिव्य भक्तवत्सल लिंग की तीनों काल पूजा होती है ॥ ५ ॥ तीस हजार कन्या उसकी पूजा करते हैं और भेरी मृदंग शंख आदि बाजों के शब्द होते हैं ॥ ६ ॥ और

भिर्वेदनिर्घोषैस्तालशृंगैश्च मर्द्दलैः । वंशवादित्रयंत्रस्थदिव्यैः पुष्पैः सुशोभिता ॥ ७ ॥ चंदनागरुकर्पूरैर्देवदारैः फलैस्तथा। कपालैः शंखपालैश्च नानापुष्पैः प्रशोभिताः ॥ ८ ॥ आगता च पुरस्थाने द्वारे तिष्ठंति साधकाः। पुरमध्ये गृहं तस्य बालार्केण समप्रभा ॥ ९ ॥ उत्तुंगशिखराकारं प्राकारं तोरणान्वितम् । कपाटार्गलसंयुक्तं वेष्टितं च पुरोत्तमम् ॥ १० ॥ द्वारोत्पाटितशब्देन द्वारपालेन धीमता। महावीरा महातेजा महाबलपराक्रमाः ॥ ११ ॥ स करोति महात्रासं सिद्धानां च मद्बलम्। तत्र ते च भयं दृष्ट्वा भयं तत्र न विद्यते ॥ १२॥ द्वारपालस्य रूपं च दृष्ट्वा भीताश्च साधकाः । प्रतीहार उवाच । किमर्थं साधकाः सर्वे ह्यस्थाने चैव गम्यते ॥ १३॥ अघोराय भयं दृष्ट्वा सर्वे तेषां पलायनम् । तस्य श्रुत्वा महाशब्दमघोरमक्षरं जपेत् ॥१४॥ ॐ श्रींश्रींश्रीं हुंहुंहुं फट्स्वाहा। इति मंत्रः ॥

दुंदुभियों के और वेदोंके ताल शृंग मर्द्दल वंशवाद्यों के शब्द होते हैं दिव्य पुष्प चढ़ाये जाते हैं ॥ ७ ॥ चंदन अगरु कर्पूर और देवदारु के फलों से कपाल शंखपाल आदि अनेक पुष्पों से शोभायमान ॥ ८ ॥ वह साधक उस पुर के द्वार में बैठे उस नगर में बाल सूर्य के समान कान्तिवाला एक घर था ॥ ९ ॥ जो बड़े ऊंचे शिखर के आकार का तोरणों से युक्त और कपाट अर्गला से संयुक्त बड़ा उत्तम नगर है ॥ १० ॥ द्वार के उखाड़ने के शब्द से बुद्धिमान् द्वारपाल ने जो बड़ा तेजस्वी बलपराक्रमी था ॥ ११ ॥ उसने बड़ा भय दिखाया तो सिद्धों ने उस भय को नहीं माना ॥१२॥ किंतु जब द्वारपाल के स्वरूप को सिद्धों ने देखा तब भयभीत हुए। द्वारपाल बोला कि तुम लोग किसलिए यहां आए कहां जाते हो ॥ १३॥ इस भय को देख और भयंकर शब्द को सुन साधक लोग अघोर मंत्र को जपने लगे ॥ १४॥ यह अघोर मंत्र सब

अघोरं च महामंत्रं सर्वविघ्नक्षयंकरम् । भीता जपित्वा महामंत्र-मघोरं देवदुर्लभम् ॥ १५ ॥ अघोरं जपमानश्च प्रतीहागे वदेत्ततः । वदते चशुभं वाक्यं विचार्य च पुनःपुनः ॥ १६ ॥ सौम्यरूपा महामूर्त्तिः सर्वालंकारभूषिता । नानारत्नविचित्रैश्च बहुवस्त्रैश्च शोभिता ॥ १७ ॥ स्वागतं च महासिद्धा कपाटोत्पाटनं कृतम् । तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कन्यास्तुष्टा हसंति च ॥ १८ ॥ कन्यका ऊचुः । क्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद्ब्रूहि महाचार्य साधको परिवेष्टितम् ॥ १९ ॥ साधक उवाच । कथयामि महाकन्या शृणु मे वचनं महान् । आगता मृत्युलाकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमनं नाम एकोनात्रिंशः पटलः ।

कन्यका ऊचुः । श्रुत्वाचार्य महाप्राज्ञ रुद्रभक्त्या महातपाः ।

विघ्नों को नाश करनेवाला है इस महामंत्र का जप किया जो देवतों को भी दुर्लभ है ॥ १५ ॥ अघोर मंत्र के जपने से द्वारपाल अच्छा विचार कर शुभ वाक्य बोला ॥१६॥ तब बड़ी सौम्य मूर्त्ति सब अलंकारों से भूषित चित्र विचित्र नाना रत्नों से बहुत वस्त्रों से शोभायमान ॥ १७ ॥ कन्या कपाट खोल हंसने लगीं बड़े प्रसन्न हो सिद्धों का स्वागत करने लगीं १८ कन्या बोलीं । हे सिद्धों ! तुम कहां से आए और कहां को जाते हो यह सब कहो ॥१९॥ साधक बोला । हे कन्याओं ! मैं कहता हूं मेरे वचन को सुनो हम मृत्युलोक से आए हैं शंकरालय को जाते हैं ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमनं नाम एकोनत्रिंशः पटलः ।

कन्या बोली । हे आचार्य ! हे महाप्राज्ञ ! पद्मावती नाम की देवी रुद्र की भक्त इस

देवी पद्मावती नाम इमां भुंजति सा पुरीम् ॥ १ ॥ प्रवेशं च पुरीं रम्यां नादैः स्वभिरकृलंतम् । नृत्यं गीतं तथा कृत्वा आचार्य स्वागतां वदेत् ॥ २ ॥ देवी पद्मावत्युवाच । स्वागता भुवनास्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । सर्वमाख्याहि तत्वेन यदि कल्याणमिच्छसि ॥३॥ साधक उवाच । शृणु देवि समासेन एवं कथाति साधकाः । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ ४ ॥ देवी पद्मावत्युवाच । तिष्ठंति साधकाः सर्वे न गंतव्यं महापथे । कामरूपाः स्त्रियः सर्वा जरामृत्युविवर्जिताः ॥ ५ ॥ देवौ हरिहरौ ब्रह्मा दृश्यंतेस्मिन् पुरे सदा । आगच्छंति चतुर्दश्यां सर्वे भक्तार्थकारणे ॥ ६ ॥ कार्त्तिके चाश्विने मासे ह्यमावास्या यदा भवेत् । तद्दिने शिवमायांति मत्पुरे क्रीडनाय च ॥ ७ ॥ ये व्रजंति च केदारं देवानामपि दुर्लभम् । मंदाकिनी महागंगां स्नात्वा रेतः पिबंति च ॥ ८ ॥ पश्यंति च महादेवं कैलासे हरमंदिरे । तस्मात्तिष्ठ महाचार्य

पुरी को भोगती है ॥ १ ॥ अपने शब्दों से अलंकृत नृत्य गीत कर इस नगरी में आचार्य को स्वागत बोली ॥ २ ॥ पद्मावती देवी बोली । हे सिद्धों ! तुम कहां से आए और कहां को जाते हो यदि अपना कल्याण चाहते हो तो सब तत्व करके कहो ॥ ३ ॥ साधक बोले। हे देवि! सुन संक्षेप से कहता हूं हम मृत्युलोक से आए हैं शंकरालय को जाते हैं ॥ ४ ॥ पद्मावती बोली । हे साधको ! तुम सब यहां रहो महापथ को मत जाओ यहां कामरूपिणी स्त्री हैं जो जरा मृत्यु से रहित हैं ॥ ५ ॥ इस नगर में नित्य चतुर्दशी के दिन ब्रह्मा विष्णु शिव भोग के लिए आते हैं उनका दर्शन होता है ॥ ६ ॥ कार्त्तिक और आश्विन के मास में जिस दिन अमावास्या आती है उस दिन शिवजी क्रीडा के लिए मेरे नगर में आते हैं ॥ ७ ॥ देवतों को भी जो दुर्लभ केदार को जाते हैं और मंदाकिनी में स्नान कर रेतोदक पीते हैं ॥ ८ ॥ साक्षात कैलास हरमंदिर में शिवजी को देखते हैं

भुंजन्भोगान् यथेप्सितान् ॥ ९ ॥ यावद्देवं न पश्यंति उमासार्धं त्रिलोचनम् । कुतोहं तत्र तिष्ठंति आचार्य साधकैः सह ॥ १० ॥ अवश्यं तत्र गंतव्यं कैलासे हरमंदिरे । तदा देवो विरूपाक्षः पश्यंति साधकोत्तमम् ॥ ११ ॥ प्रतिमा लक्षणोपेतं चंद्रादित्यसमप्रभम् । कटिश्च नागबद्धाश्च कर्णौ च हेमकुंडलौ ॥ १२ ॥ ततो दृष्ट्वा महाप्राज्ञा मम कन्या न रुच्यते । तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रस्थिता सर्वसाधकाः ॥ १३ ॥ संप्राप्ता साधकास्तत्र विमानानि दिशो दश । विमानानि सहस्राणि आकाशश्च समाकुलम् ॥ १४ ॥ गणगंधर्वसंयुक्ता देवगंधर्वयोषितः । सर्वाभरणशोभाढ्या नानारत्नपरिच्छदाः ॥ १५ ॥ इन्द्रकन्या ब्रह्मकन्या हरिकन्यास्तथैव च । कुवेरयक्षिणीकन्या चंडकन्या त्रिलोचनी ॥ १६ ॥ विमानारूढसर्वाश्च अप्सरागणनेकधा । रत्नबंधा विमानानि कामिनीसर्वकामिका ॥१७॥

तिसकारण हे महाचार्य ! मन के चाहे हुए भोगों को भोगते हुए यहां रहो ॥ ९ ॥ साधक बोले । जब तक पार्वती सहित महादेव को नहीं देखा तब तक आचार्य सहित साधक अन्यत्र कहां रह सकते हैं ॥ १० ॥ हम अवश्य ही कैलास को जाएंगे तिस समय महादेव ने उन साधकों को देखा ॥ ११ ॥ सर्वलक्षणयुक्त मूर्त्ति चंद्र सूर्य के समान कांतिवाली कटि में सर्प लिपटे कानों में जिसके सुवर्ण के कुंडल हैं ॥ १२ ॥ उन साधकों को शिव भगवान् ने दर्शन दिया तब सब साधकों ने कहा हमको कन्या नहीं रुचती हैं उनके कहे को सुन आगे चले गए ॥ १३ ॥ तहां से साधक आगे को गए जहां विमानों से दश दिशा भरीं थीं और हजारों विमानों से आकाश भरा था ॥ १४ ॥ देवता और गंधर्वों सहित उनकी स्त्री संपूर्ण आभरणों को शोभायुक्त नानारत्नों से अलंकृत थीं ॥ १५ ॥ इन्द्र की कन्या ब्रह्मकन्या विष्णुकन्या कुबर की कन्या यक्षिणी रुद्रकन्या चंडकन्या ॥ १६ ॥ यह सब विमानों में बैठीं अनेक अप्सरा सहित सुंदर कामिनी थीं विमान रत्नों से

आगताश्च ततः कन्या विमानैः पुष्पपूर्णैः। शंखदुंदुभिनिर्घोषैर्भेरीकाहलमर्दलैः ॥ १८ ॥ पटहा वेणुवंशस्य वाद्यंते बहु नेकधा । एतैश्च सहिता देवैर्विमानारूढमागताः ॥ १९ ॥ चामरैर्वीज्यमानस्तु छत्रोपरि विराजितम्।गीतं गायंति गंधर्वा वीणा वाद्यंति सुन्दरी ॥ २० ॥ संपूर्णचंद्रवदना रूपयौवनगर्विताः । दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्यगंधानुलेपनम् ॥ २१ ॥ शोभिताः शिरसः पुष्पैर्नागवल्लीविभूषिताः । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषणाः ॥ २२ ॥ अशोकपल्लवैर्हस्तैर्वदंति कोकिलस्वरम् । यौवनस्था मदोन्मत्ता सर्वशास्त्रविशारदाः ॥ २३ ॥ यत्र स्थाने महावीराः सर्वास्तत्र समागताः । आगताश्च सुराः सर्वे गणगंधर्वयोषितः ॥ २४ ॥ देवा ऊचुः । शृणु साधो महाप्राज्ञ एकचितो हिमालयम् । दर्शनेन त्वया सर्वे आगता सुरनेकधा ॥ २५ ॥ अहं च प्रेषितः साधो ब्रह्मविष्णुमहेश्वरैः

जड़ित थे ॥ १७ ॥ सब कन्या फूलों से भरे विमानों में चढ़ आई और शंख दुंदुभि भेरी काहल मर्दल बाजों के शब्दों से ॥१८॥ पटह वेणु वंशवाद्य नाना प्रकार के अनेक बाजों के सहित विमानों मे बैठे देवताओं सहित आए ॥ १९ ॥ चामर डुलाये जाते हैं ऊपर छत्र विराजमान है गंधर्व लोग गीत गाते हैं स्त्री वीणा बजाती हैं ॥२०॥ संपूर्ण स्त्री चंद्रमा के समान मुखवाली और रूप यौवन से गर्वित दिव्य गंध धारण किए॥२१॥शिरो में सुंदर पुष्प लगाए पान को चावती हाथों में कंकण पहने हार बाजूबन्द से भूषित ॥ २२ ॥ हाथों में अशोक वृक्ष के पत्त धारण किए कोकिल के समान स्वरवाली रूप यौवन से गर्वित सब शास्त्रों को जाननेवालीं ॥ २३ ॥ जिस स्थान में साधक थे वहां वे गणगंधर्वों की स्त्री देवतों सहित सब आई ॥ २४ ॥ देवता बोले । हे महाप्राज्ञ ! साधक ! तुमारे दर्शन के लिये हम सब आए हैं तुम एकचित हो हिमालय को आए हो ॥ २५ ॥ हे साधो ! हमको ब्रह्मा विष्णु महादेव ने भेजा है जगत के पति

देवदेवं जगन्नाथं शिवंलोके व्रजंति च ॥ २६ ॥ आरूढाश्च विमानानि शिवलोके व्रजाम्यहम् । तेषां च वचनेनैव विमानारूढसाधकाः ॥ २७ ॥ साधक उवाच । विमानं नैव रुच्यंते सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । देवदेवं जगन्नाथं दुर्लभं तव दर्शनम् ॥ २८ ॥ शंकरस्य प्रसादेन गुरुधर्मबलेन च । वदंति साधकाः सर्वे पूजयित्वा प्रयत्नतः ॥ २९ ॥ तस्य पादौ नमस्कृत्य विमानानि च सर्वदा । यदाहं शंकरो यात्रा साधको परिवेष्टितम् ॥ ३० ॥ तदा देवस्य रुद्रेण कैलासे गम्यते ध्रुवम् । विमानानि प्रणम्याथ आचार्यः साधकैः सह ॥ ३१ ॥ गतास्तत्र विमानानि यत्र ब्रह्मा हरो हरिः । पंथानमुद्यताः सिद्धा गच्छंति चोत्तरमुखम् ॥ ३२ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने त्रिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । ॐ अग्रतो दृश्यते तत्र पुरी घोषावती तथा ।

शिवजी के लोक को चलिये ॥ २६ ॥ हमारे साथ विमान में बैठ शिवलोक को चलो साधक उनके बचन को सुन विमान में बैठे ॥ २७ ॥ साधक बोले। हमको विमान नहीं रुचते हम सच २ कहते हैं शिव भगवान् का दर्शन चाहिए जो दुर्लभ है ॥२८॥ शंकर के प्रसाद से बड़े धर्म के बल से प्राप्त हुए उनका साधकों ने पूजन किया ॥ २९ ॥ और उनके पावों को प्रणाम कर विमानों को भी प्रणाम कर कहा हम शिव की यात्रा करें ॥ ३० ॥ तब शिवलोक को अवश्य जावेंगे इतना कह साधकों सहित आचार्य ने विमान को प्रणाम किया ॥ ३१ ॥ तदनंतर वे विमान जहां ब्रह्मा विष्णु रुद्र थे तहां चले गए और सिद्ध लोग उत्तर दिशा को गए॥ ३२॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां त्रिंशः पटलः ।

शिव भगवान् बोले । वहां से आगे घोषावती पुरी दीखती है वह उदय

शोभिता च पुरं दिव्यमुदितार्कसमप्रभम् ॥ १ ॥ ईदृशी च पुरी यत्र साधकास्तत्र आगताः । तस्मिन्गृहाणि दिव्या नि पद्मरागमयानि च ॥ २ ॥ चंद्रकांतिसमोपेतं वैडूर्यमणिरश्मिभिः । देवता पूजयिष्यामि कामरूपा महाबलाः ॥ ३ ॥ तदा च ह्यतिरूपाणि श्रीपतेः पुरमुत्तमम् । तत्र स्थाने च ये वृक्षा सर्वकाले फलंति च ॥ ४ ॥ नदी च वहते तत्र घृतं क्षीरं मधुः सदा । भेरी मृदंगशब्देन शंखकाहलमर्दलैः ॥ ५ ॥ महागंभीरतरलैर्वाद्यंते बहुयंत्रिणः । वाद्यंते तानि निर्घोषैर्वंशवादित्रनादितम् ॥ ६ ॥ उत्साहं दृश्यते तत्र पदे पदे महापथे । एवं रम्यं स्थलं दृष्ट्वा धवलगृहसंयुतम् ॥ ७ ॥ ध्वजमालाकुलं दिव्यं पद्मिनीखंडमंडितम् । दिव्यशब्दं महानादं दीर्घवर्णनिनादितम् ॥ ८ ॥ अग्रतो दृश्यते तत्र प्रतीहारा वदंति

काल के सूर्य के सदृश कांतिवाली दिव्य पुरी शोभायमान है ॥ १ ॥ ऐसी नगरी में साधक लोग प्राप्त भये उस पुरी में पद्मरागमणिमय घर बने हुए हैं ॥ २ ॥ चंद्रकांतशिलाओं से युक्त और वैडूर्य मणियों की कांतियों से प्रकाशित तहां कामरूप महाबली से पूजन किया जाता है ॥ ३ ॥ तिस समय वह नगर अति सुंदर था और उस स्थान में जो वृक्ष हैं वे सब काल में फलते हैं ॥ ४ ॥ तहां नदी घी दूध मधु को बहनेवाली है और सब काल में भेरी मृदंग शंख काहल मर्दल बाजों के शब्दों से युक्त ॥५॥ बड़े गंभीर नाना प्रकार के बाजे बजते थे और वंशवाद्य का अति मनोहर शब्द होता था ॥ ६ ॥ उस महापथ में पद २ में जहां तहां उत्साह दृष्ट आता था इस प्रकार बड़ा रमणीय शोभायमान सुफेद घरों से संयुक्त वह स्थान था ॥ ७ ॥ फिर ध्वजों की मालों से व्याप्त पद्मिनी के खंडों से शोभायमान दिव्य महाशब्दों से भरा था ॥ ८ ॥ आगे से द्वारपाल दृष्ट आए वे रुद्र के समान तेजस्वी बड़े उग्र थे

च । महाउग्रं ततो दृष्ट्वा रुद्रदेवो प्रतीति च ॥ ९ ॥ त्रिनेत्रं च दशभुजं चंद्रार्धकृतशेखरम् । शूलपाणिं वृषारूढं महाबलपराक्रमम् ॥ १० ॥ भयंकरं भयाद्भीता तस्य दर्शं विलोकितम् । महाउग्रं ततो दृष्ट्वा मुद्गरं गृह्य ताडयत् ॥ ११ ॥ तस्य स्वरनिनादेन यथा मेघविगर्जितम् । सुमेरोः समतुल्येन भुजा दृष्टा न संशयः ॥ १२ ॥ यथा भाद्रपदे मासे वर्षां वर्षति माधवौ । तथा हि तस्य द्वेषेन जलधारा पतंति च ॥ १३ ॥ प्रतीहार उवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद्ब्रूहि महाचार्य साधको परिवेष्टितम् ॥ १४ ॥ साधक उवाच । कथयामि महाबाहो शृणु मे वचनं हितम् । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ १५ ॥ देवो हरिर्हरो ब्रह्मा सदेहो च निरीक्ष्यते । तत्र स्थाने महासेन मम इच्छा गमिष्यति ॥ १६ ॥ प्रतीहार उवाच । संग्रामं देहि मे वीरा गमनं

साधकों को बोलने लगे ॥ ९ ॥ वह त्रिनेत्र दश भुजावाला आधे चंद्रमा का शेखर किए हाथ में त्रिशूल लिए बैल पर चढ़ा महाबल पराक्रमी था ॥ १० ॥ और बड़ा भयंकर था उसके भय से साधक डरे उस महाउग्र को देख घबराए वह मुद्गर को हाथ में ले मारने आया ॥ ११ ॥ मेघ के गर्जना के समान उस का स्वर शब्द था और सुमेरु पर्वत के समान उसकी भुजा थीं ॥ १२ ॥ जैसा भाद्रपद के महिने वर्षा वर्षती हैं वैसा उसके क्रोध से जल की धारा वर्षती है ॥ १३ ॥ द्वारपाल बोला । हे सिद्धो ! तुम कहां से आए कहां को जाते हो हे आचार्य ! साधक सहित तुम कहो ॥ १४ ॥ साधक बोला । हे महाबाहो ! मेरे हित बचन को सुन मैं कहता हूं हम मृत्युलोक से आए कैलास को जाते हैं ॥ १५ ॥ जहां ब्रह्मा विष्णु महेश्वर सदेह दीखते हैं मेरी इच्छा वहां जाने की है ॥ १६ ॥ द्वारपाल बोला । हे महाबीरों ! पहले मेरे साथ युद्ध करो तब

तत्र कारयेत् । यो भाममजित्वा संग्रामे स देहो न च रक्षति ॥ १७॥ मुद्गरं शैलखड्गं च पूरयित्वा मुहुर्मुहुः । वर्द्धते च त्वया साधो त्यक्ता देहविवर्जितः ॥ १८ ॥ वज्रं च पटलं देयमग्रतो वचनं ततः । दैत्यमुष्टितलं चैव हुंकारं वानगाडिभीः ॥ १९ ॥ गर्जयंति पुरद्वारं कंपमानं वसुंधरा । सुमेरुः सहितो देवा ब्रह्मांडः कंपते सदा ॥ २० ॥ स्वर्गो मृत्युश्च पातालं डोलयंत्यनिलो यथा । नराणां पन्नगानां च वानरा ह्यमरेश्वरम् ॥ २१ ॥ एवं दृष्ट्वा महाउग्रं रुद्ररूपं भयंकरम् । आचार्यः साधकाः सर्वे मूर्छां गच्छंति तत्क्षणात् ॥ २२ ॥ त्रासिता पतिता भूमौ यावद्गोदोहमात्रकम् । उत्थिता चेतनालब्धो दृष्टा मृत्युश्च संगिनाम् ॥ २३ ॥ आचार्या शंकितास्तत्र स्मरंति परमेश्वरम् । तत्क्षणं क्षणमात्रं च ह्यघोरं जपते महान् ॥ २४ ॥ अघोरं जपमानश्च सर्वविघ्नक्षयंकरः । अथ मंत्रः ॥ ॐ हुंहुंनमोनमःफट्स्वाहा ॥

तहां जाओ मुझे जीते विना तुमारा शरीर न रहेगा ॥ १७ ॥ बार बार मुद्गर को पर्वत को खड्ग को उठाय कहने लगा हे साधो ! तुमको देह से अलग करता हूं ॥ १८ ॥ वज्र पटल मुष्टितल कर बड़ी गर्जना करके आगे खड़ा भया ॥ १९ ॥ द्वार पर खड़ा हो गर्जना से पृथ्वी कांपने लगी सुमेरु सहित ब्रह्मांड और देवता कांपने लगे ॥ २० ॥ स्वर्ग मृत्यु पाताल सब डोल के समान हिलने लगे जैसे वायु हिलाता है मनुष्य नाग वानर इंद्र सब कांप उठे ॥ २१ ॥ ऐसे महाउग्र रुद्ररूप भयंकर को देख आचार्य और साधक मूर्छा को प्राप्त भये ॥ २२ ॥ उससे त्रस्त हो गोदोहन मात्र मूर्छा में रहे फिर उठ कर चेतन हो मृत्यु सन्मुख जैसा देखा ॥ २३ ॥ आचार्य और साधक तहां बड़े शंकित होते हुए परमेश्वर का स्मरण करने लगे और क्षणमात्र अघोर मंत्र को जपा ॥ २४ ॥ इस अघोर मंत्र के जपने से सब विघ्न नष्ट हुए द्वारपाल ने

कोशमात्रप्रमाणेन ह्युत्तुंगः पंचयोजनं ॥ २५ ॥ हेमस्तंभसमालग्नं घंटाचामरभूषितम् । ध्वजाकारं शतं जाढ्यं सर्वरत्न विभूषितम् ॥ २६ ॥ गृहमध्ये च हिंदोलं घंटानुपूरनादितम् । भूषितं दिव्यगंधैश्च दिव्यवस्त्रपरिच्छदाः ॥ २७ ॥ दिव्यपुष्प शिरोबध्वा हारनूपुरभूषिताः । भूषितं पद्मरागं च हेमस्य कंकणं करैः ॥ २८ ॥ हिंदोलयंति ताःकन्या जरामृत्युविवर्जिताः संप्राप्ता साधकास्तत्र भाषयंति तपस्विनीः ॥ २९ ॥ तपस्विन्य ऊचुः । नाम्ना घोषवती देवी भुंजंति विपुलां श्रियम् । शतयोजनविस्तीर्ण पुरी कांचनभूषितम् ॥ ३० ॥ पुरीमध्ये गृहा दिव्या बालार्केण समप्रभाः । तत्र तिष्ठति सा देवी शंकरेण विनिर्मिता ॥ ३१ ॥ गौरी च सदृशाकारं सर्वालंकार भूषिता । संप्राप्ता च गृहद्वारे प्रतीहारा वदंति च ॥ ३२ ॥

मार्ग दिया आगे एक कोश लंबा और पांच योजन ऊंचा ॥ २५ ॥ एक स्थान देखा जिसमें सोने के खंभे और घंटा चंवर ध्वजों से विराजमान सब रत्नोंसे भूषित था ॥ २६ ॥ तहां घर के बीच में एक हिंडोला घंटा घुंघुरों से शब्दायमान दिव्य गंध वस्त्रों से भूषित था ॥ २७ ॥ दिव्य वस्त्रों को धारण किए शिरों में दिव्य पुष्प पहने और पद्मराग मणियों से भूषित हाथों में सुवर्ण के कड़े पहने ॥ २८ ॥ ऐसी कन्या तहां हिंडोले में झूलती हैं जो जरा मृत्यु से रहित हैं साधक तहां पहुँचे तपस्विनियों से कहने लगे ॥ २९ ॥ तपस्विनी बोलीं । यहां घोषवती नाम देवी बड़ी संपत्ती को भोगती है सुवर्ण से आभूषित सौ योजन चौड़ी यह पुरी है ॥ ३० ॥ इस पुरी में उदयकाल के सूर्य के समान प्रभावाले दिव्य घर हैं इसमें यह देवी रहती है और नगरी शिव ने निर्माण कर रखी है ॥ ३१ ॥ पार्वती के समान आकारवाली सर्व अलंकारों से आभूषित वह देवी है साधक घर के द्वार पर पहुंचे तब प्रतीहार बोला ॥ ३२ ॥ प्रतीहार

प्रतीहार उवाच । महावीरा महातेजा दृश्यंते च महातपाः । साधकाश्च प्रवक्ष्यामि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३३ ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रस्थिताः सर्वसाधकाः । अभिवाद्य ततो देवीं वदेद्घोषवती तथा ॥ ३४ ॥ देवी घोषवत्युवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद्ब्रूहि महाचार्य साधका परिवेष्टितम् ॥ ३५ ॥ साधक उवाच । कथयामि महादेवि शृणु मे वचनं तथा । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ ३६ ॥ देवी घोषवत्युवाच । शृणु साधो महाप्राज्ञ मम वाक्यं सुनिश्चितम् । राजा चित्ररथो नाम चक्रवर्त्ती महाबलः ॥ ३७ ॥ पुनरेव ततः सिद्धा आगताश्च पुरावृता । अहमीश्वरपार्श्वेन श्वागता पृच्छया कृतम् ॥ ३८ ॥ पुरी घोषवती नाम तत्र तिष्ठंति साधकाः । सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नकृतानि च ॥ ३९ ॥ रमंति कन्यका अत्र सर्वशास्त्र विशारदाः । यौवनस्था मदोन्मत्ता हारनूपुरभूषिताः ॥ ४० ॥

बोला । हे महावीर ! बड़े तेजस्वी तपस्वी दीखते हैं तुम सब पापों से छूट गए ॥३३॥ द्वारपाल के बचन सुन साधक देवी को प्रणाम करने को चले ॥ ३४ ॥ देवी बोली । हे आचार्य तुम कहां से आये और कहां जाते हो मुझसे कहो॥३५॥ साधक बोला । हे देवि ! मेरे बचन को सुन मैं कहता हूं मृत्युलोक से आए शंकरालय को जाते हैं ॥ ३६ ॥ घोषवती देवी बोली । हे बुद्धिमन् ! निश्चय कर मेरे बचन को सुन बड़ा बली पराक्रमी चक्रवर्ती चित्ररथ नाम राजा है॥ ३७॥ तुम लोग वहां जाओ तब साधक तहां गए पूछा कि हम शिव भगवान के पास जावेंगे ॥ ३८ ॥ साधक उस पुरी में स्थित हुए वहां सुवर्ण के बने रत्नजड़ित दिव्य सिंहासन थे ॥ ३९ ॥ इसमें सब शास्त्रों को जाननेवालीं यौवन में स्थित मदोन्मत्त हार नूपुरों से अलंकृत कन्या रमती हैं ॥ ४० ॥

संपूर्णचंद्रवदना बिंबं स्फुरति तेजसा । मत्तमातंगगामिन्यो विस्फुरंति पदे पदे ॥ ४१ ॥ नमंति मानभावेन जरामृत्यु विवर्जिताः । भुंजंति सस्त्रिया सर्वे रूपयौवनगर्विताः ॥ ४२ ॥ राजभोगसमोपेता नानाभोगसमाकुलाः । भुंजन्तु साधकाः सर्वे भोगान्न तिष्ठन्तु सर्वदा ॥ ४३ ॥ साधक उवाच । अस्मिन्पुरे न मे कार्यं न रुच्यंति च कामिनी । अवश्यं तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः ॥ ४४ ॥ चित्ररथ उवाच । स्वर्गलोके च ये भोगा कैलाससदृशं गृहम् । ब्रह्मलोके विष्णुलोके चंद्रलोके च साधकाः ॥ ४५ ॥ सर्वभोगा प्रतिष्ठंति किमर्थं तत्र गम्यते । देवा हरिहरौ ब्रह्मा दृश्यंतेस्मिन्पुरे सदा ॥ ४६ ॥ आगच्छंति चतुर्दश्यां सर्वे भिक्षार्थकांक्षिणः । साधक उवाच । किमत्र भोगमायुष्यं पश्चात्किं च भविष्यति । तत्सर्वं वद भो राजन् महातेजो महातपः ॥ ४७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने एकत्रिंशः पटलः ।

सब चंद्रवदनी बिंबफल सदृश ओंठोंवाली मत्त हाथी के समान चलनेवाली पद पद में शोभायमान थीं ॥ ४१ ॥ मान भाव से नम्र जरा मृत्यु से रहित वे स्त्री रूप यौवन से गर्वित भोगों को भोग रही हैं ॥ ४२ ॥ राजों के भोगने योग्य नाना प्रकार के भोगों को तुम साधक यहां रहके भोगो ऐसा राजा ने कहा ॥ ४३ ॥ साधक बोला । यहां मेरा कोई काम नहीं स्त्री हमको नहीं रुचती हैं जहां शंकर हैं हमने अवश्य वहीं जाना है ॥ ४४ ॥ चित्ररथ बोला । स्वर्गलोक ब्रह्मलोक विष्णुलोक चंद्रलोक में जो भोग हैं वे यहां हैं और कैलास के समान घर हैं ॥ ४५ ॥ सब भोग यहां स्थित हैं किसलिए कैलास को जाते हो ब्रह्मा विष्णु महेश्वर सदा इस नगर में दीखते हैं ॥ ४६ ॥ चतुर्दशी के दिन भिक्षा के लिए सब यहां आते हैं । तब साधक बोला । यहां आयुष्य भोग कितना है फिर पीछे क्या होगा हे राजन् ! सब कहो ॥ ४७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने एकत्रिंशः पटलः ।

चित्ररथ उवाच। तावत्संख्या समायुष्यं यावच्चंद्रार्कतारका। क्रीडंति विविधां चेष्टां मृत्युलोके व्रजंति च ॥ १ ॥ सर्वलक्षणसंयुक्ता सर्वशास्त्रविशारदाः। तेजस्वी च महाप्राज्ञाः पूर्वजातिस्मरो भवेत् ॥ २ ॥ साधक उवाच। यदि पुनर्मृत्युलोके गंतव्यं च महानृप। तदा किं राज्यभोगेन कैलासे च व्रजाम्यहम् ॥ ३॥ आगताश्च ततः कन्या कौवेरस्तनयो महान्। सर्वारूढंविमानानि गजअश्वरथास्तथा ॥ ४ ॥ निशि वह्नेर्यथा तेज उदये शशिभास्करौ। दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः ॥ ५ ॥ संपूर्णचंद्रवदना वदंति कोकिलस्वरम्। मधुरस्वरगंभीरशः सर्वांगे सर्वसुंदरी ॥ ६ ॥ हेमसूत्रैर्महारम्यैश्चलनेत्रैश्चशोभिताः। षोडशैर्दिव्यशृंगारैर्हारकेयूरभूषिताः ॥ ७ ॥ शीलवत्यः सतीः सर्वा शिवभक्तिपरायणाः। एवं सर्वगुणैर्युक्ता राजराजसुतानि च ॥ ८ ॥ यत्र स्थाने महासिद्धास्तत्र गंता च कामिनी। अनेक-

चित्ररथ बोला। जहां तक चंद्र सूर्य तारा हैं तब तक आयु है नाना भोगों को भोग कर पीछे मृत्युलोक को जाते हैं ॥१॥ वहां सर्वलक्षणसंयुक्त सब शास्त्र को जाननेवाले पहले जन्म के यादवाले होते हैं ॥२॥ साधक बोला। यदि फिर मृत्युलोक में जाना है तो हम राज्य भोग से क्या! हम कैलास को जावेंगे ॥ ३ ॥ इतने में कन्या आई और कुबेर के पुत्र भी आए सब विमानों में हाथी घोडों रथों में चढ़े थे ॥ ४ ॥ रात्रि में जैसा अग्नि का तेज और उदयकाल में चंद्र सूर्य का तेज होता है दिव्य वस्त्रों को धारण किए दिव्य गंध लगाए ॥५॥ सब चंद्रवदनी कोकिलकंठी सुंदर अंगवाली ॥ ६ ॥ बड़े रमणीय सुवर्ण के सूत्रों से युक्त चंचल नेत्रवाली सोलह दिव्य शृंगार पहने हार बाजूबंद धारण किए ॥ ७ ॥ सब सुशीला शिवभक्ति में तत्पर सब गुणों करिके युक्त ऐसे राजराज पुत्री थीं ॥ ८ ॥ यह सब जहां साधक थे तहां गयीं अनेक राग गीतों

रागगीतैश्च रमंति च पठंति च ॥ ९ ॥ कन्यका ऊचुः । क्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद् ब्रूहि महाचार्य साधकैः परिवेष्टित ॥ १० ॥ साधक उवाच । कथयामि महाकन्या शृणु मे वचनं हितं । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ ११ ॥ कन्यका ऊचुः । मम इच्छा महासिद्धा वर्षं विपुलवर्तते अप्सरासुन्दरी सर्वा अद्य मे वर आगताः ॥ १२ ॥ तपोबलयुताः सर्वा महाबलाश्च साधकाः । उपनिषत्सु वाक्येन प्रजापतिमुखेन च ॥ १३ ॥ साधक उवाच । मृत्युलोके महाकन्या राज्यं च विपुलं मम । अश्वैर्गजरथैश्चैव नानारत्नैर्वसुंधरा १४ माता पिता तथा धाता चंद्रवदनी च कामिनी । गर्भवासेन दुःखेन त्यक्त्वा संसारसागरात् ॥ १५ ॥ कन्यका ऊचुः । प्रसन्ना मे महासिद्धा किं करिष्ये त्रिलोचनः । किमर्थं वदते साधो शंकरस्य पुनः पुनः ॥ १६ ॥ दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्य-

को गाने लगीं ॥ ९ ॥ कन्या बोलीं हे सिद्ध ! कहां से आए कहां को जाते हो साधक सहित हे आचार्य ! कहो ॥ १० ॥ साधक बोले । हे कन्या ! सुनिये मैं कहता हूं हम मृत्युलोक से आए शंकरालय को जाते हैं ॥ ११ ॥ कन्या बोलीं । हे सिद्धो ! हमारी इच्छा से विपुल भोग करो तुमको सुंदर अप्सरा प्राप्त भई हैं ॥१२॥ यह सब सुन्दरी तपोबल युक्त हैं और ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हैं उपनिषत् के वाक्य यज्ञ कर्म दान करती प्रणव को जपती हैं ॥ १३ ॥ साधक बोला । मृत्युलोक में अच्छी कन्या राज्य बहुत धन हाथी घोड़े रथ महारत्न और बहुत पृथ्वी मेरे यहां हैं ॥ १४ ॥ और माता पिता धाता अर्थात् दास चन्द्रवदनी स्त्री इत्यादिक सब हैं परंतु गर्भवास के दुःख से संसार को छोड़ आए ॥ १५ ॥ कन्या बोलीं । हे सिद्धो ! हम प्रसन्न हैं शिव क्या करेगा और तुम बार २ शंकर २ क्या कहते हो ॥ १६ ॥ दिव्य वस्त्र

गंधानुलेपनम्भुक्त्वा च विपुलान्भोगाञ्जरामृत्युविवर्जिताः १७ आचार्य उवाच । कैलासं प्रथमं दृष्ट्वा उमासार्धं त्रिलोचनं। गर्भावासविनिर्मुक्तो तस्य देवस्य गच्छति १८ चित्ररथ उवाच। पूर्वमेव प्रतिज्ञायां पवित्रं साधुभिः सह भुञ्जन्ति विपुलान्भोगान् किं करिष्यति शंकरः ॥ १९ ॥ को देशः कः सुखंडश्च को मंडले को ग्रामयोः । क्व स्थाने वसते ब्रूहि साधकाश्च महातपाः ॥ २० ॥ साधक उवाच । पंचखंडदेशश्चैव मंडलं ग्रामयो यथा । तथा भो मे नाटिका वमूतव्यममरालये ॥ २१ ॥ महाकल्पं महाशास्त्रं महापंथं ह्यनुत्तमम् । तादृशं पठनाध्यानात्त्यक्त्वा संसारसागरम ॥ २२ ॥ किमु भूमंडलं राजा किमु त्वमत्र आगताः । कन्यकासहितं राज्यं प्रतिष्ठां किं विधिर्नृप ॥ २३ ॥ चित्ररथ उवाच । पृथिव्यां दक्षिणे खंडे देशे कालंजिरे तथा । तत्राहं कृतवान् राज्यं नरनारीसमदृशंमया कृतं महापुण्यंमुनयो मठ-देवलम् ॥ २४ ॥ कर्तव्यं तपसा भक्ति तन्मे सर्वस्य चिंतये ।

दिव्य गंध पहने और जरामृत्यु से रहित इन कन्याओं से भोग करो ॥ १७ ॥ आचार्य बोला प्रथम कैलास को जाय पार्वती सहित शिवको देखें जिससे गर्भ-वास न हो ॥ १८ ॥ चित्र रथ बोला। पहले संपूर्ण साधनों सहित विपुल भोगों को भोगो शंकर क्या करेगा ॥ १९ ॥ आपका देश कौन है और खंड कौन है मंडल कौन है ग्राम कौन है यह सब कहो ॥२०॥ साधक बोले । पंच खंड देश में हम रहते हैं ऐसी सब चीज हमारे यहां वर्तमान हैं ॥ २१ ॥ हम महा कल्प महा शास्त्र को पढ़ संसार को त्याग यहां आए हैं ॥ २२ ॥ आप भूमंडल को छोड़ कैसे यहां आए कन्याओं सहित कब से राज्य करते हो ॥२३॥ चित्ररथ बोला । पृथ्वी के दक्षिण खंड में मालराज देश में मैं स्त्री पुरुषों सहित राज्य करता था अपने पूर्व संचित पुण्य से मठ देवालय बनाता

ध्यायंति शंकरं नित्यं श्रुत्वा शास्त्रं शिवात्मकम् ॥ २५ ॥ भुंजते साधका वीरा जरामृत्युविवर्जिताः।सत्यं शिल्पंच लक्ष्मीश्च विज्ञानं यानसगामिभिः॥२६॥सर्वशास्त्रसमायुक्ता जरामृत्युविवर्जिताः। आगच्छंति चतुर्दश्यां सर्वे भिक्षार्थकांक्षिणः ॥ २७॥ साधक उवाच। यदि पुनर्मृत्युलोकं गंतव्यं च महानृप। तदा किं राज्यभोगेन कैलासे च व्रजाम्यहम् २८ सर्वमेवं प्रतिज्ञायामाचार्य साधकैः सह। एवं च सुंदरी सर्वा जरामृत्युविवर्जिताः॥२९॥ यदि न रुच्यते सिद्धा व्रजंतु न निवार्यते। नानाचित्रविचित्राणि पुष्पवस्त्रं च शोभितम् ॥ ३० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने द्वात्रिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच। तदा पथं समारूढाः पश्यंति तत्र साधकाः। दिशश्च उत्तरे भागे गतास्ते योजनत्रयम् ॥ १ ॥ तत्र स्थाने महातीर्थं चातिरम्या च भूमिकाः। मंदाकिनी महागंगा अति-

॥ २४ ॥ शिवभक्ति में तत्पर था नित्य शंकर का ध्यान कर शिव शास्त्र को सुनता था ॥ २५ ॥ हे साधको ! यहां जरामृत्यु से वर्जित कन्या को भोगना चाहिये ॥२६॥ सब शास्त्र को जाननेवाली जरामृत्यु से रहित ऐसी स्त्री कृष्ण चतुर्दशी के दिन भिक्षा के लिए यहां आती हैं ॥ २७ ॥ साधकोंसहित आचार्य ने ऐसी प्रतिज्ञा किई इस प्रकार जरामृत्युरहित सब सुंदरी ॥ २८ ॥ हे सिद्धो ! ऐसी तुमको नहीं रुचती है तो जहां इच्छा है चले जाओ हम रोकते नहीं नानाप्रकार चित्र विचित्र पुष्पवस्त्रों से अलंकृत कन्याओं को छोड ॥ २९ ॥ साधक लोग आचार्य सहित उत्तर दिशा को गए ॥ ३० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने द्वात्रिंशः पटलः ।

श्रीशिव भगवान् बोले । तिस समय साधक मार्ग में चढ़े उत्तर दिशा को तीन योजन आगे चले ॥ १ ॥ उस स्थान में बड़ा तीर्थ है और

रम्या मनोहरा ॥ २ ॥ लहरीतरंगगंभीरफेनावर्तसमाकुलम् । तत्र चोभयपार्श्वे तु संस्थिताः सर्वदेवताः ॥ ३ ॥ तत्र हेममयी भूमिः पर्वते वहते नदी । सुवर्णवालुकास्तत्र पंकजाविपुलानि च ॥ ४ ॥ तत्र गंगा महातोया अमृतं च प्रवाहकम् । घृतं क्षीरं मधु स्वादु अतिस्वादु सुशीतलम् ॥ ५ ॥ जलक्रीडां प्रकुर्वंति देवकन्या ह्यनेकधा । यौवनस्था मदोन्मत्ता मत्तमातंगगामिनी ॥ ६ ॥ सुरनदीतटे तीरे बहुपुष्पफलैस्तथा । देवता वृक्षरूपेण वदंति साधकोत्तमम् ॥ ७ ॥ सुवर्णपक्षिकास्तत्र नदी पापप्रणाशिनी ॥ ८ ॥ वृक्ष उवाच । साधु साधु महाप्राज्ञाः पुनः साधो महातपाः । एवं च वदते वृक्षा बुद्धिं दद्यात्तु साधकाः ॥ ९ ॥ एवं मंदाकिनीं पुण्यां पूजयित्वा महेश्वरम् । अष्टोत्तरशतं मंत्रमघोरं जपते महान् ॥ १० ॥ ॐ हुंफट्स्वाहा ।

रमणीय भूमि है और मनोहर मंदाकिनी नदी है ॥ २ ॥ जो गंभीर तरंग लहरियों से समाकुल थी और उस नदी के दोनों बगल में सब देवता स्थित थे ॥ ३ ॥ तहां भूमि सब सोने की है जिस पर्वत में वह नदी बहती है सोने की बालू और बहुत कमल हैं ॥ ४ ॥ तहां गंगा निर्मल जलवाली है जिसमें अमृत बहता है और घी दूध मधु अत्यंत स्वादिष्ट और शीतल जल बहता है ॥ ५ ॥ तहां देवकन्या यौवन में प्राप्त मद से उन्मत्त मतवाले हाथी के तुल्य चलनेवाली अनेक प्रकार जलक्रीडा कर रही थीं ॥ ६ ॥ उस देव नदी के तीर में फल पुष्पों से युक्त देवतारूप वृक्ष हैं वे साधकों को बोलने लगे ॥ ७ ॥ और तहां सोने के पक्षी हैं और पापोंको नाश करनेवाली नदी है । वृक्ष बोले । हे बुद्धिमन् साधको ! हेतपस्वियों । भला २ आप आए ऐसा वार वार बोले तुमको बुद्धि देते हैं ॥ ८ ॥ साधक लोगोंने मंदाकिनीका और शिवका पूजनकर १०८ आवर्त्ति अघोर मंत्रका जप किया ॥ १० ॥ इस अघोर मंत्र को जपकर शंखध्वनि सुनी और आगे सन्मुख

जपित्वा तस्य मंत्रस्य श्रूयते शंखयोर्ध्वनिं । सन्मुखं पश्यते तत्र दृश्यते पंथनिर्मलम् ॥ ११ ॥ अग्रे एवं च पश्यंति ईशान्यां दिशि सम्मुखं । अघोरं च महामंत्रं महापातकनाशनम् ॥१२॥ महाविघ्नं हरेन्नित्यं महासिद्धिप्रदायकम् । स्मृत्वा तु तेन मंत्रेण पथं तिष्ठंति तत्क्षणात् ॥ १३ ॥ व्रजंति तेन मार्गेण वेगेन पवनो यथा । आश्रमं दृश्यते तत्र ध्वजमालासमन्वितम् ॥ १४ ॥ पश्यंति साधकाः सर्वे त्रिपथो तत्र दृश्यते । संप्राप्ताः साधकास्तत्र क्षणमेकं पतंति च ॥१५॥ तदुत्तरदिशां मार्गे ईशाने दिशि सन्मुखे। तत्र पश्यंति ते सिद्धाः कैलासं नाम पर्वतम् । ॥ १६ ॥ शंकरस्य प्रियो नित्यं सर्वदेवालयं कृतम् । श्वेतवर्णं गिरिशृंगे संधिभेदविवर्जितम् ॥ १७ ॥ अधऊर्ध्वमंडलाकारं मध्यस्थूलो महागिरिः । मृदंगाकृतिरूपेण दृश्यते पर्वतोत्तमः॥१८ अष्टाशीतिसहस्राणि उच्छ्रायो योजनं महान् । त्रिंशत्शतसह-

निर्मल पंथ दृष्ट आया ॥ ११ ॥ और आगे इसप्रकार सन्मुख ईशान दिशामें सब पापोंको नाश करनेवाला अघोर महा मंत्र ॥ १२ ॥ महाविघ्न को हरने वाला नित्य सब सिद्धिको देनेवाला है इसको जपकर तब इस मंत्र से तत्काल मार्ग निर्मल दृष्ट आया साधक तहां रहे ॥ १३ ॥ साधक उस मार्ग से चले जैसा बड़े वेग से पवन चलता है वैसे चले तहां ध्वजों की मालों से युक्त एक आश्रम दृष्ट आया ॥ १४ ॥ सब साधक तहां त्रिपथ (तीन मार्गवाला) स्थान को देखते भए तहां पहुंचके क्षण भर रहे ॥ १५॥ तहां से उत्तर दिशा के और ईशान के सन्मुख मार्ग में सिद्ध लोगों नें कैलास पर्वतको देखा ॥१६॥ जो शंकर का अति प्रिय और श्वेतवर्ण संधिभेद रहित है ॥ १७ ॥ और वह ऊपर नीचे मंडलाकार है और बीच में बड़ा स्थूल है जो मृदंग के आकार का दीखता है ॥ १८ ॥ और अट्ठासी हजार योजन ऊंचा है और तीस सौ

स्राणि अधऊर्ध्वं प्रकीर्तितम् ॥ १९ ॥ पर्वतं च महारम्यं सूर्यकोटिसमप्रभम् । गृहाणि दृश्यते तत्र सहस्रयोजनानि च ॥ २० ॥ नामधारणमेवं तु दृश्यते रत्नभूषितम् । श्वेतपीतं तथा रक्तं श्यामवर्णं तथैव च ॥ २१ ॥ पंचवर्णपताका च दृश्यते पवनेरिता । क्षणे क्षणेवर्तिषंति दीपमालाविभूषितम् ॥ २२ ॥ स्तंभा हेममयाः सर्वे चंद्रकांतिसमप्रभाः । मणिवैडूर्यसंयुक्ता स्फुरंति किरणैस्तथा ॥ २३ ॥ सुवर्णकेतकी जातो तथा जायी च मंडली । सुवर्णचंपिकास्तत्र पंकजानि महांति च ॥ २४ ॥ पंचपुष्पमहामालावेष्टितं धवलं गृहम् । इन्द्रनीलमहानीलैर्ध्वजमालाभिवेष्टितम् ॥ २५ ॥ यथा रुद्रसमर्थस्य तथा सर्वं च मंदिरम् । गृहे तस्मिन् स्थिताः कन्या दिव्याभरणभूषिताः ॥ २६ ॥ गणगंधर्वसंकीर्णं सर्वशास्त्रविशारदाः ।

हजार योजन ऊपर नीचे है ॥ १९ ॥ करोड़ सूर्यके समान कांति जिसकी ऐसा बड़ा रमणीय पर्वत है उसमें सहस्र योजन में घर बने हैं ॥ २० ॥ जिसमें नाम लिखे हैं और रत्नों से भूषित हैं और सुफेद पीला लाल काला रंग है ॥ २१ ॥ पांच रंग की पताका दृष्ट आई जो पवन से कंपायमान थी और क्षण २ में दीपकों की माला दीखती थीं ॥ २२ ॥ और सुवर्ण के स्तंभ सब चंद्रकांत शिला के समान प्रभावाले वैडूर्यमणि के किरणों से चमक रहे थे ॥ २३ ॥ और सुवर्ण केतकी जाती पुष्प और सुवर्ण की चंपिका और बड़े उत्तम कमल दृष्ट आए ॥ २४ ॥ तहां घर बड़े शुभ्र पंच पुष्पों की मालाओं से वेष्टित और इन्द्रनील महानील मणियों से तथा ध्वजमालाओं से वेष्टित दृष्ट आए ॥ २५ ॥ जैसा रुद्रभगवान् का मंदिर वैसे ही और सब घर तहां हैं उनमें दिव्य आभरणों से भूषित कन्या विराजमान थीं ॥ २६ ॥ और वह स्थान गण गधर्वों से भरा था सब शास्त्रविशारद मुनियों सहित देवता

मुनिभिः सहिताः देवा गंधर्वासुरपन्नगाः ॥ २७ ॥ दशबाहुं त्रिनेत्रं च त्रिशूलं करपल्लवैः । अजरा अमरावृत्ताः कैलासस्था महाबलाः ॥ २८ ॥ अतिकौतूहलं तत्र तस्य बासो न विद्यते । संप्राप्ताः साधकास्तत्र कैलासस्य समीपके ॥ २९ ॥ ततो दृष्ट्वा च तद्रूपं साधका विस्मयं गताः । मूर्छिताः साधकाः सर्वे गोदोहमात्रसंस्थिताः ॥ ३० ॥ पुनश्च चेतनां प्राप्ताः स्मरंति च महेश्वरम् । शिवस्मरणमात्रेण दृश्यते पंथनिर्मलम् ॥३१॥ अघोरं च महामंत्रं सर्वविघ्नक्षयंकरम् । अष्टोत्तरशतं तत्र जाप्यं कृत्वा यथाविधि॥३२॥ ॐ हुं फट् स्वाहा । अघोरं च महामंत्रं दुर्लभं देवदानवैः । दुर्लभं गणगंधर्वैर्दुर्लभं मुनिपन्नगैः ॥३३॥ दुर्लभं तत्पदं सर्वैर्दुर्लभ्यमितरैर्जनैः ॥ सिद्धमंत्रमहामंत्रमहापंथप्रदायकम् ॥३४॥ येन मंत्रप्रभावेण सदेहं शंकरालये । मोहिता देवदेवेन संप्राप्ता च त्रिपंथकम् ॥ ३५ ॥ जपिता सिद्धमंत्रेण भुवं पश्यंति

नाग गंधर्व ॥ २७ ॥ तहां सब कैलास में दश भुजा तीन नेत्र वाले त्रिशूल हाथों में लिए बड़े बलवान अजर अमर हैं ॥ २८ ॥ वहां बड़ा कोलाहल होता था साधक तहां कैलास के समीप पहुंचे ॥ २९॥ कैलासके रूपको देख साधक विस्मय को प्राप्त भये और गोदोहन मात्र तक मूर्छित रहे ॥ ३० ॥ फिर चेतना को प्राप्त हुए साधक शंकर को स्मरण करने लगे तिससे निर्मल मार्ग दीख पड़ा ॥ ३१ ॥ तब सब विघ्नों को नष्ट करनेवाले अघोर मंत्रको अष्टोत्तर शत विधि पूर्वक जप किया ॥ ३२ ॥ यह अघोर मंत्र है । जो देवदानव गण गंधर्व नाग मुनियों से प्राप्त करने को अशक्य है ॥ ३३ ॥ वह स्थान कैलास जिससे प्राप्त हुआ यह कैलास सबसे अगम्य है यह इस मंत्रके प्रभाव से मिलता है ॥ ३४ ॥ जिस मंत्रके प्रभाव से साधक लोक देह सहित कैलास को पहुंचे॥ ३५ ॥ उस मंत्रको जपकर महा कैलास पर्वत को देखा सब

ते गिरिम् । जयशब्दं प्रकुर्वंति साधका वदते ध्रुवम् ॥ ३६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे भाषा टीकायां त्रयस्त्रिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । पृच्छंति साधकाः सर्वे ह्याचार्यं ब्रूहि चानघ कुतश्चैव तु गंतव्यं पथं चैव पृथक् पृथक् ॥ १ ॥ आचार्य उवाच । ब्रह्मा च शंकरश्चैव विष्णुलोके यथोत्तमम् । वायव्ये विष्णुलोकः स्यादीशाने शंकरस्तथा । ब्रह्मा च दक्षिणे भागे त्रयो मार्गाः प्रकीर्त्तिताः ॥ २ ॥ साधक उवाच । ब्रह्मलोके च ये भोगा आचार्य कथयस्व मे । विष्णुलोके च ये भोगाः कथनीया त्वया प्रभो ॥ ३ ॥ रुद्रलोके च ये भोगाः कथयस्व ममांतिके । ब्रह्मलोके च ये भोगा रूपवंतः प्रयत्नतः ॥ ४ ॥ कथयामि विशेषेण कथयामि कथाः शृणु । विष्णुलोके च ये भोगाः कथयामि प्रयत्नतः ॥ ५ ॥ आचार्य उवाच । चतुर्वक्रं

साधकों ने जय शब्दों को उच्चारण किया ॥ ३६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे भाषा टीकायां त्रयस्त्रिंशः पटलः ।

शिवजी बोले । तब साधक लोग आचार्य को बोले मार्ग पृथक् २ दीखते हैं किस ओर जाना सो कहो ॥ १ ॥ आचार्य बोला । ब्रह्मलोक शिवलोक विष्णुलोक इन तीन लोकों के तीन मार्ग हैं तहां वायव्य में विष्णुलोक है ईशान में शिवलोक है दक्षिण भाग में ब्रह्मलोक है ॥ २ ॥ साधक बोले । ब्रह्मलोक में जो भोग हैं और विष्णुलोक में जो भोग हैं हे आचार्य ! सो कहना चाहिए ॥ ३ ॥ रुद्रलोक में जो भोग हैं मेरे आगे कहो और ब्रह्मलोक में जो हैं उनको भी कहो ॥ ४ ॥ सब तीनों लोकों के जो भोग हैं मैं कहता हूं विष्णुलोक में जो भोग हैं उनको भी सुनो ॥ ५ ॥ आचार्य बोला । चार मुख चार भुजावाली जैसी ब्रह्माणी है वैसीही तहां सब स्त्री हैं और एकलक्ष अप्सरा स्त्री सब

चतुर्बाहुं ब्रह्माणीसदृशाः स्त्रियः । अप्सराणां तु लक्षैकं विमाना-
रूढकाभिर्ना ॥ ६ ॥ ब्रह्मणा सदृशं रूपं मुकुटकुंडलभूषणं ।
चतुर्वक्त्रैश्चतुर्वेदानुच्चरंश्च मुहुर्मुहुः ॥ ७ ॥ अष्टादश पुराणानि
नव व्याकरणानि च । रत्नमाला पुष्पमाला शिखाकंठे प्रशो-
भिताः ॥ ८ ॥ श्वेतं पीतं तथा कृष्णं नीलं रक्तं ज्वलंति च ।
शिरोमणिसुंदरेण कनकसूत्रेण कुंडलाः ॥ ९ ॥ सर्वा गुण-
समोपेता व्रजंति ह्यजरामराः । भंगेन चंद्रेखस्य तपंति प्रचरंति
च ॥ १० ॥ उद्गारयंति तांबूलं रूपयौवनगर्विताः । हिंदोल-
यंति ताः कन्याः सुताश्च चतुराननाः ॥ ११ ॥ तासां दर्शन-
देहस्य दिव्यकांतिसमप्रभाः । शतयोजनविस्तीर्णमुत्तुंगो हि
चतुर्गुणम् ॥ १२ ॥ इंद्रनीलमहानीलैः पद्मरागेण शोभितम् ।
ब्रह्मलोके च ये भोगा ब्रह्मणा सममायुषम् ॥ १३ ॥ कस्मिन्
काले च संप्राप्ते मृत्युलोके व्रजंति च । सर्वकामसमृद्धश्च जायते

विमानारूढ हैं ॥ ६ ॥ ब्रह्मा के रूपके सदृश मुकुट कुंडलवाले सब तहां के रहनेवाले हैं चारों मुखों से चारों वेद उच्चारण करते हैं ॥ ७ ॥ और अठारह पुराण नौ व्याकरणों के वेत्ता हैं रत्नों की और पुष्पों की माला शिखा और कंठों में शोभायमान रहती हैं ॥ ८ ॥ सुफेद पीली श्याम नील लाल कांतिवाली मणियों से प्रकाशित और सुवर्णसूत्र कुंडलों से शोभायमान हैं ॥ ९ ॥ सब गुणों से संपन्न और अजर अमर चंद्रमा का खंड शिर में शोभायमान सब स्त्री तप करती हैं ॥ १० ॥ और तांबूल को चाबती रूप यौवन से गर्वित हिंडोले में झूलती हैं ये सब कन्या ब्रह्मा की पुत्री हैं ॥ ११ ॥ उनके शरीर की कांति बडी उत्कृष्ट है वह लोक सौ योजन चौड़ा और चार सौ योजन ऊंचा है ॥ १२ ॥ इन्द्रनील महानील पद्मराग मणियों से शोभायमान है और तहां आयु ब्रह्मा के तुल्य है भोग भी तत्तुल्य हैं ॥ १३ ॥ भोग के अनंतर फिर मृत्यु-

विपुले कुले ॥ १४ ॥ सर्वैर्गुणैः समोपेतो राजाप्यथ भविष्यति । चक्रवर्त्ती भवेद्राजा जातो जातिस्मरो भवेत ॥ १५ ॥ स्मरंति पूर्वकर्माणि स्मरंति च महापथम् । पुत्रपौत्रसमायुक्तं वामावर्त्तिसुलक्षणी ॥ १६ ॥ एवं भोगे महाभोगान् ब्रह्मलोके व्यवस्थिताः । तिष्ठंति साधकाः सर्वे यावद्देवो प्रजापतिः ॥१७॥ उत्तमे च कुले जन्म ब्रह्मलोके पुनर्व्रजेत । ब्रह्मलोके यदीच्छंते गंतव्यं पथि दक्षिणे ॥ १८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पेशिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने चतुस्त्रिंशः पटलः

साधक उवाच । ॐ ब्रह्मलोके न मे कार्यं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । विष्णुलोकेषु ये भोगा कथयस्व महागुरो ॥ १॥ आचार्य उवाच । विष्णुलोके च ये भोगाः कथयामि ततः शृणु । शंखचक्रगदापद्मशार्ङ्गायुधमनुत्तमम् ॥ २ ॥ चतुर्भुजा महाकाया श्यामवर्णा महात्मनः । विजयंति सुराः सर्वे यत्र

लोक में प्राप्त होते हैं सत्कुल में जन्म होके सर्वसंपन्न होते हैं ॥ १४ ॥ सर्वगुणयुक्त चक्रवर्ती राजा होता है और जातिस्मर होता है ॥ १५ ॥ अपने पहले के कर्मों को स्मरण करते हैं और महापथ का स्मरण रखते हैं पुत्र पौत्र सुंदर स्त्री सहित होते हैं ॥ १६ ॥ इस प्रकार के भोग ब्रह्मलोक में हैं जबतक ब्रह्मा है तबतक ब्रह्मलोक में रहते हैं ॥ १७ ॥ उत्तम कुल में जन्म होके फिर ब्रह्मलोक को जाते हैं ब्रह्मलोक की इच्छावाले इस दक्षिण मार्ग से जाते हैं ॥ १८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे भाषाटीकायां चतुस्त्रिंशः पटलः ।

साधक बोले । मैं सच २ बोलता हूं ब्रह्मलोक में मेरा कोई काम नहीं विष्णुलोक के भोगों को कहो ॥ १ ॥ आचार्य बोला । विष्णुलोक में जो भोग हैं मैं कहता हूं सुनो शंख चक्र गदा पद्म उत्तम शार्ङ्ग आयुध हैं ॥ २ ॥ जहां श्रीविष्णु भगवान् हैं तहां सब चारभुजावाले बड़े शरीरवाले श्याम रंग

देवो जनार्दनः ॥ ३ ॥ दशलक्षं च विस्तीर्णमुच्छ्रायो दशयोजनम् । विमानं कामिनीदिव्यं पद्मरागोपशोभितम् ॥४॥ लक्षद्वयसहस्राणि कन्याः सर्वाश्चतुर्भुजाः । यौवनस्था मदोन्मत्ता मत्तमातंगगामिनीः ॥ ५ ॥ लक्ष्म्या च सदृशाः सर्वाः सर्वाभरणभूषिताः । विष्णुलोके महावीराः क्रीडयंति महातपाः ॥ ६ ॥ गजारूढाः सुखासीना रथारूढा महाबलाः । शंखचक्रगदाहस्तं यथा आयुधकेशवम् ॥ ७ ॥ विष्णुलोके च ये यांति विष्णुतुल्यमहायुषम् । कस्मिन्काले च संप्राप्ते मृत्युलोके व्रजंति च ॥८॥ चक्रवर्त्ती भवेद्राजा जातो जातिस्मरो भवेत् । पुत्रपौत्रसमायुक्तं धनधान्यसमाकुलम् ॥ ९ ॥ कामवंतस्तेजवंतो जायंते विपुले कुले । दीर्घायुर्विपुलान्भोगान्महाबलपराक्रमम् ॥ १० ॥ द्वारे च तिष्ठते सैन्यमश्वनागा ह्यनेकधा । सप्त जन्म भवेद्राजा ह्यजितो नात्र संशयः ॥ ११ ॥ नारीं

के बड़े महात्मा संपूर्ण देवता सुख भोगते हैं ॥ ३ ॥ वह लोक दशलाख योजन चौड़ा और दशलक्ष योजन ऊंचा और लंबा है दिव्यविमान और पद्मराग मणियों से शोभित है ॥ ४ ॥ दो सहस्रलक्ष कन्या सब चतुर्भुज यौवन में प्राप्त मदोन्मत्त मत्त हाथी के समान चलनेवाली ॥ ५ ॥ सब स्त्री लक्ष्मीके समान सब आभरणों से आभूषित विष्णुलोक में क्रीड़ा करते हैं ॥ ६ ॥ हाथियों में चढ़ीं और रथों में चढ़ीं कोई आसन में बैठीं विष्णु के समान शंख चक्र गदा हाथ में लिए हैं ॥ ७ ॥ जो विष्णुलोक में जाते हैं उनको विष्णु के समान आयु होती है और फिर कभी मृत्युलोक में जाते हैं ॥ ८ ॥ तहां चक्रवर्त्ती राजा होता और जातिस्मरणवाला पुत्र पौत्र धन धान्य से युक्त होता है ॥ ९ ॥ और कामयुक्त तेजस्वी होते हैं विपुल कुल में जन्म ले दीर्घायु और बल पराक्रमी हो विपुल भोगों को भोगते हैं ॥ १० ॥ उसके द्वार पर हाथी घोड़े रथ पयादे रहते हैं और सात जन्म तक राजा होता है जो किसी से जीता

च लभते पुत्रं पूर्णचन्द्रप्रभाननम् । एतानि महासेनानी सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ १२ ॥ एतानि च भवेत्तस्य पुर्यां विष्णोर्गते सति । विष्णुलोके न मे कार्यं चैवं वदंति साधकाः ॥ १३ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने पञ्चत्रिंशः पटलः ।

साधक उवाच । ॐ विष्णुलोके महाभोगा मम भोगो न रुच्यते । शिवलोके च ये भोगा आचार्य कथयस्व मे ॥ १ ॥ आचार्य उवाच । एतत्ते कथितं सिद्ध रुद्रलोकमतः परम् । शिवलोके च ये भोगाः कथयामि ततः शृणु ॥ २ ॥ त्रिनेत्रं दशभुजं चैव चंद्रार्धकृतशेखरं । विमानं कामिकादिव्यं चंद्रादित्यसमप्रभम् ॥ ३ ॥ त्रिशूलं वरदं हस्तं गणगंधर्वसेवितम् । कैलासपीठमध्यस्थं यत्र देवो महेश्वरः ॥ ४ ॥ यावद्रूपमहाकाया यावत्सुरगणकोटयः । उमाशिवाग्रे क्रीडंति ह्यमराः सुख-

नहीं जाता ॥ ११ चंद्रमा के समान स्त्री पुत्र उसको प्राप्त होते हैं यह विष्णुलोक के भोग हैं सच २ बोलता हूं ॥ १२ ॥ विष्णुपुरी में इतने भोग प्राप्त होते हैं यह सुन साधक बोले हमारा विष्णुलोक में कुछ काम नहीं ॥ १३ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे भाषाटीकायां पञ्चत्रिंशः पटलः ।

साधक बोले । विष्णुलोक में बड़े भोग हैं परंतु मुझे नहीं रुचते हैं हे आचार्य ! शिवलोक के भोगों को कहो ॥ १ ॥ आचार्य बोला । विष्णुलोक के भोग मैंने तुमको कह दिये अब शिवलोक के भोगों को कहता हूं सुनो ॥ २ ॥ तीन नेत्र दश भुजा शिर पर आधा चंद्रमा धारण किए दिव्य विमानों पर सुन्दर कामिनी जो सूर्य चंद्रमा के समान कांतिवाली विराजती हैं ॥ ३ ॥ त्रिशूल हाथ में लिए गण गंधर्वों करि सेवित कैलास के मध्य में जहां शिव भगवान् हैं ॥ ४ ॥ जितने तहां देवता लोग हैं सब बड़े शरीरवाले शिव के समान रूपवाले हैं वे

समन्विताः ॥ ५ ॥ रमाकोटिसहस्राणि हारकेयूरभूषिताः । सर्वशृंगारशोभाढ्या नूपुरारावसंयुताः ॥ ६ ॥ अक्षयं यौवनाः सर्वा उमयासदृशोपमम् । दिव्यवस्त्रपरीधानं महाभोगपरिच्छदाः ॥ ७ ॥ सर्वभोगसमायुक्ता क्रीडंति शिवसन्निधौ । यावत्तिष्ठति मेदिन्यां यावच्च क्षीरसागरे ॥ ८ ॥ ध्रुवो हि निश्चलो यावद्यावत्स्वर्गे त्रिलोचनः । चंद्रार्कौ गगने यावद्ग्रहनक्षत्रसंयुतौ ॥ ९ ॥ यावद्धि निश्चलो मेरुर्यावल्लोकत्रयस्थितिः । तावत्तिष्ठंति ते सर्वे यावद्देवो महेश्वरः ॥ १० ॥ इच्छाकाले तु संप्राप्ते मृत्युलोके व्रजंति च । सर्वकामसमृद्धाश्च जायंते विमले कुले ॥ ११ ॥ सर्वैर्गुणैःसमोपेता राजानोऽपि भवंति च । पुत्रपौत्रसमायुक्तं धन्यधान्यसमाकुलम् ॥१२॥ द्वारे च तिष्ठते सेना गजैरश्वैरनेकधा ज्ञानयुक्तस्तेजयुक्तश्चक्रवर्ती महानृपः ॥ १३ ॥ सर्वसौभाग्यसंयुक्ता भुंजंति विपु-

सुख सहित शिव पार्वती के आगे क्रीड़ा करते हैं ॥ ५ ॥ हजार कोटी स्त्री हार बाजूबंदों से आभूषित नूपुरों के शब्दों से युक्त सोलह शृंगार किए ॥ ६ ॥ सब अक्षय यौवनवालीं और पार्वती के सामान उपमावालीं दिव्य वस्त्रों को धारण किए महा भोगों से संयुक्त ॥७॥ और सब भोगों से युक्त शिव के आगे क्रीड़ा करती हैं जब तक पृथिवी और समुद्र जल सहित हैं ॥ ८ ॥ जब तक ध्रुव निश्चल है और जब तक स्वर्ग में शिव हैं आकाश में चंद्र सूर्य ग्रह नक्षत्रों सहित हैं ॥ ९ ॥ जब तक मेरु निश्चल है तीनों लोक की स्थिति है और शिव हैं तब तक वे स्थित रहते हैं ॥ १० ॥ जब इच्छा हो तब मृत्युलोक में आते हैं सर्व संपन्न होते हुए बड़े कुल में जन्म लेते हैं ॥ ११ ॥ और सब गुणयुक्त राजा भी होते हैं पुत्र पौत्र धन धान्य से युक्त होते हैं ॥ १२ ॥ उसके द्वार पर चतुरंग सेना रहती है और वह ज्ञान विज्ञान तेजोयुक्त बड़ा चक्रवर्त्ती राजा होता है ॥ १३ ॥ सर्वसौभाग्य युक्त बड़ी संपत्ति को भोगते हैं और बड़ी आयुवाले

लां श्रियम् । दीर्घायुर्विपुलान्भोगान् पुनस्ते स्वर्गगामिनः ॥ १४ ॥ अजराश्च महाप्राज्ञाः पूर्णचन्द्रमुखाः स्त्रियः । कैलासपीठमध्ये तु यत्र देवो महेश्वरः ॥ १५ ॥ सुवर्णगोपुराट्टालैर्मणिप्राकारवेष्टितम् । इन्द्रनीलमहानिलैः पद्मरागोपशोभितम् ॥ १६ ॥ तत्र स्थाने महासेन देवानां च महाबलम् । ध्वजमालाकुलं दिव्यं दृश्यते शिखरोपमम् ॥ १७ ॥ निवासं देवताः सर्वे सुरेन्द्रस्य च कोटिभिः। शिवस्थाने महासेन शोभितं पुरमुत्तमम् ॥ १८ ॥ नृत्यंति ह्यप्सराः सर्वा रंभाद्या अष्टनायिकाः । नित्योत्सवसमाकीर्णं दृश्यते च पुरे सदा १९ वाटिकाः कांचनास्तत्र फलपुष्पोपशोभिताः । कूष्मांडफलरूपेण ह्यमृतं तत्र तिष्ठति ॥ २० ॥ चूतचंदनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितं । एवं पुरे महारम्ये सर्वदेवादिवासितम् ॥ २१ ॥ एकविंशसहस्राणि दृश्यंते धवला गृहाः। तत्र हेममया दिव्या

होते हैं फिर स्वर्ग को जाते हैं ॥ १४ ॥ और अजर अमर बड़ी बुद्धिमती स्त्री तहां कैलास पीठ के बीच में रहती हैं जहां शिव हैं ॥ १५ ॥ सुवर्ण के गोपुर प्राकार मणिखचित से युक्त इन्द्रनील महानील पद्मराग मणियों से युक्त ॥ १६ ॥ हे कार्त्तिकेय ! उस स्थान में देवतों का बल बड़ा है ध्वजोंकी मालों से युक्त शिखर के सदृश दीखता है ॥ १७॥ तहां हे महासेन ! इंद्र सहित सब देवता रहते हैं उस शिवस्थान में अच्छा शोभायमान नगर है ॥ १८॥ रंभादि अप्सरा अष्टनायिका सब तहां नृत्य करती हैं वह पुर नित्य उत्सवों से युक्त रहता है ॥ १९ ॥ तहां सुवर्ण की बावड़ी फल पुष्पोंसे शोभित है और कूष्मांड के फल के रूप से अमृत रहता है ॥ २० ॥ आम्र चंदन केलों के वृक्षों से शोभित है इस प्रकार उस सुंदर पुर में सब देवता वास करते हैं ॥ २१ ॥ इकीस हजार तहां शुभ्र घर दीखते हैं वे सब सुवर्ण के बने महारत्नों से जड़ित हैं ॥ २२ ॥

बहुरत्नोपशोभिताः ॥ २२ ॥ नदी च वहते तत्र घृतक्षीरमधुस्रवा । देवगंधर्वसंकीर्णं देवकन्यासमाकुलम् ॥ २३ ॥ चंद्रादित्यसमं तेजो दृश्यते च पुरे सदा । इन्द्रनीलैर्महानीलैः पद्मरागोपशोभितम् ॥ २४ ॥ तस्य मध्ये महारम्ये ह्यग्निज्वालासमप्रभा । हेम्नो वसुंधरा तत्र स्फुरंति किरणानि च ॥२५॥ साधकाश्च गतास्तत्र यत्र देवो महेश्वरः । लोकद्वारे गताश्चैव चंडीश्वर उवाच ह ॥ २६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने षट्त्रिंशः पटलः ॥ ३६ ॥

चंडीश्वर उवाच । क्वागता भुवनात्सिद्धा क्व स्थाने चैव गम्यते । एतद्ब्रूहि महाचार्य साधकैः परिवेष्टितः ॥ ॥ १ ॥ साधक उवाच । कथयामि महाचंड शृणु मे वचनं महत् । आगता मृत्युलोकाच्च गंतव्यं शंकरालये ॥ २ ॥ देवा ऊचुः । दिव्यं विमानं कामिन्यः पश्यंति सर्वसाधकाः । आरूढाश्च भवेत्सिद्धा वेष्टिताः सर्वसाधकाः ॥ ३ ॥ दिव्यचीरपरीधानैर्दिव्यगंधानुलेपनैः । दिव्यपुष्पशिरोबध्वा दिव्यरत्न-

घी दूध मधु की तहां नदी बहती है देवता गंधर्व और देवकन्याओं से युक्त है ॥ २३ ॥ उस नगर में चंद्र सूर्य के समान तेज है और नगर इन्द्रनील महानील मणियों से शोभायमान है ॥ २४ ॥ उसमें बड़ी रमणीय अग्नि के शिखा की कांतिवाली सुवर्ण की भूमि है ॥ २५ ॥ साधक तहां पहुंचे जहां शिव हैं द्वार पर खड़ा चंडीश्वर था वह बोला ॥ २६ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे भाषाटीकायां षट्त्रिंशः पटलः ।

चंडीश्वर बोला । हे सिद्धों ! तुम कहांसे आए और कहां को जाते हो हेआचार्य ! सिद्धोसहित तुम कहो ॥ १ ॥ देवतों बोले यह दिव्य बिमानों में चढ़ी सब कामिनी हैं ॥ ३ ॥ दिव्य वस्त्र और दिव्य गंध धारण किए दिव्य

समाकुलम् ॥ ४ ॥ विमानारूढ भो सिद्धा यत्रेच्छा तत्र गम्यताम् । आरूढं तव विप्रेंद्र यथायं तत्र गच्छति ॥ ५ ॥ इच्छावरं च भोक्तव्यं यावच्चंद्रार्कतेजसा । सुवर्णकेतकीजाती तिष्ठंति राजचंपिकाः ॥ ६ ॥ बकुलैः शतपत्रैश्च बिल्ववृक्षैश्च पाटलैः। एवं पुरे महारम्ये बहुगंधादिवासिते ॥ ७ ॥ साधक उवाच । तस्मिन् स्थाने न मे कार्यं न मे भोगप्रयोजनम् ॥ ८ ॥ मया च तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः । तत्र स्थाने महासेन चंडरूपं धृतं महत् ॥ ९ ॥ ओष्ठमेकं भुजौ द्वौ च द्वितीयो गगने स्थितः। रक्तनेत्रं महाक्रूरं तीक्ष्णदंष्ट्रभयानकम् ॥ १० ॥ तस्य स्वरनिनादेन यथा मेघस्य गर्जितं । जिव्हा स्फुरति विस्तीर्णं साधका विस्मयं गताः ॥ ११ ॥ साधकाः शंकितास्तत्र अघोरं जप्यते महान्। अष्टोत्तरशतं चैव ह्यघोरं जप्यते क्षणात् ॥ १२ ॥ अघोरं जप्यमानस्तु अदृश्यं जायते

पुष्पों की माला रत्न मंडित शिरों में गलों में डाले ॥४॥ हे सिद्धों ! विमानों में बैठ जहां की इच्छा है तहां जाओ ॥ ५ ॥ जैसी तुम्हारी इच्छा है वैसे भोगों को जब तक तेजायुक्त चंद्र सूर्य हैं तब तक भोगो तहां सुवर्ण के जाती केतकी चंपिका हैं॰॥ ६ ॥ बकुल शतपत्र पाटल बिल्व वृक्षों से युक्त और बहुत गंधों से सुगंधित ॥ ७ ॥ साधक बोले । उस स्थान में हमारा कुछ काम नहीं और भोग का भी हमें प्रयोजन नहीं ॥ ८ ॥ हमने तो जहां शंकर है वहां जाना है उस स्थान में चंडीश्वर ने बड़ा भयंकर रूप धारा ॥ ९ ॥ एक ओठ दो भुजा दूसरा ओठ आकाश में लाल नेत्र तीखी दाढ़ बड़ा क्रूर भयानक॥१०॥ मेघ के गर्जन के समान उसका स्वर और लंबी जिव्हा स्फुरती थी उसको देख साधक विस्मय को प्राप्त हुए ॥ ११ ॥ साधक शंकित होके एकसौ आठवार अघोर मंत्रको जपने लगे ॥१२॥ अघोर मंत्रके जपने से भय तत्काल नष्ट हुआ यह अघोर मंत्र है ॥ तब साधक लोग प्रसन्न भये और परमेश्वर को प्रणाम

भयम् । ॐ हुंफट्स्वाहा ॥ हर्षतुष्टा महासिद्धाः प्रणम्य परमेश्वरम् ॥ १३ ॥ लक्षणं दृश्यते रूपं चंडीश्वरमहाबलम् । सत्यं च वदते यावत्तावच्चंडीश्वरः पुनः ॥ १४ ॥ रत्नमाला करे तस्य कर्णे च हेमकुंडले । चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं च शूलहस्तं धृतस्तदा ॥ १५ ॥ दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्यदेहस्वरूपकम् ॥ दिव्याभरणशोभाढ्यं दिव्यगंधानुलेपनम् ॥ १६ ॥ चंडीश्वर उवाच । सिद्ध सिद्ध महाप्राज्ञ कृतं कर्म सुदुस्तरम् । क्षणमेकं स्थितो वीर यावद्रुद्रः समागतः ॥ १७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेय संवादे कैलासगमने सप्तत्रिंशःपटलः।

ॐ हर्षतुष्टस्ततश्चंडः साधकानां प्रबोधितः । एवमुक्त्वा ततश्चंडो यत्र देवो महेश्वरः ॥ १ ॥ चंडीश्वर उवाच । कृतांजलिपुटो भूत्वा पृच्छतिस्म महेश्वरम् । साधका मृत्युलोकाच्च ह्यागता देवदर्शने ॥ २ ॥ श्रीपरमेश्वर उवाच । शृणु चंड

करते भये ॥ १३ ॥ तब तत्काल महा बल पराक्रमवाला चंडीश्वर ने अपना रूप दिखाया फिर कहने लगा ॥ १४ ॥ हाथ में रत्नों की माला कानों में सुवर्ण के कुंडल पहने चार बाहु तीन नेत्र और शूल धारण किये ॥ १५ ॥ दिव्य वस्त्र को धारण किया था शरीर दिव्य और दिव्य आभरणों से शोभा युक्त दिव्य गंध को लेपन किए ॥ १६ ॥ चंडीश्वर बोला । हे सिद्ध ! महाप्राज्ञ ! तुमने बड़ा दुष्कर काम किया क्षण मात्र यहां ठहरो जब तक रुद्र भगवान आते हैं ॥ १७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषा टीकायां सप्तत्रिंशः पटलः ।

तब चंडीश्वर ने प्रसन्न हो साधकों को समझाया और जहां महेश्वर थे वहां लेगया ॥ १ ॥ चंडीश्वर अंजलिको बांध भगवान् को पूछने लगा कि आपके दर्शन के लिए मृत्युलोक के साधक लोग आए हैं ॥ २ ॥ शिव भगवान बोले ।

महाप्राज्ञ ह्येकचितो व्यवस्थितः । मृत्युलोके महातीर्थं केदारो नामदैवतम् ॥ ३ ॥ तत्रैव ललिता गंगा ह्यर्चयित्वा तु शंकरम् । तत्र कालेतिचंडस्य साधका हृदयं तथा ॥ ४ ॥ आगच्छत महाचार्यो विलंबं नैव कारयेत् । हर्षतुष्टो महाचंडो यत्र तिष्ठंति साधकाः ॥ ५ ॥ चंडीश्वर उवाच । युष्मत्तुष्टो महादेवो उमासार्धं त्रिलोचनः । उतिष्ठ गम्यतां सिद्ध तुष्टस्ते परमेश्वरः ॥ ६ ॥ नंदी स्कंदो महाकाल आगता रथगामिनः । त्रिनेत्रा दशभुजाश्चैव त्रिशूलं करपल्लवैः ॥ ७ ॥ तदा सिद्धाः समारूढाः स्कंदस्तत्र समागमत । स्वागताश्च महातेजा इच्छंति च रथोत्तमम् ॥ ८ ॥ साधक उवाच । प्रणम्य देवदेवस्य आरूढं च रथोत्तमान् । तेषु सर्वे समारूढाः सर्वकामैःप्रपूरिताः ॥९॥ दिव्यदेहा महाकायाः सर्वभोगसमन्विताः। तावत्पश्यंति ते चंडं वदंति साधकोत्तमाः ॥ १० ॥ पृच्छते देवदेवस्य

हे चंड ! महाप्राज्ञ ! एक चित्त होके सुनो मृत्युलोक में केदार बड़ा तीर्थ है ॥ ३ ॥ वहीं ललिता गंगा है शंकर का तहां पूजन करैं यह बात तब चंडीश्वर ने साधकों से कही ॥४॥ हे साधकों ! आओ विलंब मत करो प्रसन्न हो चंडीश्वर ने कहा ॥ ५ ॥ चंडीश्वर बोला । पार्वती सहित महादेव तुम पर संतुष्ट हुए हैं उठो चालिए ॥ ६ ॥ नंदी स्कंद महाकाल ये सब रथों में चढ़े तीन नेत्र दश भुजावाले त्रिशूल हाथों में लिए आए ॥ ७ ॥ तिस समय स्कंद रथ में चढ़ आया जहां सिद्ध थे बोला कि हे महातेजस्विओं ! आप लोगों को स्वागत है उत्तम रथ की इच्छा करो ॥ ८ ॥ साधक बोले । रथों में चढ़े देवता को प्रणाम है आप भी सब कामों से पूरित रथ में चढ़ा ॥ ९ ॥ दिव्य शरीर धारण किए बड़े शरीर वाले सब भोगों से युक्त साधक चंडीश्वर से बोले ॥ १० ॥ उत्तम रथों में चढ़ ईश्वर को पूछते हुए संपूर्ण कन्या तहां प्राप्त

आरूढं च तथोत्तमान् । सर्वकन्यासमायुक्ता आगता रथगामिनीः ॥ ११ ॥ तावत्पश्यंति ते चंडं वदन्ति साधकोत्तमम् । किमेवं दृश्यते स्वर्गे शिखरैश्चैव शोभितम् ॥ १२ ॥ यस्य देवस्य यत्स्थानं यादृशं यस्य भूषणम् । प्रतिबंधं च भो चंडी वदंति साधकोत्तमाः ॥ १३ ॥ एषां स्थानं च नामानि सुस्थानं शोभनानि च । तत्र स्थानं च नामानि तत्सर्वं कथयामि ते ॥ १४ ॥ इति श्री केदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कलासगमने अष्टत्रिंशः पटलः ॥

चंडीश्वर उवाच । दृश्यंते कांचना वृक्षाः पारिजातकपंकजाः । तत्र हेमप्रभा दिव्यं नानारत्नविभूषितम् ॥१॥ इंद्रनीलमहानालैः पद्मरागोपशोभितम् । तेषां स्थानानि दिव्यानि तत्सर्वं कथयामि ते ॥ २ ॥ अमरावती पूरी रम्या पूर्वभागे व्यवस्थिता । सर्वदेवस्य राजायं दैत्यारिः शक्रनामतः ॥ ३ ॥ आग्नेय्यां या च दिग्भागे पुरी तेजोवती च सा । हुतभुग्वसते

भई ॥ ११ ॥ इतने में चंडेश्वर साधकों को बोला देखिए स्वर्ग कैसे शिखरों से शोभायमान है ॥ १२ ॥ जिस देवता का जो स्थान है और जिसका जैसा भूषण है हे चंडीश्वर ! सब बतलाइए यह साधकों ने कहा ॥ १३ ॥ जिनका जैसा रूप स्थान नाम आभूषण आदि जो हैं कहता हूं ॥ १४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां अष्टत्रिंशः पटलः ।

चंडीश्वर बोला । यह सब सुवर्ण के वृक्ष पारिजात कल्पवृक्ष सुवर्णकमल नानारत्नों से भूषित दिव्य कांति वाले हैं देखो ॥ १ ॥ इन्द्रनील महानील मणि पद्मराग से शोभित हैं इनके दिव्य स्थानों को सब कहता हूं ॥ २ ॥ पूर्व भाग में अमरावती पुरी है तहां दैत्यों का शत्रु देवतों का राजा इंद्र रहता है ॥ ३ ॥ आग्नेय दिशा में तेजोवती पुरी है तहां अग्नि रहता है जो पितर देवतों

तत्र यो सुखं पितृदेवताः ॥४॥ याम्यां चैव दिशां सिद्धा पुरी ज्योतिष्मती शुभा। धर्माधर्मनिरीक्षार्थं धर्मराजो रवेः सुतः ॥५॥ नैरृत्यां चैव दिग्भागे पुरी यक्षवती शुभा। निवासो यक्षरक्षानां महादेवेन निर्मितः ॥ ६ ॥ वारुणे चैव दिग्भागे वरुणस्य महापुरी । पश्चिमे जलजंतूनां नाथो वरुण एव च ॥ ७ ॥ वायवीये च दिग्भागे पुरी गंधर्वसेविता । ये वै रुद्रसभामध्ये नृत्यंति च हसंति च ॥८॥ उत्तरस्य च दिग्भागे पुरी महोदधि शुभा। यत्र रुद्रस्य वसति ह्यमात्यो धनदस्तथा ॥९॥ यशोवती पुरी रम्या चैशान्यां च समाश्रिता । मध्ये लिंगं कृतं दिव्यं शंखकुंदेन्दुसन्निभम् ॥ १० ॥ कोटिद्वादशविस्तीर्णं उच्छ्रायश्च चतुर्गुणम् । कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नविभूषितम् ॥ ११ ॥ संभाषाः साधकास्तत्र पश्यंति च हिमालयम्। विमानं कामिका दिव्यं मणिरत्नसमाकुलम् ॥ १२ ॥ सर्ववाद्यरवोपेतं दुंदुभिप

का सुख है ॥ ४ ॥ दक्षिण दिशा में ज्योतिष्मती पुरी है तहां धर्म अधर्म देखने के अर्थ सूर्यका पुत्र धर्मराज रहता है ॥ ५ ॥ नैऋत्यदिशा में यक्षवती पुरी है तहां यक्ष राक्षसों का निवास स्थान महादेव ने रचा है ॥ ६ ॥ पश्चिम दिशा में वरुण-पुरी है तहां जलजंतुओं का स्वामी वरुण रहता है ॥ ७ ॥ वायव्य दिशा में गंधर्वों से सेवित गंधर्वपुरी है जो रुद्र की सभा में नर्तन करते हंसते हैं ॥ ८ ॥ उत्तर दिशा में महोदधि नाम पुरी है तहां रुद्र की बसती है तहां रुद्र का अमात्य कुबेर रहता है ॥ ९ ॥ ईशान दिशा में यशोवती नगरी है उसमें शंख कुंद पुष्प के समान शिवलिंग है ॥ १० ॥ बारह करोड़ योजन चौड़ा और अठतालीस करोड ऊंचा कैलास पर्वत रम्य और नानारत्नों से आभूषित है ॥ ११ ॥ साधकों ने वहां पहुंच हिमालय को देखा तहां मणि रत्नों से आभूषित दिव्य विमान है ॥ १२ ॥ संपूर्ण बाजों के शब्द से युक्त दुंदुभि शंख मर्दल पटह

टहान्वितम् । शंखकोलाहलं पूर्ण महामर्दलसंयुतम् ॥ १३ ॥
वेणुशंखमृदंगानां महानादैः सुनादितम् । नृत्यंत्यप्सरसः सर्वा
रंभाद्याः सुमनोहराः ॥ १४ ॥ श्रुत्वा च साधकाः सर्वे हर्षयंति
पुनः पुनः । नमस्ते शिवरूपाय नमस्ते ब्रह्मयोगिने ॥ १५ ॥
शतयोजनविस्तीर्णं शोभितं हरमंदिरम् । देवगंधर्वसकीर्णमुत्तुं-
गो हि चतुर्गुणम् ॥ १६ ॥ हेमरत्नसमायुक्तं प्राकारमपि
शोभितम् । तत्र स्थाने महारम्ये ह्यग्निज्वालासमप्रभा ॥१७॥
मौक्तिकं चंद्रकांतश्च प्रस्फुरंति ह्यनेकधा । मेरुशृंगे समारूढा
नानारत्नविचित्रिताः ॥ १८ ॥ प्रतोलीद्वारसंयुक्तं वेष्टितं
शिवशासनम् । हेमरत्नसमायुक्तं दिव्यं ज्योतिमनोहरम् ॥ १९ ॥
षोडशकलासमायुक्तं दिव्यं ज्योतिमनोहरम् । लक्षयोजनवि-
स्तीर्णं हरस्थानं च मंडपम् ॥ २० ॥ स्तंभा हेममयाः सर्वे
चंद्रकांतिसमप्रभाः । हैमेन रचिता भूमिर्नानारत्नविभूषिता ॥ २१ ॥

इत्यादिक बाजों का कोलाहल शब्द युक्त ॥ १३ ॥ वेणु मृदंग शंखों से सुशब्दित था तहां अप्सरा सुमनोहर रंभादिक नाचती हैं ॥ १४ ॥ साधकों ने सुनकर बड़ा हर्ष किया और बार बार ब्रह्मयोगी शिवरूप को प्रणाम किया ॥ १५ ॥ सौ योजन चौड़ा शिवजी का मंदिर शोभायमान है और इससे चौगुणा ऊंचा है जो देव गंधर्वों से शोभायमान रहता है ॥ १६ ॥ सुवर्ण के प्राकार जो रत्नों से जड़ित तिनों से शोभित उस स्थान में अग्नि की शिखा समान कांति थी ॥ १७ ॥ तहां मोती और चद्रकांत शिला चमकती थी उस मेरुशिखर में चढ़के देखा जो बड़ा चित्र विचित्र ॥ १८ ॥ प्रतोली द्वारों से युक्त और शिव के शासन वालों से घिरा हुआ सुवर्ण और रत्नों से युक्त दिव्य मनोहर ज्योती शोभ रही थी ॥ १९ ॥ सोलह कला समेत दिव्य मनोहर ज्योति से मनोहर लक्ष योजन विस्तीर्ण शिव का मंडपस्थान है ॥ २० ॥ चद्रकांत के समान प्रभा वाले सुवर्ण के स्तंभ-

क्षणे क्षणे च तिष्ठंति सूर्यकोटिसमप्रभा । तस्य मध्ये महादेवः सभार्यां परिवेष्टितः ॥ २२ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नकृतानि च । भूषिता कनकांता च पद्मरागं ततः परम् ॥२३॥ मुक्ताफलप्रवालैश्च चंद्रकांतिसमप्रभम् । तत्र तिष्ठति देवेशो जगन्नाथो महेश्वरः ॥ २४ ॥ चामरैर्वीज्यमानस्तु धनदो वासुकी तथा । नंदी चंडप्रतीहारास्तिष्ठंते द्वारसंस्थिताः ॥२५॥ सोमेन धारितं छत्रं रुद्रस्योपरि चाश्रितम् । पवनैर्वाद्यते वीणा महानादादिपूरिताः ॥ २६ ॥ देवदेवं सुरश्रेष्ठं सर्वाभरणभूषितम् । दिव्यवस्त्रपरीधानं चंदनागरुलेपनम् ॥ २७ ॥ नीलकंठं महातेजो सूर्यकोटिसमप्रभम् । त्रिनेत्रं दशभुजं चैव चंद्रार्धकृतशेखरम् ॥ २८ ॥ महादेवं वृषारूढं शूलहस्तधरं तथा । सर्वभोगसमायुक्तं भस्मगात्रविलेपनम् ॥ २९ ॥ कपालखड्गधरं देवं

बने हुए हैं और तहां की भूमि रत्नों से आभूषित सुवर्ण की रची है ॥ २१ ॥ करोड़ सूर्य के समान कांति क्षण २ में होती है उसके बीच में सभा है तिसमें शंकर विराजमान हैं ॥ २२ ॥ रत्न जड़ित सुवर्ण के दिव्य सिंहासन बने हुए हैं उनमें पद्मरागमणि जड़े हुए हैं ॥ २३ ॥ प्रवाल मोती चंद्रकांत शिला सदृश प्रभा है तहां जगत् के नाथ देव देवेश शिवजी रहते हैं ॥ २४ ॥ कुबेर वासुकी चामर डोलाते हैं और नंदी चंड द्वारपाल द्वारपर खड़े हैं ॥ २५ ॥ और शिव के छत्र को चंद्रमा धारण किए रहता है पवनों से पूरित महानादयुत वीणा बजती है ॥ २६ ॥ देवों के देव श्रेष्ठ सब आभरणों से आभूषित दिव्य वस्त्र धारण किए और अगरु चंदन लेपन किए ॥ २७ ॥ बड़े तेजोयुक्त करोड़ सूर्य के समान कांतिवाला त्रिनेत्र दश भुजावाला चंद्रमा शिर में शोभायमान नील कंठ ॥ २८ ॥ बैल पर चढ़े शूल हाथ में लिए संपूर्ण भोगों से युक्त शरीर में भस्म पहने ऐसे महादेव ॥ २९ ॥ कपाल और खड्ग धारण किए पांच हैं मुख जिसके और पिनाक को धारण किए सर्पों से शोभायमान भक्तों को वर

पंचवक्त्रं पिनाकिनम् । चंद्रमाल्यालशोभाढ्यं देवदेवं वरप्रदम् ॥३०॥ देवगंधर्वसंकीर्णं रुद्रकन्यासमाकुलम् । देवदेवं महादेवं सर्वदेवशिरोमणिम् ॥ ३१ ॥ विश्वनाथं जगन्नाथं सर्वव्यापिनमीश्वरम् । तिष्ठंति मुनयः सर्वे तिष्ठंते सर्वदेवताः ॥ ३२ ॥ जिह्वाग्रे च चतुर्वेदा हृदये भुवनत्रयम् । रोमाग्रे मुनयः सर्वे तिष्ठंते सर्वदेवताः ॥ ३३ ॥ सप्त पातालपादौ च ह्याकाशे मस्तकं तथा । लोचने च महासेन वह्निचंद्रार्कतेजसा ॥ ३४ ॥ तिष्ठंते च सुराः सर्वे ब्रह्माद्या देवतागणाः । सभायां परितिष्ठंति ब्रह्मविष्णुपुरंदराः ॥ ३५ ॥ प्रेक्षणीयं प्रकुर्वंति वाद्यते वादनं बहु । शंखदुंदुभिनिर्घोषैः काहलैर्भेरिमर्दलैः ॥ ३६ ॥ नृत्यंत्यप्सरसः सर्वा रंभाद्याः सर्वनायिकाः । पताकातोरणानीह रंगमाला तथा कृताः ॥ ३७ ॥ स्वस्तिकैः पद्मशंखैश्च लिपितास्तत्र कन्यकाः । विद्युत्तेजसमा भूत्वा हेमरत्नविभूषिताः ॥ ३८ ॥

देने वाला ऐसे देवों के देव ॥ ३० ॥ देवता और गधर्वों से युक्त और रुद्रकन्या सहित संपूर्ण देवों का शिरोमणि महादेव ॥ ३१ ॥ जगत् के नाथ सर्वव्यापी ऐसे महेश्वर को देखा जहां मुनि लोग संपूर्ण देवता स्थित हैं ॥ ३२ ॥ जिसके जिह्वा के अग्रभाग में चारों वेद और हृदय में तीन लोक और रोमों में मुनि और देवता हैं ॥ ३३ ॥ हे कार्त्तिकेय ! सप्त पाताल जिसके चरण हैं आकाश मस्तक है चंद्र सूर्य अग्नि नेत्र हैं ॥ ३४ ॥ संपूर्ण ब्रह्मादि देवता तहां रहते हैं और सभा में ब्रम्हा विष्णु इंद्र रहते हैं ॥ ३५ ॥ तहां दर्शन करते हैं शंख दुंदुभि काहल भेरी मर्दल इत्यादि बाजे बजते हैं और बड़ा शब्द गूंजता रहता है ॥ ३६ ॥ रंभादिक अप्सरा सर्व नायिका नाचती हैं और पताके नाना रंग के लगे हैं ॥ ३७ ॥ बड़े मंगल स्वस्तिक के शब्दों से वह स्थान युक्त है बिजली के समान तेजवाली रत्नों से अभूषित तहां कन्या विराजमान हैं

दिव्यवस्त्रपरीधानं चंदनागरुलेपनैः । सर्वलक्षणसंपूर्णं नूपुराद्यै-
रलंकृताः ॥ ३९ ॥ करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः । संपूर्ण-
चंद्रवदना कुंडलाभरणोज्वलाः ॥ ४० ॥ रूपयौवनसंयुक्ता
नागवल्लीविभूषिताः । संपूर्णचंद्रवदनाः कुंडलाभरणोज्वलाः ४१
शिरपुष्पैः सुगंधाश्च वदंति कोकिलास्वरम् । नृत्यंति शंकरस्याग्रे
वाद्यंते बह्वनेकधा ॥ ४२ ॥ पठंति विविधं स्तोत्रं सेवितं
सुरनेकधा । नानारत्नसमायुक्तं पुष्पमालाभिशोभितम् ॥४३॥
चंदनागरुकर्पूरं त्र्यंबकेन प्रशोभिताः । दर्पणैश्चामरैस्तत्र वासि-
तैर्विपुलानि च ॥ ४४ ॥ पारिजातकपंकजास्तत्र नागपुष्पोप-
शोभिताः । मंदारकल्पवृक्षस्य सुपुष्पावल्यनेकधा ॥ ४५ ॥
केतकीशतपत्रैश्च बिल्ववृक्षैश्च पाटलैः । एवं वृक्षसमाकीर्णं देव-
दारैः फलैस्तथा ॥ ४६ ॥ पुष्पगंधाकुलं चैव कांचनं राजचं-
पिका । मोगरामालतीवृक्षैर्गुलाबैर्गुलचंदनैः ॥ ४७ ॥ चूतचं-

॥ ३८ ॥ दिव्य वस्त्रों को पहने चंदन अगरु से लिप्त संपूर्ण लक्षणों से युक्त नूपुरादिक अलंकारों से आभूषित ॥ ३९ ॥ हाथों में कंकण पहने गलों में हार पहने बाजूबंद लगाए कुंडलादि आभूषणों से प्रकाशमान ॥ ४० ॥ सब रूप यौवन युक्त पान चबाती हुई पूर्ण चंद्रमा के समान मुखवाली कुंडलों से प्रकाशित ॥ ४१ ॥ शिरों में पुष्प पहने कोकिल के समान स्वरवाली बहुत बाजों को बजाती हुई शिव के आगे नाच रही हैं ॥ ४२ ॥ नानास्तोत्र-पाठों से शिव की सेवा कर रही हैं नाना रत्न युक्त पुष्पों की मालों से शोभायमान हैं ॥ ४३ ॥ चंदन अगरु कर्पूर से सुगंधित तीन नेत्रों से शोभायमान दर्पण चंवर डोलाती हैं ॥ ४४ ॥ पारिजात नागपुष्प कमल पुष्पों से शोभित मंदार कल्पवृक्षों के पुष्पों की माला चढ़ाती हैं ॥ ४५ ॥ केतकी शतपत्र बिल्व-वृक्ष पाटल देवदारु के फलों से वह स्थान युक्त है ॥ ४६ ॥ पुष्प गंध कांचन राजचंपिका मोगरा मालती गुलाब गुलचंदन वृक्षों से ॥ ४७ ॥ आम चंदन

दनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितम् । वासितं रचितं सर्वैर्नागपुष्पोपशोभितम् ॥ ४८ ॥ संप्राप्ताःसाधकास्तत्र पृच्छंति च शिवालयम् । सर्वदा सर्वसिद्धैश्च हृष्टपुष्टाश्च साधकाः ॥ ४९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने एकोनचत्वारिंशः पटलः ।

शौनक उवाच । वद सूत महाप्राज्ञ शिवमाहात्म्यमुत्तमम् । कैलासे साधको गत्वा किं चकार ततः परम् ॥ १ ॥ सूत उवाच । शृणु भार्गव यत्नेन यत्पृष्टो हि त्वया मुने । तत्सर्वं कथयिष्यामि यथा रुद्रेण भाषितम् ॥ २ ॥ श्रीशिव उवाच । अतः परं प्रवक्ष्यामि शृणु कार्त्तिक यत्नतः । रहस्यं भुवनं दृष्ट्वा सिद्धाश्च विस्मयं गताः ॥ ३ ॥ सर्वे दशभुजाश्चैव चंद्रार्धकृतशेखराः । ब्रह्मा विष्णुस्तथा शक्रग्रहनक्षत्रसंयुताः ॥४॥ नंदी चंडो महाकालो भृंगी कूष्मांड एव च । सिद्धविद्याधरा

केले के वृक्षों से मंडित नाग पुष्पों से शोभित नाना गंधोंसे सुगंधित है ॥४८॥ उस स्थान में साधक पहूंचे शिवालय को पूंछने लगे और बड़े हृष्ट पुष्ट हुए ॥ ४९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां एकोनचत्वारिंशः पटलः ।

शौनक बोले । हे सूत ! हे प्राज्ञ ! आप शिवजी के माहात्म्यको कहो साधकों ने कैलास में जाके क्या किया ॥ १ ॥ सूत बोले । हे भार्गव ! तुमने जो पूछा है उसको सब कहता हूं जैसा रुद्र ने कहा ॥ २ ॥ शिव बोले । हे कार्त्तिकेय ! अब इसके आगे फिर मैं कहता हूं सिद्धलोग इस भुवन को देख आश्चर्य को प्राप्त हुए ॥ ३ ॥ वहां कैलास के रहनेवाले दश भुजावाले हैं और माथे पर चंद्रमा है ब्रह्मा विष्णु इंद्र ग्रह नक्षत्रों सहित ॥ ४ ॥ नंदी चंड महाकाल भृंगी कूष्मांड सिद्ध विद्याधर नाग महेश्वर सब त्रिशूल

नागा शूलपाणिर्महेश्वरः ॥ ५ ॥ भुजंगकंकणैश्चैव पुष्पहस्तं तथैव च । वृषभो वासुकी चैव ये चान्ये त्रिदशाः सुराः ॥६॥ तेन दृष्ट्वा महाप्राज्ञाः साधका विस्मयं गताः । तत्र स्थाने महासेन कथयामि तव शृणु ॥७॥ साधक उवाच । पृच्छंति साधकाः सर्वे कुत्र देवो महेश्वरः । दृश्यते च समं रूपं सर्वे देवा व्यवस्थिताः ॥ ८ ॥ चंडीश्वर उवाच । ब्रह्मा च दक्षिणे भागे वामे विष्णुः समाश्रितः । अर्धनारीश्वरो देवः सर्वाभरण भूषितः । भस्मना धूलितं गात्रं अधः कुंकुमस्वर्चितम् ॥ ९ ॥ एवं देवो ह्युमासार्धं त्रिदशेश्वरपूजितम् । एवं पश्यंति ते सिद्धा देवदेवं महेश्वरम् ॥ १० ॥ दंडवत्प्रणिपत्याथ पतंति धरणीतले । कृतां जलिपुटो भूत्वा प्रणमंति पुनः पुनः ॥ ११ ॥ साधक उवाच । अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः । अद्य मे सफलं जाप्यमद्य मे सफलाः क्रियाः ॥१२॥ अद्य मे सफलं पंथमद्य मे

धारण किए रहते हैं ॥ ५ ॥ सर्प के कंकण पहने पुष्प हाथ में लिए वृषभ वासुकी और भी देवताओं से युक्त रहते हैं ॥ ६ ॥ हे महासेन ! बड़े बुद्धिमान साधक लोग उस स्थान को देख विस्मय को प्राप्त हुए तहां का सब वृत्तांत कहता हूं ॥ ७ ॥ साधक बोले । महेश्वर देव कौन है कहां पर है यहां सब समान रूपवाले हैं ॥ ८ ॥ चंडीश्वर बोला । ब्रह्मा दहिने भाग में हैं वाम भाग में विष्णु हैं अर्धनारीश्वर शिवभगवान् सब आभरणों से युक्त भस्म शरीर में लगाए आधा शरीर में कुंकुम लगाया है ॥ ९ ॥ इस प्रकार पार्वती सहित देवों के देव महेश्वर जो संपूर्ण देवतों से पूजन किए जाते हैं तिन भगवान को साधकों ने देखा ॥ १० ॥ दंड के समान भगवान के निकट प्रणाम किया और अंजलि को बांध बार २ प्रणाम किया ॥ ११ ॥ साधक बोले । आज हमारा जन्म सफल भया तप सफल भया जप सफल भया क्रिया सफल भई ॥ १२ ॥ पंथ सफल भया पूजन सफल भया कर्म सफल भया जो हमने आज सदा-

सफलाचर्नम्। अद्य मे सफलं कर्म मया दृष्टः सदाशिवः॥१३॥ नमस्यं चरणं पूज्यं दृष्ट्वा संभाषितं शिवम् । दृष्ट्वा संभाषितं शंभो प्रसिद्धः साधकोत्तमः ॥ १४॥नमस्कृत्वा ततो देवं पिनाकि वृषभध्वजम् । अद्य मे सफलं कृत्यं दृष्ट्वा देवं महेश्वरम् ॥१५॥ नमस्कृत्वा जगन्नाथं पन्नगं सपिनाकधृक् । वरं देहि महादेव साधकानां यथोत्तमम् ॥ १६ ॥ श्रीपार्वत्युवाच । वरं देहि महादेव साधकानां यथोत्तमम् । एवमुक्त्वा सुरेशानं ततो ह्याज्ञा प्रदीयते ॥ १७ ॥ श्रीपार्वत्युवाच । नंदी स्कंदो महाकालः सर्वे च गणनायकाः । जयंच विजयं चैव नर्मदा च सरस्वती ॥ १८ ॥ गंगा च यमुना चैव कावेरी सागरेण च । स्नात्वा च हेमकुंभेन पठंते सिद्धचारणाः ॥ १९ ॥ जयशब्देन देवस्य शंखतूर्यरवेण च । दिव्याभरणवस्त्रस्य नानारत्नविभूषितम् ॥ २० ॥ रत्नमालाशिरे तस्य ललाटे

शिव का दर्शन पाया ॥ १३ ॥ साधकों ने शिव के चरणों को नमस्कार किया और भाषण किया ॥ १४ ॥ पिनाक को धारण करनेवाले और वृषभ है ध्वजा में जिसके ऐसे शिव को प्रणाम करके कहा कि आज हमारा सब काम सफल भया जो शिव के दर्शन पाये ॥ १५ ॥ और भगवान् को प्रणाम कर कहने लगे कि हे देवदेव ! महादेव ! हमको वरदान दीजिए ॥ १६ ॥ श्रीपार्वतीजी बोलीं । हे प्रभो ! इनको उत्तम वरदान दीजिए तब देवतों को आज्ञा दी ॥ १७ ॥ नंदी स्कंद महाकाल और सब गणनायक जय विजय नर्मदा सरस्वती ॥ १८ ॥ गंगा यमुना कावेरी समुद्र सहित इनमें सुवर्ण के घट से स्नान कर सिद्ध चारण पाठ करते हैं ॥ १९ ॥ जय २ शब्द करके शंख तूर्य के शब्द को करते वस्त्र आभूषण नाना रत्नों से अलंकृत ॥ २० ॥ शिरों में रत्नों की माला लगी है ललाट में अर्ध चंद्र है सुंदर रूपवाले जय जय

चंद्रशेखरम् । प्रकाशसदृशो रूपं सौख्यकाममयानि च ॥२१॥ देवीस्मरणमात्रेण ह्यानंदमुत्तमोत्तमम् । पद्मं च दृश्यते रूपं साक्षात्त्रैलोक्यगामिनः ॥ २२ ॥ देवी सुवर्णपात्रेण दधारामृतमुत्तमम् । पीयंते येऽमृतं सिद्धा योनिगर्भान्निवर्त्तते ॥ २३ ॥ उमया सहितो रुद्रो वरं दत्वा च साधकान् । पश्चाच्च साधकाः सर्वे यत्रेच्छा तत्र गम्यताम् ॥ २४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने चत्वारिंशःपटलः

ईश्वर उवाच । चंडेश सहिताः सिद्धा प्रेप्सितं पुरमुत्तमम् । प्राच्यां दिशि महादिव्या पुरी शक्रस्य शोभिता ॥ १ ॥ साधकाश्च गतास्तत्र यत्र इन्द्रपुरी महान् । द्वादशलक्षविस्तीर्णमुच्छ्रायश्च चतुर्गुणम् ॥ २ ॥ द्वादशादित्यतेजाढ्यं हेमप्राकारवेष्टितम् । मणिरत्नसमाकीर्णं प्रासादगृहसंकुलम् ॥ ३ ॥ शतयोजनविस्तीर्णं मन्दिरस्य च मंडपं । प्रतोल्या द्वारसंयुक्तं दिव्यकांचनशोभितम् ॥ ४ ॥

बोले ॥ २१ ॥ जिस भगवती के स्मरण मात्र से सब दुःख छूट उत्तम आनंद प्राप्त होता है कमल समान रूप जिसका है ॥ २२ ॥ यह देवी सुवर्ण के पात्र में उत्तम अमृत का रख लाई सिद्धों ने पान किया जिससे अजर अमर हुए ॥ २३ ॥ पार्वती सहित शिव ने साधकों को बरदान दे अंतर्धान हुए पीछे साधक इच्छित स्थान को गए ॥ २४ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां चत्वारिंशः पटलः ।

शिव बोले । तब चंडेश्वर सहित साधक पूर्वदिशा में जो महादिव्य पुरी इन्द्र की है तहां गए ॥ १ ॥ वह इंद्रपुरी बारह लाख योजन चौड़ी और अठतालीस लाख योजन ऊंची है ॥ २ ॥ वह बारह सूर्य के समान तेजोयुक्त सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित मणि रत्नों से युक्त मंदिरों से समाकुल ॥ ३ ॥ मंदिर के मंडप का बिस्तार सौ योजन का है और प्रतोली द्वारा से युक्त दिव्य सुवर्ण से शोभाय-

ध्वजमालाकुलं दिव्यं तोरणैरुपशोभितम् । नानारत्नसमायुक्तं
दिव्यकांचनवेष्टितम् ॥ ५ ॥ सिंहासनानि रत्नानि हेमरत्न
कृतानि च । तत्र तिष्ठति हेसेन इन्द्रराजा महानृपः ॥ ६ ॥
दिव्यवस्त्रपरीधानो दिव्यगन्धानुलेपनः । दिव्यपुष्पाशिरोबध्वा
दिव्याभरणभूषितः ॥७॥ करे वज्रं गृहीत्वा च सहस्रनयनो
ज्ज्वलः । जटामुकुटधारी च कुंडलानि ज्वलंति च ॥८॥ निर्ज-
रादिसभामध्ये शोभितः पाकशासनः । सूर्यचंद्रानिलेन्दूनां
यमस्य वरुणस्य च ॥ ९ ॥ इन्द्रतेजःसमायुक्ता शोभिता
च महापुरी । गणगंधर्वदेवाश्च ऋषयो सुरपन्नगाः ॥ १० ॥
सभायां परितिष्ठंति सिद्धयक्षांसि योषितः । साधकाश्च गता
दृष्ट्वा इंद्रराजस्य सम्मुखम् ॥ ११ ॥ इंद्र उवाच । विमाना-
रूढमोसिद्धा इंद्रो वचनमब्रवीत । विमानारूढदेवस्य देवकन्या-
समाकुलम् ॥ १२ ॥ चामरैर्वीज्यमानास्तु स्तुतिं कुर्वंति

मान है ॥ ४ ॥ ध्वजाओं की मालाओं से शोभायमान नानारत्न और सुवर्ण
से वेष्टित है ॥ ५ ॥ अनेक रत्न जडित तहां सुवर्ण के सिंहासन हैं हे महासेन !
तहां इंद्र राजा रहता है ॥ ६ ॥ दिव्य वस्त्र पहिने दिव्य गंधअनुलेपन किए
दिव्य वस्त्र शिर में धारण किए संपूर्ण दिव्य आभूषणों से आभूषित ॥ ७ ॥
हाथ में वज्र लिए हजार नेत्रों से प्रकाशित जटामुकुट उज्ज्वल कुंडल धारण
किए ॥ ८ ॥ सब देवताओं की सभा में इन्द्र शोभायमान है ॥ ९ ॥ सूर्य चंद्र
पवन यम वरुण गणगंधर्व ऋषि नाग उसमें विराजते हैं इंद्र के तेज से वह
पुरी शोभायमान है ॥ १० ॥ सिद्ध यक्ष लोगों की स्त्री भी उस सभा में
विराजी हैं साधकों ने तहां जायकर सन्मुख इन्द्र को देखा ॥११॥ इन्द्र बोला ।
हे साधकों ! विमान में बैठो वह विमान देवकन्याओं से युक्त था ॥ १२ ॥
वह स्त्री चमर ढुलाती और स्तुति कर रही थीं और चारों तर्फ प्रेक्षण करती

योषितः । प्रेक्षणीयं प्रकुर्वंति छत्रचामरशोभितम् ॥१३॥ भोजनैः पूरितास्तत्र मणिवैडूर्यमौक्तिकैः । आगताश्च ततः कन्या वदंति साधकान्प्रति ॥१४॥ कन्यका ऊचुः । दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्यगंधानुलेपनं । दिव्यपुष्पं शिरोबध्वा हारकेयूरभूषिताः॥१५॥ करकंकणसंयुक्तं किंकिणीभिरलंकृताः। इंद्रनीलमहानीलपद्मरागोपशोभिताः ॥ १६ ॥ संपूर्णचंद्रवदना सर्वाभरणभूषिताः । सर्वलक्षणसंयुक्ता नानाविद्यापरायणाः ॥ १७ ॥ कन्यका आगतास्तत्र ह्यर्चयंति च साधकान् । चंदनैः कुंकुमैर्युक्तं पुष्पमालामनोहरम् ॥ १८ ॥ गीतं गायंति ताः कन्या वाद्यंते बह्वनेकधा । शंखदुंदुभिनिर्घोषैः काहलैरपिमर्दलैः ॥ १९ ॥ साधकास्तत्र सहिता जल्पंति च परस्परम् । इंद्र उवाच । अस्मिन् स्थाने पुरे रम्ये नानाभोगसमाकुले । यत्र स्थाने महासिद्धा यावच्चंद्रार्कतारकाः ॥ २० ॥ यावद्गंगा च रेवा च गोदावरी

थीं ॥ १३ ॥ मणि वैडूर्य मोतियों से खचित पात्रों में भोजनों को रख कन्या तहां साधकों के पास आई ॥ १४ ॥ कन्या बोली । दिव्य वस्त्र धारण किए और दिव्य गंध लेपन किए शिरों में दिव्य पुष्प धारण किए हार बाजूबंदों से आभूषित ॥ १५ ॥ हाथों में कंकण पहने घुंघुरों से अलंकृत इंद्रनील महानील पद्मराग मणियों से शोभायमान ॥ १६ ॥ सब चंद्रवदनी संपूर्ण आभूषणों से आभूषित और सब लक्षण युक्त अनेक विद्या में निपुण ॥ १७ ॥ ऐसी सब कन्या तहां आई साधकों को पूजने लगीं फूलों की माला सुंदर कुंकुम अर्पण करती भई ॥ १८ ॥ और गीत गाने लगीं और शंख दुंदुभि काळह मर्दल बाजों का शब्द करती भई ॥१९॥ साधक तहां परस्पर वार्तालाप करने लगे । तब इंद्र बोला । हे सिद्धों ! नाना भोगों से संयुक्त यह स्थान है और ये भोग तब तक विद्यमान हैं जब तक सूर्य चंद्र तारा हैं ॥ २० ॥ जब तक गंगा

सरस्वती । यमुना सिंधु कावेरि यावन्नीरं च सागरे ॥ २१ ॥ यावत्तिष्ठंति मेदिन्यां ग्रहनक्षत्रतारकाः । तावदस्मिन्पुरे रम्ये तावत्तिष्ठंति साधकाः ॥ २२ ॥ यत्र स्थाने न रुच्यंते सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । विना रुद्रेण भो शक्र पुरी मह्यं न रुच्यते ॥ २३ ॥ इंद्रनीलैर्महानीलैः पद्मरागोपशोभितं । मणिरत्नसमाकीर्णमिंद्रनगरी सुशोभिता ॥ २४ ॥ देवदेवजगन्नाथ दुर्लभं तव दर्शनम् । पुरीध्यानं ततः कृत्वा शृणु शक्रमहानृप ॥२५॥ न मे भोगस्य कार्यं वै दर्शनार्थं समागताः । विष्णुसंदर्शनार्थं च तत्र गच्छामि देवराट् ॥ २६ ॥ नमस्कारं ततः कृत्वा गंतव्यं पंथमुत्तमम् । साधकाश्च गतास्तत्र विष्णोः पुरमनोहरम् ॥ २७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने एकचत्वारिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । तत्पश्चात्साधकाः सर्वे गता विष्णुपुरं

गोदावरी रेवा सरस्वती यमुना सिंधु कावेरी हैं और जब तक समुद्र में जल है ॥ २१ ॥ और जब तक पृथ्वी ग्रह नक्षत्र तारा हैं तब तक इस रम्य नगर में भोग उपस्थित रहते हैं ॥ २२ ॥ साधक बोले । हे इंद्र ! रुद्र बिना हमको यह स्थान अच्छा नहीं लगता है ॥ २३ ॥ इंद्रनील महानील पद्मरागमणि रत्नों से सुशोभित यह इंद्र की नगरी है ॥ २४ ॥ हे प्रभो ! जगत् के नाथ ! आपका दर्शन दुर्लभ है उस इंद्रपुरी का ध्यान कर बोले हे इंद्र ! सुनो २५ ॥ मुझे भोग की इच्छा नहीं है केवल यहां आपके दर्शन के लिए आये हैं अब विष्णु के दर्शन को जाते हैं ॥ २६ ॥ साधकों ने इंद्र को नमस्कार कर उत्तम पथ को प्रस्थान किया विष्णुभगवान् के नगर को गए ॥ २७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां एकचत्वारिंशः पटलः ।

शिवजी बोले । इस के अनंतर साधक सब विष्णुपुर को गए जो दश

महत् । दशयोजनलक्षाणि उच्छ्रायोपि चतुर्गुणम् ॥१॥ विष्णु पुरी महादिव्या सूर्यकोटिसमप्रभा । तेजोमयं द्योतितं संतप्तकांचनसप्रभमम् ॥ २ ॥ हैमेन रचिता भूमिः प्रासादगृहमाकुलं । ध्वजमालाकुलं दिव्यं चित्रकर्मोपशोभितम् ॥ ३ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नविभूषितं । तत्र तिष्ठंति देवेशो जगन्नाथो जनार्दनः ॥४॥ अग्रतो दृश्यते तत्र वाद्यंते विमनेकधा । शंखदुंदुभिनिर्घोषैः कालहैर्भेरिमर्दलैः ॥ ५ ॥ पटहा वेणुवंशस्य वाद्यंते विविधानि च । नृत्यंत्यप्सरसस्तत्र देवगंधर्वयोषितः ॥ ६ ॥ वशिष्ठ गौतमश्चैव दुर्वासाः व्यासपंडिताः । अनेकैर्ऋषिभिः सर्वैर्ध्वनिर्वेदस्य गीयते ॥ ७ ॥ साधकाश्च गतास्तत्र यत्र देवो जनार्दनः । दृष्ट्वा च साधकाः सर्वे वदंति स्वागतं प्रिये ॥ ८ ॥ श्रीविष्णुरुवाच । अस्मिन्नेव पुरे रम्ये बहुकन्या

लक्ष योजन विस्तार है और इससे चौगुणा ऊंचा है ॥ १ ॥ विष्णु की दिव्य पुरी है जिसकी कांति करोड़ सूर्य के समान है केवल तेजोमय है तपाये हुए सोने के सदृश शोभायमान है ॥ २ ॥ वहां की भूमि सुवर्णमय है बड़े महलों घरों से युक्त है और ध्वजों की मालाओं से चित्रों से विराजमान है ॥ ३ ॥ रत्नों से खचित दिव्य सिंहासन तहां रखे हुए हैं तहां जगत् के स्वामी विष्णुभगवान् विराजते हैं ॥ ४ ॥ तहां भगवान के आगे शंख दुंदुभि प्रभृति अनेक बाजे बज रहे थे ॥ ५ ॥ नाना प्रकारके वेणु वंश के बाजे बज रहे थे अप्सरा और गंधर्वों की स्त्री तहां नाच रही थीं ॥ ६ ॥ और वसिष्ठ गौतम दुर्वासा व्यास आदिक पंडित अनेक ऋषियों सहित वेदध्वनि करते थे ॥ ७ ॥ तहां साधक पहुंचे जनार्दन भगवान बैठे थे साधकों ने दर्शन पाया तब साधकों का स्वागत भया ॥ ८ ॥ श्रीविष्णुभगवान् बोले । बहुत कन्याओं से समाकुल इस पुर में सब साधक विराजैं जब तक चौदह इंद्र

समाकुलं । तिष्ठंतु साधकाः सर्वे यावदिंद्राश्चतुर्दश ॥९॥ श्रीसाधक उवाच । देवदेव महाविष्णो श्रूयतां वचनं मम । आगता च मया दृष्टः दुर्लभं तव दर्शनम् ॥ १० ॥ दुर्लभं सर्वभूतानां देवनामापिदुर्लभम् । अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः ॥ ११ ॥ अद्य मे सफलं जाप्यमद्य मे सफलाः क्रियाः । अद्य मे सफलो वास अद्य मे सफलार्चनम् ॥१२॥ अद्य मे सफलं भाग्यं मुक्तामेवं विधानतः। अद्य दृष्ट्वा च गोविंदं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १३ ॥ अद्य मे सफलः पंथा नमस्तेस्तु जनार्दन। श्रीविष्णुरुवाच । सिंहासनानि दिव्यानि दिव्यरत्नयुतानि च । अत्र तिष्ठंतु भो सिद्धा महावीरा महातपाः। भुंजंतु साधकाः सर्वे तिष्ठंतु गरुडासने ॥ १५ ॥ दिव्यवस्त्रपरीधानं दिव्यगंधानुलेपनम् । दिव्यपुष्पशिरोबध्वा चंदनागरुलेपनम् ॥ १६ ॥ अस्मिन् तिष्ठंतु भो सिद्धा भुंजंतु विपुलां श्रियम् । आचार्यसाधकाः सर्वे भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ १७ ॥ आचार्य

विद्यमान हैं ॥ ९ ॥ साधक बोले । हे देवदेव ! विष्णो ! हमारे बचन को सुनो हम आपके दर्शन के लिए यहां आए हैं आपका दर्शन बहुत दुर्लभ है ॥ १० ॥ संपूर्ण जितने प्राणी हैं और देवताओं को भी आपका दर्शन दुर्लभ है आज हमारा जन्म तप सफल भया ॥ ११ ॥ आज हमारे जप क्रिया वास पूजन सब सफल भए ॥ १२ ॥ आज हमारा भाग्य सफल भया जो गोविंद को देखकर सब पापों से छूट गए ॥ १३ ॥ आज हमारा मार्ग सफल भया हे जनार्दन ! आपके लिए नमस्कार है तब श्रीविष्णु भगवान् बोले । यहां दिव्य रत्नों से युक्त सिंहासन हैं हे महावीरों ! तपस्विओं सिद्धों! यहां रहो दिव्य भोगों को भोगो गरुड़ासन में विराजो ॥ १५ ॥ दिव्य वस्त्रों को पहनो दिव्य गंधों का लेप करो दिव्य पुष्प शिरों में धारण करो ॥ १६ ॥ इस स्थान में रहो विपुल संपत्ति को भोगो हे सिद्धों ! सब तुम आचार्य सहित निवास करो॥१७॥

उवाच। अस्मिन् स्थाने न मे कार्यं सत्यं सत्यं वदाम्यहम्। नमस्कारं ततः कृत्वागतास्ते पंथमुत्तमम् ॥ १८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पेशिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने द्विचत्वारिंशःपटलः ।

ईश्वर उवाच। पश्चाच्च साधकाः सर्वे ब्रह्मलोके गतास्तथा। सप्तलक्षं च विस्तीर्णं ब्रह्मस्थानं पुरं महत् ॥ १ ॥ ब्रह्मस्थानं महादिव्यमुच्छ्रायश्च चतुर्गुणम्। द्वादशादित्यतेजाढ्यं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥ २ ॥ नानारत्नसमाकीर्णं वैडूर्यमणिरश्मिभिः। रम्यं मनोहरं दिव्यमुदितार्कसमप्रभम् ॥ ३ ॥ अग्निज्वालासमोपेतं हेमप्राकारवेष्टितम्। पठंति विविधं स्तोत्रं वाद्यंते च पुनः पुनः ॥ ४ ॥ स्वराणि च महानादं दृश्यते च दिशो दश। चूतचंदनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितम् ॥ ५ ॥ देवगंधर्वसंकीर्णं देवकन्यासमाकुलम्। ध्वजमालाकुलं दिव्यं प्रासादगृहमाकुलम्

आचार्य बोला ! मैं सच सच कहता हूं हमारा यहां कोई काम नहीं इतना कह साधक उत्तम मार्ग को चले ॥ १८ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषा टीकायां द्विचत्वारिंशः पटलः ।

शिव बोले। पीछे सब साधक ब्रह्मलोक को गए जो सातलाख विस्तृत है ॥ १ ॥ वह दिव्य ब्रह्मस्थान अट्ठाईस लाख योजन ऊंचा है और बारह सूर्य के समान तेज युक्त है और करोड़ सूर्य के समान कांतिवाला है ॥ २ ॥ और नाना रत्नों से संयुक्त वैडूर्य मणियों से शोभायमान बड़ा मनोहर उदयकाल के सूर्य के समान कांति वाला है ॥ ३ ॥ अग्नि की शिखा के समान दीप्तिवाला सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित है तहां नाना प्रकार के स्तोत्र पाठ पढ़े जाते और अनेक बाजे बजते हैं ॥ ४ ॥ और स्वरों का नाद दश दिशाओं से होता रहता है और चंदन केलों से शोभायमान है ॥ ५ ॥ और

॥ ६ ॥ वापीकूपतडागानि दृश्यंते च मनोहराः । वेदध्वनिविनिर्घोषैः पठंति च द्विजोत्तमाः॥७॥ नारदश्च भृगुश्चैव वसिष्ठो गौतमस्तथा। कश्यपो वामदेवश्च शुकश्च व्यासपंडितः ॥ ८ ॥ अन्यैश्च ऋषिभिः सर्वैर्वेदध्वनिविगीयते । ब्रह्मलोके महासेन वेष्टिता ऋषिसत्तमाः ॥ ९ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नयुतानि च। तत्र तिष्ठति देवेशो देवदेवः प्रजापतिः॥१०॥ त्रयो देवाः समायुक्तं ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। साधकांश्चागतान्दृष्ट्वा वदंति स्वागतं प्रियं ॥ ११ ॥ सम्मुखंचागतस्तत्र देवदेवः पितामहः। ततः पश्यंति ते सिद्धा ब्रह्मा वै वाक्यमब्रवीत्॥१२॥ ब्रह्मोवाच। भो भो सिद्धा महाप्राज्ञा स्थिता ह्यस्मिन्पुरे सदा। अत्र स्थाने पुरे रम्ये महाभोगसमन्विताः ॥ १३ ॥ इच्छावरं च भोक्तव्यं ब्रह्मलोके च साधकाः। एवं भोगा महावीरा ब्रह्मलोके व्यवस्थिताः ॥ १४ ॥ इदं पंच महासेन यावदिन्द्रा-

देवता गंधर्वों से युक्त देवकन्याओं से शोभित और दिव्य ध्वजा घरों से युक्त है ॥ ६ ॥ और वापी कूप तड़ाग मनोहर दीखते हैं ब्राह्मण वेद की ध्वनी कर रहे हैं ॥ ७ ॥ नारद भृगु गौतम और कश्यप वामदेव शुक व्यासादिक पंडित ॥ ८ ॥ और भी सब ऋषि तहां ब्रह्मलोक में वेदध्वनि करते हैं ॥ ९ ॥ रत्नजड़ित सुवर्ण के सिंहासन शोभायमान हैं तहां देवदेव ब्रह्मा विराजते हैं ॥ १० ॥ और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनों देवता तहां विराजमान थे साधक तहां गए उनको देख सबने स्वागत किया ॥ ११ ॥ ब्रह्मा उनके सन्मुख आए सिद्धों को दर्शन मिला तब ब्रह्मा बोले ॥ १२ ॥ हे सिद्धों! इस नगर में तुम नित्य वास करो यह बड़ा रमणीय नगर है इसमें बड़े भोग हैं ॥ १३ ॥ हे साधकों ! इस ब्रह्मलोक में जैसी इच्छा है वैसे वर को भोगो हे महावीरों ! ब्रह्मलोक में ऐसे भोग हैं ॥ १४ ॥ हे महासेन ! चौदह इन्द्र

श्चतुर्दश । साधकाश्च महासत्यं वदंति ब्रह्मणो यदि ॥ १५ ॥
यदि पंच महासेन उपुर्वचविधीयते । तिष्ठंत्वत्र पुरीं रम्यां भुक्त्वा
भोगान् यथेप्सितान् ॥१६॥ शृणु सिद्ध महाप्राज्ञ भुक्त्वा भो-
गाननेकधा । हेमबद्धा महास्थानमेकचित्तो व्यवस्थितः॥ १७॥
त्रिसंध्यं च भवेन्नित्यं कुर्वन्ति च महाप्रभो । एवं ब्रह्मपुरं दिव्यं
भुक्तभोगान्यथेप्सितान् ॥ १८ ॥ साधक उवाच । देवदेव
प्रजानाथ शृणु त्वं वचनं मम । आगताश्च मया दृष्ट्वा दुर्लभं
तव दर्शनम् ॥ १९ ॥ अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः ।
अद्य मे सफलं जाप्यमद्य मे सफलाः क्रियाः ॥२०॥ त्वां दृष्ट्वा
च प्रजानाथ सर्वपापैः प्रमुच्यते । अद्य मे सफलं भाग्यं
मुक्तोऽहं भवबंधनात् ॥२१॥ गर्भवासेन दुःखेन त्यक्त्वा संसार-
सागरात् । गर्भवासविनिर्मुक्तो तत्पदेवेतिगच्छति ॥२२॥ तेन
दुःखभयाद्भीता कैलासे गमनं कृतम् । विना रुद्रं महाप्राज्ञ न

पांच वार जबतक भोगते हैं तबतक तहां के भोग हैं ऐसा ब्रह्मा ने सत्य २ कहा ॥ १५ ॥ जबतक पांच कल्प बीतते हैं तबतक भोगों को भोगो यह बड़ी उत्तम पुरी है ॥ १६ ॥ हे सिद्धों ! प्राज्ञों ! अनेक तरह के भोगों को भोगो एकाग्रचित्त हो बैठो ॥ १७ ॥ और नित्य त्रिकाल भजन करो यह ब्रह्मपुर बड़ा दिव्य है जैसी इच्छा है वैसा भोग करो ॥ १८ ॥ साधक बोले । हे देव-देव ! हे जगत् के नाथ ! हमारे बचन को सुनिए हम आपके दर्शन को आए दर्शन आपका दुर्लभ है ॥ १९ ॥ आज हमारा जन्म सफल तप सफल और क्रिया सफल हुई ॥ २० ॥ हे प्रजानाथ ! आपके दर्शन से हमारे सब पाप छूट गए आज हमारे भाग्य सफल हुए संसार बंधन से छूट गए ॥ २१ ॥ गर्भवास के दुःख से हम यहां आए अब गर्भवास से छूट गए ॥ २२ ॥ गर्भवा-स के भय से हम कैलास को आए विना रुद्र आपकी पुरी हमको नहीं रुचती

रुच्यते पुरी तव ॥ २३ ॥ ब्रह्मोवाच । ब्रह्मलोकसमो लोकः सुरश्रेष्ठसमः सुरः । ब्रह्माणीसदृशा नारी कथं चार्य न रुच्यते ॥ २४ ॥ अष्टादश सहस्राणि ऋषयो वेदपारगाः । नौकुलोपन्नगाः सर्वे देवास्त्रिदशकोटिभिः ॥ २५ ॥ रतिसर्वमहाश्रेष्ठं देवदेवः प्रजापतिः । कथं भोगा न रुच्यंते इच्छायां च पुनः पुनः ॥ २६ ॥ आचार्य उवाच । अश्वरत्नमहाभोगास्तिष्ठंते च गृहे मम । रथनागसमायुक्तैर्विमानानि ह्यनेकधा ॥ २७ ॥ सेनाकोटिसहस्राणि पूर्णचंद्रमुखाः स्त्रियः । सत्यं सत्यं पुनः सत्यं विना रुद्रं न रुच्यते ॥ २८ ॥ श्रुत्वा धर्मपुराणानि त्यक्त्वा चात्र समागताः । नमस्कारं ततः कृत्वा प्रजानाथं नमाम्यहम् ॥ २९ ॥ एवमुक्त्वा ततः श्रुत्वा वेगेन पवनो यथा । धर्मराजपुरीं गत्वा आचार्यः साधकैः सह ॥ ३० ॥

इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने त्रिचत्वारिंशः पटलः ।

है ॥ २३ ॥ ब्रह्मा बोले । ब्रह्मलोक के समान लोक नहीं ब्रह्मा जैसा और देवता नहीं और ब्रह्माणी सरीखी कोई नारी नहीं है हे आचार्य ! यहां रहने की तुमको क्यों रुचि नहीं ॥ २४ ॥ यहां अठारह हजार ऋषि वेदपारंगत रहते हैं और तीस करोड़ देवता स्थित हैं और बड़े कुलीन सर्प हैं ॥ २५ ॥ यहां बड़ा श्रेष्ठ नगर है बड़े भोग हैं क्योंकर तुमारी इच्छा यहां रहने की नहीं होती ॥ २६ ॥ आचार्य बोला । मेरे घर में उत्तम घोड़े हाथी रथ आदि बड़े भोग विद्यमान हैं ॥ २७ ॥ हजारों करोड़ों सेना हैं पूर्ण चन्द्र के समान मुख की स्त्री हैं सच २ कहता हूं परन्तु विना रुद्र सब तुच्छ है ॥ २८ ॥ धर्मशास्त्र और पुराणों को सुनकर छोड़ यहां आए हैं आप प्रजा के नाथ हैं आपको नमस्कार है ॥ २९ ॥ इतना कह कर पवन के वेग के समान साधकों सहित आचार्य धर्मराज की पुरी को चले ॥ ३० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां त्रिचत्वारिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । तत्पश्चात्साधकाः सर्वे धर्मराजपुरीं गताः। कैलासदक्षिणे भागे स्थिता चावंतिका पुरी ॥ १ ॥ द्वादशलक्ष विस्तीर्णमुच्छ्रायश्च चतुर्गुणम् । शोभते च महादिव्यं योजनश्च पुरी महान् ॥ २ ॥ हेमरत्नसमायुक्तं लोहप्राकारवेष्टितम् । रम्यं मनोहरं दिव्यं सर्वेषां च भयापहम् ॥ ३ ॥ सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नयुतानि च । तत्र तिष्ठति देवेशो धर्मराजो महानृपः ॥४॥ तिष्ठंति किंकराः सर्वे चित्रगुप्तश्च तिष्ठति । पापं पुण्यं च लोकानां लिख्यते तत्र पत्रिका ॥ ५ ॥ सुकृतं दुष्कृतं किंचिद्भुंजंति च सुखं दुःखम् । महानरकाश्च भोक्तव्या कृतं कर्म शुभाशुभम् ॥६॥ ऊर्ध्वपादाः स्थिताः केचित्तप्ततैले पुनः पुनः । केचित्तु रौरवे घोरे कुंभीपाके तथैव च ॥७॥ केचित्तु कृमिणः स्थाने केचिन्मुद्गरताडिताः । हस्तिपादस्थिताः केचित्तप्तांगारेषु-लोडिताः ॥८॥ गंडपाके स्थिताः केचित्तप्तांगारेषु भर्जिताः ।

शिवजी बोले । इतने के पीछे साधक धर्मराजकी पुरी को गए वह पुरी कैलास के दाहिने भाग में है ॥ १ ॥ बारह लाख योजन विस्तीर्ण और अठतालीस लाख योजन लंबी है यह पुरी बड़ी दिव्य शोभायुक्त है॥२॥ सुवर्ण रत्नों से युक्त लोहे के प्राकार से वेष्टित दिव्य मनोहर पुर जो सब के भय को दूर करनेवाला है ॥३॥ तहां दिव्य सिंहासन सुवर्ण के रत्नों से जड़ित बने हैं तहां धर्मराज विराजते हैं।४। किंकर लोग सब और चित्रगुप्त तहां स्थित है लोगों के पाप पुण्य देख लिखते हैं ॥ ५ ॥ भले बुरे कर्म जैसे किए हैं उनके अनुसार सुख दुख नरकों को जीव भोगते हैं ॥ ६ ॥ किसी के पांव ऊपर शिर नीचे है कोई तपाये हुए तेल में गेरे हैं बार २ निकाल रहे फिर डाल रहे हैं कोई कुंभीपाक में कोई रौरव नरक में हैं ॥ ७ ॥ कोई कीड़ों से कटाए जा रहे हैं कोई मुद्गरों से पीटे जाते कोई हाथी के पांव तले दबाए जाते कोई लाल अंगारों में डाले जाते हैं ॥ ८ ॥ कोई गंडपाक में कोई अंगारो में भुने जाते कोई निर्जन वन में स्थित

अरण्ये च स्थिताः केचित्स्थिताः केचिन्महार्णवे ॥ ९ ॥ केचि-
द्बद्धाश्च पाशेन केचिद्गुह्यंति चांकुशैः । पाशबद्धाः स्थिताः केचि-
त्कोदंडैश्च प्रपीडिताः ॥ १० ॥ आलिंगितास्तप्तस्तंभैः रुदंति
दुःखपीडिताः । खड्गेन छेदिताः केचित्केचिन्मुशलपीडिताः ॥ ११ ॥
केचिल्लोहातप्तपाशैर्वज्रशक्तिप्रछेदिताः । संस्थिताश्च कृतं कार्यं
क्रियंते पापकर्मणा ॥ १२ ॥ सप्तजन्मकृतं पापं भुंजते च पृथक्
पृथक् । पाषाणैः पेषिताः केचिन्नानादुःखैश्च पीडिताः ॥ १३ ॥
पुण्यं धर्मं कृतं यैस्तु भुंजंते सुकृतं महत् । वालुकायां च तप्तायां
कुंभीपाके पुनः पुनः ॥ १४ ॥ केचिच्च कंटकैस्तीक्ष्णैस्तप्तलो-
हकमेव च । केचित्कृमिराशिस्थाने केचिच्चाररुदंति च ॥ १५ ॥
बहुधा वेदनां प्राप्ताः भुशुंडी च पृथक् पृथक् । अस्मिन्स्थाने
महाघोरे सर्वजन्तुप्रपीडिताः ॥ १६ ॥ केचित्तु तैलयंत्रैस्तु
लोहपात्रे तथैव च । केचित्तु शाल्मलीवृक्षैः केचिद्विकटसंकटे

कोई महासमुद्र में गेरे हुए हैं ॥ ९ ॥ कोई रस्सी से बांधे कोई अंकुशों से
वेधे कोई दंडोंसे पीटे जारहे हैं ॥ १० ॥ कोई तपाए हुए खंभों में चिपटाए
जाते दुःख के मारे चिल्लाते हैं कोई खड्गों से काटे जाते कोई मुशल से ताडन
किए जाते हैं ॥ ११ ॥ कोई लोहों के पाश से कोई वज्र शक्ति से काटे जाते
जैसे २ जिसने पाप कर्म किए उसके अनुसार दुःख भोग रहे हैं ॥ १२ ॥ सात
जन्म के किए पाप अलग २ भोगते हैं कोई पाषाणों से पीसे जाते हैं इस तरह
अनेक दुःखों से व्याकुल हैं ॥ १३ ॥ जिन्होंने धर्म पुण्य कर रखा है वे सुख को
भोगते हैं पापी तपाए हुए बालू में गेरे जारहे हैं कोई कुंभीपाक में
॥ १४ ॥ कोई तीखे कांटों से वेधे जारहे कोई तपाए लोहे में बैठाये
जारहे कोई कृमियों के समुह में रखे हैं चिल्लाते जाते हैं ॥ १५ ॥ बहुत
प्रकार के दुःख को भोगते हैं पृथक् २ भुशुंडी शस्त्र से काटे जाते हैं इस
स्थान में सब जंतु जिन्होंने पाप किए हैं ये घोर दुःख भोग रहे हैं ॥ १६ ॥

॥ १७ ॥ भुंजते दुष्कृतं कर्म कृतं यच्च शुभाशुभम् । यैः पूर्वं निंदितं शास्त्रं दुष्कृतं च कृतं महत् ॥ १८ ॥ ते नरा नरकं यांति महद्दुःखं पुनः पुनः । अनेकनरकांश्चैव भुंजंते च पृथक् पृथक् ॥ १९ ॥ व्रजंति रौरवे घोरे यत्र धर्मपुरे सदा । साधकाश्च गतास्तत्र यत्र धर्मपुरी महान् ॥ २० ॥ दृष्ट्वा समागतान् सिद्धान् धर्मो वचनमब्रवीत् । धर्मराज उवाच । सिद्ध सिद्ध महाप्राज्ञ तुष्टोऽहं तव साधनात् ॥ २१ ॥ इच्छानुरूपसदृशं वरं याचंतु सत्तमाः । साधक उवाच । यदि तुष्टोऽसि मे धर्म श्रूयतां वचनं मम ॥ २२ ॥ गर्भवासभयाद्भीतास्त्यक्त्वा संसारसागरम् । तत्र स्थाने च ये यांति महानरकपीडिताः ॥ २३ ॥ यदि तुष्टोऽसि मे देव धर्मराजो महाप्रभुः । पंचवर्षशतं दिव्यं मोक्षं च कुरु दुःखतः ॥२४॥ धर्मो मोक्षं ततः कृत्वा गताः स्वर्गं च जंतवः । सर्वेषां तु भवेन्मोक्षः

कोई तैल यंत्रोंसे पीड़ित कोई लोहे के वर्तनों में कोई शाल्मली वृक्षों में लटकाये हैं ॥ १७ भले बुरे कर्म जिसके जैसे हैं वैसे दंड तहां दिये जारहे हैं और जिन्होंने शास्त्र की निंदा की बड़ा पाप किया ॥ १८ ॥ वे महाघोर नरक को जाते हैं बार २ बड़ा दुख मिलता है अनेक नरक उनको भोगने पड़ते हैं ॥ १९ ॥ साधक वहां गए जहां बड़ी धर्मराजपुरी है जिसमें सदा धर्मराज की आज्ञा से पापियों को दंड मिलता है ॥ २० ॥ सिद्धों को आते देख धर्मराज बोले हे सिद्धों ! हे महाभागो ! तुमपर मैं बड़ा प्रसन्न हूं ॥२१॥ जो इच्छा है वह वर को मांगो तब साधक बोले हे धर्मराज ! हमपर यदि प्रसन्न हो तो हमारे बचन को सुनो ॥ २२ ॥ गर्भवास भय के मारे संसार को छोड़ यहां आए हैं यहां जो आए हैं वे बड़े कठिन नरक को भोग रहे हैं ॥ २३ ॥ हे देव ! धर्मराज ! यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो पांचसौ वर्ष पर्यंत क्रूर कर्म न करें और मोक्ष हो ॥ २४ ॥ तब धर्मराज ने उन जंतुओं को मोक्ष किया सब स्वर्ग को गए

स्वर्गे क्रीडा पृथक्पृथक् ॥ २५ ॥ धर्मेण मोक्षणं कृत्वा धर्मो वचनमब्रवीत् । धर्मराज उवाच । शृणु साधक तत्वेन मम वाक्यं सुनिश्चितम् ॥ २६ ॥ अंतरे स्थापितः शंभुर्भजनीयः सुरैर्यदा । सत्यं सत्यं वदाम्येतत्कुंडमस्त्यतिभैरवम् ॥२७॥ शतं वर्षस्य ह्यायुष्यं महाभोगेन संयुतम् । प्रथमं आविशेर्विबपिता पिंडस्य मध्यतः ॥२८॥ सुकृतं दुष्कृतं कर्म लिख्यंते तत्र पत्रिकाः । आयुष्यं सर्वभुक्तं च सुखदुःखक्रमेण च ॥ २९ ॥ भाषंते धर्मराजस्य किंकराश्चतु प्रेषितम् । किंकराः षट्चतुश्चैव पृथिवी च तु मध्यतः ॥ ३० ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ध्यात्वा देवं निरंजनं । स्वर्गं प्रयांति विमलं नात्र कार्या विचारणा ॥३१॥ शृणु सिद्ध महावीर महायोगतपोरत । आगता वरमिच्छंतु ददामि वरमुत्तमम् ॥३२॥ साधक उवाच । पृच्छंति साधकाः सेन शृणु धर्म नृपस्तथा । चित्तं मनो वचो धर्म ध्यायंते निर्म-

तहां क्रीड़ा करने लगे ॥ २५ ॥ धर्मराज उनको मोक्ष करके बोला । हे साधकों ! मेरे बचन को निश्चय तत्व से सुनो ॥ २६ ॥ इसके अंतर में शिवजी स्थापित देवतों ने कर रखा है मैं सत्य २ कहता हूं यहां कुंड भयंकर है ॥२७॥ यहां दिव्य शत वर्ष की आयु है पहिले प्रपिताका पिंड तब पितामह तब पिता का पिंड होता है ॥ २८ ॥ और पाप पुण्य कर्म की गिनती यहां चित्रगुप्त लिखता है आयुष्य सुख दुःख कर्म फल लिखे अनुसार भोगे जाते हैं ॥ २९ ॥ धर्मराज के भेजे हुए किंकर सब बोलते हैं ६४ किंकर धर्मराज के आकाश पृथिवी के बीच संचार करते हैं ॥ ३० ॥ ब्रह्मा विष्णु रुद्र इनका ध्यानकर स्वर्ग प्राप्त होता है इसमें कोई विचारणा नहीं है ॥ ३१ ॥ धर्मराज बोले । हे महावीरों ! हेसिद्धों । तुम बड़े योग तप में निष्ठ हो वर मांगो मैं देता हूं ॥३२॥ शिव बोले । हेस्कंद ! साधक धर्मराज को बोले मन बच कर्म से ध्यान करते

लं मनः ॥३३॥ मुंच वर्षशतं पुण्यं पंच मोक्षं कुरु धर्मयोः । मोक्षं च क्रियते सर्वे गताः स्वर्गं च जंतवः ॥ ३४ ॥ धर्म उवाच । अस्मिन् स्थाने महाभोगा देवदानवदुर्लभाः । तिष्ठंति साधकाः सर्वे जरामृत्युविवर्जिताः ॥ ३५ ॥ साधक उवाच । न वयं भोगमिच्छाम आगता देवदर्शने । न वक्तव्यं महाराज धर्मराजो महानृपः ॥ ३६ ॥ वयं च तत्र गच्छामो यत्र देवो महेश्वरः । दृष्टा च ते पुरी चाद्य सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥३७॥ अवश्यं तत्र गंतव्यं यत्र देवो महेश्वरः । आचार्यस्य प्रसंगेन सिद्धा सर्वागता पुरी ॥३८॥ भूयश्च साधकाः सर्वे शिवलोके गतास्तदा । प्रतिदृष्ट्वा पुरी सर्वा यत्र गास्तत्र आगताः॥३९॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने चतुश्चत्वारिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । पश्चाच्च साधकाह्येते आगताः शिवशासने ।

हैं ॥ ३३ ॥ यहां जन्तु जितने हैं इनका मोक्ष करो यह सब स्वर्ग को चले जावैं ॥ ३४ ॥ धर्मराज बोले । साधक तुम यहां रहो जरामृत्यु से छूट यहां महा भोगों को भोगो ॥ ३५ ॥ साधक बोले । हम भोग की इच्छा से यहां नहीं आए केवल आपके दर्शन के लिये आए हैं यह बात न कहिए ॥ ३६ ॥ हम तो जहां शिव हैं वहां जाएंगे आज तुम्हारी पुरी देखली सच सच बोलते हैं ॥ ३७ ॥ अवश्य वहां जाएंगे जहां शिव भगवान् शोभते हैं आचार्य के प्रसंग से सब सिद्ध इस नगर को आए ॥ ३८ ॥ साधक सब पुरियों को देख फिर वही कैलास शिवपुरी को आए जहांसे घूमने गए थे ॥ ३९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां चतुश्चत्वारिंशः पटलः ।

शिवजी बोले । पीछे सब साधक शिव के शासन से तहां आए पार्वती सहित

उमया सहितो रुद्रो वरं दत्वा पुनःपुनः ॥ १ ॥ सप्तकोटीस्ततः कन्या एकैकस्य प्रदीयताम् । गौरी च सदृशा मूर्त्तिः सर्वालंकारभूषिताः ॥ २ ॥ सर्वभोगसमोपेतास्तिष्ठंते साधकोत्तमाः । इच्छारूपधराः सर्वे स्त्रियः स्वच्छंदगामिनी ॥ ३ ॥ क्रीडयंति महाभोगान् यावद्देवो महेश्वरः । कैलासभुवने चैव शिवशक्तिश्च तिष्ठति ॥४॥ उत्तमं पतितं विश्वे श्रेष्ठं च तारयेच्छिवम् । सुशीलाश्च स्त्रियः सर्वा नव सप्त च यौवने ॥ ५ ॥ सामुद्रिकलक्षणाः सर्वा यत्र यत्र समन्विताः । दिव्यांगवस्त्रधारिण्यो दिव्यकांचनरत्नयोः ॥६॥ मृगाक्ष्यो हंसगामिन्यो दिव्यजातिसमप्रभा । कृष्णा वेणी शिरश्चैव कुंडलाभरणोज्ज्वलाः ॥ ७ ॥ कोकिलास्वरनादेन भाषयंति परं पदम् । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः ॥ ८ ॥ उरःस्थलं फलाकारं किंकिणीउच्छ्रमेखला । गंभीरनाभिस्त्रिवली पादौ नूपुरभूषितौ ॥ ९ ॥

रुद्र ने उनको वारंवार वर दिया ॥ १ ॥ एक एक को सात करोड़ कन्या दी जावें जो गौरी के मूर्त्ति सदृश सब अलंकारों से भूषित हों ॥ २ ॥ संपूर्ण भोगों से युक्त साधक यहां रहें और ये स्त्री सब अपनी इच्छानुकूल रूप धारण करती हुई स्वच्छंदगामिनी रहें ॥ ३ ॥ जब तक महेश्वर देव हैं तब तक यहां के भोगों को भोगैं यहां कैलास में शिव शक्ति विराजमान हैं ॥ ४ ॥ सब संसार में ये श्रेष्ठ हैं इनका उद्धार शिव से यह नवयौवना हैं ॥ ५ ॥ सब सामुद्रिक शुभ लक्षणों से युक्त दिव्य शरीर वाली दिव्य वस्त्रों को धारण किए रत्न जड़ित दिव्य आभूषणों को धारण किए ॥ ६ ॥ और मृग के समान नेत्र वाली हंस के समान चलने वाली दिव्य जाति पुष्प के समान कांति वाली वेणी और कुंडल आदि आभरणों से शोभायमान हैं ॥ ७ ॥ कोकिला के स्वर के समान भाषण करने वाली कंकण हार केयूरोंसे आभूषित ॥८॥ छाती में फलाकार और घूंघुरों से कटिसूत्रों से शोभायमान और नाभि जिनकी गहरी है और

भुंजंति च स्त्रियः सर्वाः जरामृत्युविवर्जिताः । स्थापितं पदकै-
लासं योनिगर्भविवर्जिताः ॥ १० ॥ साधकासंगतं कन्या-
संगतिः सम उच्यते । ईश्वर उवाच । देवतासमप्रीत्यंचप्रतिष्ठा
यत्र शेखरे ॥ ११ ॥ क्रीडंति साधकास्तावद्यावद्देवो महेश्वरः।
साधक उवाच । देवदेव जगन्नाथ दुर्लभं तव दर्शनम् ॥१२॥
मह्यं भोगा न रुच्यंते सत्यं सत्यं सदाशिव । चरणे ते सदा
वासो दीयतां गिरिजापते ॥ १३ ॥ देवेश पार्वतीनाथ सर्व-
देववशंकरम् । महाकैलासं गंतव्यं यत्र देवः परः शिवः ॥१४॥
त्वद्ध्यानस्मरणं कृत्वा पूजयित्वा पुनःपुनः । उमया सहितं देवं
हृदये च व्यवस्थितम् ॥ १५ ॥ जगन्माता जगच्छ्रीश्च त्रै-
लोक्ये सचराचरम् । त्वं माता सर्वभूतानां प्रसादं कुरु ईश्वर-
रि ॥ १६ ॥ श्रीदेव्युवाच । सिद्ध सिद्ध माहाप्रज्ञ महावीरा
महाबलाः । तुष्टाहं च महासिद्धाः वृणीध्वं वरमुत्तमम् ॥१७॥

त्रिवली से शोभित पावों में नूपुर लगे हैं ॥ ९ ॥ सब तहां जरामरण से रहित दिव्य भोगों को भोगती हैं कैलास स्थान में गर्भवास वर्जित हैं ॥ १० ॥ साधक इन कन्याओं से संगत होवें । शिवजी बोले । जो इस शिखर पर रहें वह देव तुल्य होवें ॥ ११ ॥ जब तक शंकर रहें तब तक साधक यहां क्रीड़ा करते हैं साधक बोले । हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! आपका दर्शन दुर्लभ है ॥ १२ ॥ मैं सत्य २ कहता हूं हमको भोग रुचते नहीं हे सदाशिव ! हे पार्वतीपते ! सदा अपने चरण में हमको वास दीजिए ॥ १३ ॥ हे देवेश ! पार्वतीनाथ ! जहां परम शिव हैं उस महाकैलास को जायेंगे ॥ १४ ॥ आपका ध्यान और वार वार पूजन कर पार्वती सहित शंकर का नित्य हृदय में ध्यान करते रहैं ॥ १५ ॥ तुम सब जगत् की माता और लक्ष्मी संपत्ती हो तीनों लोक में जितने चराचर हैं सब की माता हो हे ईश्वरी ! हमपर अनुग्रह करो ॥ १६ ॥ तब पार्वतीजी बोली । हे सिद्धों ! महाप्राज्ञ ! तुमपर मैं प्रसन्न हूं

साधक उवाच । त्वं माता सर्वलोकानां अहं च शरणं तव । महापथे च गंतव्यं पंथं देहि सुरेश्वरि ॥ १८ ॥ महापंथे च गंतव्यं न विघ्नः स्यात्कदाचन । हृष्टपुष्टं महादेवं साधकानां पुनःपुनः ॥१९॥ गच्छाचार्य महापंथे मत्प्रसादाच्च निश्चयम् ॥ जयशब्दं प्रकुर्वंति गच्छंतिच महापथम् ॥ २० ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने पंचचत्वारिंशः पटलः ॥

अग्रे च दृश्यते तत्र महावैकुंठमंदिरम् । महाकाशं महादिव्यं महाधर्मः प्रवर्तते ॥ १ ॥ द्वादशकोटिविस्तीर्णं उच्छ्रायश्च चतुर्गुणम् । मणिरत्नसमाकीर्णं हेमप्राकारवेष्टितम् ॥२॥ पद्माकारं समायुक्तं अष्टदलैश्चशोभितम् । कोटिमध्ये च वैकुंठं दलैरुपरि शोभितम् ॥३॥ अष्टद्वारं च वैकुंठं प्रतीहारं च षोडशं।

जो वर चाहिए सो मांगो ॥ १७ ॥ साधक बोले । तुम सब लोक की माता हो हमारा तुम ही शरण हो हे सुरेश्वरि ! हमको महापंथ का मार्ग दीजिये ॥१८॥ महापंथ को जाने में हमको कभी विघ्न न हो महादेव के दर्शन के लिए हम हृष्ट पुष्ट प्रसन्न रहें ॥ १९ ॥ देवी बोली । हे आचार्य ! महापंथ को जाइये मेरे प्रसाद से कोई भय तुमको नहीं होगा निश्चय है तब साधक प्रसन्न हो जय २ बोलते हुए महापंथ को गए ॥ २० ॥ इति श्रीकेदाकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने भषाटीकायां पंचचत्वारिंशः पटलः ।

साधक आगे चले तहां वैकुंठ मंदिर दृष्ट आया महा दिव्याकाश देखने में आया जहां बड़ा धर्म है ॥ १ ॥ १२ करोड़ विस्तीर्ण और ४८ करोड़ योजन ऊंचा मणिरत्नों से खचित सुवर्ण के प्राकार से वेष्टित ॥ २ ॥ कमल के समान आकार वाला वह कमल आठ दल से शोभित है जिसके कोठी के मध्य में वैकुंठ शोभायमान है ॥३॥ वैकुंठ के आठ द्वार हैं और सोलह प्रतीहार

जयं विजयं चैव महायोधैश्च वेष्टितम् ॥ ४ ॥ मध्ये लिंगं च वैकुंठं तत्र गत्वा च साधकाः। हेमरत्नसमाकीर्णं तोरणैर्द्वारशोभितम् ॥ ५ ॥ इन्द्रनीलैर्महानीलैः पद्मरागोपशोभितम्। कोटिसूर्यप्रतीकाशं कोटिचंद्रसुशीतलम् ॥ ६ ॥ प्रस्फुरंति महाकाशमग्निज्वालासमप्रभम्। लक्षयोजनविस्तीर्णमुच्छ्रायश्च चतुर्गुणम् ॥ ७ ॥ स्तंभा हेममयाः सर्वे मणिरत्नयुतास्तथा। सिंहासनानि दिव्यानि हेमरत्नकृतानि च ॥८॥ तत्र तिष्ठति देवेशः परः शिवजगद्गुरुः। तिष्ठंति च सुराः सर्वे ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ९ ॥ कुबेरइन्द्रवरुणधर्मराजैश्च शोभितः। सभायां तत्र तिष्ठंति वाद्यंते चाप्यनेकधा ॥ १० ॥ प्रदक्षिणं प्रकुर्वन्ति नानाविधिह्यनेकधा। शंखदुंदुभिनिर्घोषैः काहलैर्भेरिमर्दलैः ॥ ११ ॥ पटहैर्वेणुवंशैश्च गर्जितं ध्वनिनादितम्। नृत्यंते ह्य-

हैं और जय विजय महायोधाओं से स्थित हैं मध्य में वैकुंठ है जो सुवर्ण और रत्नों से युक्त है और तोरणों के द्वारों से शोभायमान है साधक तहां जाके स्थित हुए ॥४॥ इन्द्रनील महानील पद्मरागमणियों से सुशोभित और करोड़ सूर्य के तुल्य प्रकाश वाला करोड़ चंद्रमा के समान शीतल ॥ ५ ॥ अग्नि के शिखा समान प्रभा जिसकी ऐसा महाकाश में लाखयोजन विस्तीर्ण और चारलाख योजन ऊंचा ॥ ७ ॥ तहां मणि रत्नों से जड़ित सुवर्ण के स्तंभ बने हैं और मणि रत्नों से जड़ित सुवर्ण के सिंहासन हैं ॥ ८ ॥ तहां देव देव के स्वामी जगत् के गुरु परम शिव स्थित हैं और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर सब देवता हैं ॥ ९ ॥ इंद्र वरुण कुबेर धर्मराज सब तहां विद्यमान हैं और उस सभा में अनेक बाजे बजते हैं ॥ १० ॥ और सब शिवजी की प्रदक्षिणा कर रहे हैं और शंख दुंदुभि कालह मर्दलों का शब्द होरहा है ॥११॥ और पटह वंश वेणु के गर्जन शब्द से समाकुल हुआ है तहां संपूर्ण आभूषणों को

प्सरो रंभा सर्वाभरणभूषिताः॥ १२ ॥ हेमरत्नैर्भूषिताश्च विद्युत्तेजसमप्रभाः। दिव्यवस्त्रपरीधाना दिव्यगंधानुलेपनाः ॥ १३ ॥ सर्वलक्षणसंयुक्ता नूपुराभिरलंकृताः। करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः ॥ १४ ॥ संपूर्णचंद्रवदनाः कुंडलाभरणोज्ज्वलाः । शिरपुष्पसुगंधाश्च नागवल्लीविभूषिताः ॥ १५ ॥ रूपयौवनसंपूर्णा गायंति कोकिलस्वरम्। पठंति विविधस्तोत्रं सर्वशास्त्रविशारदाः ॥ १६ ॥ मणिरत्नसमोपेताः पुष्पमालाभिशोभिताः। चंदनागरुकर्पूरैर्वासितं च पुरं महत् ॥१७॥ चूतचंदनसंयुक्तं कदलीखंडमंडितम् । केतकीशतपत्रैश्च तिष्ठंते यत्र गायकाः ॥१८॥ दृश्यते तत्पुरं सर्वं नानाविधमनेकधा॥१९॥इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणेशिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने षट्चत्वारिंशःपटलः ।

ईश्वर उवाच । साधकास्ते गतास्तत्र ददृशुः परमेश्वरम् । दंडवत्प्रणताः सर्वे पतंति धरणीतले ॥ १ ॥ कृतांजलिपुटा

पहने रंभादि अप्सरा नाच रही हैं ॥ १२ ॥ जो सुवर्ण रत्नों से भूषित और बिजली के समान कांतिवाली दिव्य वस्त्र धारण किए दिव्य गंध पहने ॥१३॥ सब लक्षणों से संयुक्त नुपूर पहने हाथों में कंकण लगाए हार बाजूबन्दों से आभूषित हैं ॥ १४ ॥ सब चंद्रमा के समान मुख वाली कुंडलों से शोभित शिरों में पुष्प पहने तांबूल को चावती हैं ॥ १५ ॥ सब रूप यौवन से युक्त पुष्प मालाओं से शोभित हैं चंदन अगरू शतपत्र आम्र चंदन केले के खंभों से मंडित वह पुर है तहां गायक लोग गाय रहे हैं पुर बड़े सुगन्ध द्रव्यों से सुगंधित है ॥ १८ ॥ वह नगर नाना प्रकार की शोभासे शोभायमान है ॥ १९ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां षट्चत्वारिंशः पटलः ।

शिवजी बोले । साधक तहां पहुंचे परमेश्वर का दर्शन किया दंड के समान भूमि में पड़के नमस्कार किया ॥ १ ॥ और अंजलि बांध झुककर फिर भी

भूत्वा साधकाः प्रणमंति च । देवदेवं जगन्नाथं दुर्लभं तव दर्शनम् ॥२॥ साधक उवाच । अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः । अद्य मे सफलं कार्यं दृश्यते परमेश्वरः ॥ ३॥ अद्य मे सफलं ध्यानं दृष्ट्वा च परमेश्वरम् । अद्य मे सफला विद्या अद्य मे सफलं यशः ॥ ४ ॥ अद्य मे सफलः पंथा ज्ञानं च सफलं मम । त्रयो देवाश्च भाषंते वरं देहि महेश्वर ॥ ५ ॥ ईश्वरस्य त्रयो देवा वरं दद्याच्च साधकाः । अमृतं पिबते सिद्धा जरामृत्युविवर्जिताः ॥ ६ ॥ पुनःपुनः साधकानां मृत्युलोके न गच्छंति । पश्चाच्च साधकाः सर्वे अजराअमरावती ॥ ७ ॥ महापंथं महास्थानं देवदानवदुर्लभम् । गुह्याद्गुह्यतरं गोप्यं यदि स्थानं न रुच्यते ॥ ८ ॥ तत्र गत्वा महासेन पुनर्जन्म न विद्यते । गोपनीयं प्रयत्नेन न देयं यस्य कस्य चित् ॥ ९ ॥ साधकानां वरं दत्वा तिष्ठते च यथासुखम् । महाविशालवैकुंठे यत्रेच्छा तत्र

प्रणाम किया और बोले कि प्रभो ! आपका दर्शन दुर्लभ है ॥ २ ॥ साधक बोले । आज परमेश्वर के दर्शन से हमारा जन्म और तप सब कार्य सफल हुए ॥ ३ ॥ और भगवान् के दर्शन से ध्यान विद्या यश सब सफल हुए ॥ ४ ॥ और ज्ञान मार्ग सफल हुए जो तीनों देवताओं का दर्शन प्राप्त हुआ हे महेश्वर ! वर को दीजिए ॥ ५ ॥ तब तीनों देवताओं ने साधकों के लिए वर देने की प्रेरणा की तब भगवान् ने साधकों को वर दिया तुम अमृत पीवो साधकों ने वर पाय अमृतपान किया तब जरा मरण से छूटगए ॥ ६ ॥ बार २ जो मृत्युलोक में प्राप्त होना था सो छूटा सब साधक अजर अमर हुए॥७॥ यह महापंथ महास्थान देवदानव को भी दुर्लभ है और गुप्त से गुप्त है किसी को प्राप्त नहीं होता ॥ ८ ॥ हे महासेन ! तहां जाके फिर जन्म नहीं होता है यह गुप्त से गुप्त यत्न से गुप्त रखना चाहिए और जिस किसी को नहीं देना ॥९॥ भगवान्

तिष्ठताम् ॥ १० ॥ महाकल्पं महापंथं शृणु स्कंद महातपाः । कोटिमध्येषु सिद्धास्ते गच्छंति च महापथम् ॥ ११ ॥ चतुर्युगे साधकानां तेषां संख्या विधीयते । सप्तलक्षं कृतयुगे सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ १२ ॥ त्रेतायां पंचलक्षं च गच्छंति च महापथम् । द्वापरे तु त्रिलक्षं च कलौ लक्षैकसाधकाः ॥१३॥ कैलासभुवने चैव शिवशक्तिश्च तिष्ठति । दिव्यांगवस्त्रधारिण्यो नानाभरणभूषिताः ॥ १४ ॥ अष्टगंधोदकेनैव मिश्रितं यक्ष-कर्दमम् । कुंकुमागरुकर्पूरं कस्तूरीचंदनं तथा ॥ १५ ॥ दिव्य-पुष्पसुगंधेन कुंकुमाक्रांतमस्तकाः । उद्गिरंति च तांबूलं नेत्रे रेखा च कज्जले ॥ १६ ॥ ललाटे तिलकं चैव दिव्यजातिसमप्रभा । मृगाक्षीहंसगामिन्यः कुंडलाभरणोज्वलाः । मुखे चंद्रकलाश्चैव दंता दाडिमवत्तथा । करकंकणसंयुक्ता हारकेयूरभूषिताः ॥१७॥

ने साधकों को वर दे कहा यथासुख इस महाविशाल वैकुंठ में जहां इच्छा हो तहां रहो ॥ १० ॥ हे स्कंद ! यह महापंथ महाकल्प है सुनो करोड़ो में कोई एक महापंथ को जा सकता है ॥ ११ ॥ चारों युगों में जब जब जितने महापंथ को गए उनकी गिनती कही जाती है सत्ययुग में सात लाख गए ॥ १२ ॥ त्रेतायुग में पांच लाख द्वापर में तीन लाख कलियुग में एक लाख गए सत्य २ बोलता हूं ॥ १३ ॥ कैलास भुवन में शिव शक्ति विराजमान हैं जो दिव्य शरीर वाली दिव्य वस्त्र दिव्य आभरणों से शोभायमान हैं ॥ १४ ॥ अष्टगंध मिश्रित यक्षकर्दम कुंकुम अगरु कर्पूर कस्तूरी चंदन महासुगंधों से ॥ १५ ॥ दिव्य पुष्पों से मस्तक उनका अलंकृत है तांबूल चाबती रहती हैं नेत्रों में जिनके कज्जल लगा है ॥ १६ ॥ ललाट में तिलक लगा है दिव्य जाति पुष्प के समान कांति वाली जिनके नेत्र मृग के समान हैं और हंस के समान चलने वाली कुंडलों के आभरणों से प्रकाशमान शिर में चंद्रकला विराजती हैं और दांत जिनके दाड़िम के बीज के समान हैं हाथों में कंकण पहने हार बाजूबंदों से भूषित ॥१७॥ स्तन जिनके फलाकार हैं कानों में ताटंक

उरःस्तनफलाकारं ताटंककटिमेखलाः । गंभीरनाभिकूपा च सर्वास्ताः कोकिलस्वराः ॥ १८ ॥ गुणलक्षणसंपूर्णज्ञानध्यान-समाकुलाः । जातिस्मरक्षमोपेताः गुह्यकादिसमाश्रिताः ॥१९॥ भुंजंति च स्त्रियः सर्वा जरामृत्युविवर्जिताः । स्थापितं पदकैलासं योनिमार्गनिवृत्तये ॥ २० ॥ ईश्वर उवाच । देववाससमं प्राप्ता शिवस्य वचनं तथा । मद्रूपा भवतां सिद्धाः सत्यंसत्यं वदाम्यहम् ॥ २१ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्तिकेयसंवादे कैलासगमने सप्तचत्वारिंशः पटलः ।

ईश्वर उवाच । ॐ श्रुत्वा कल्पं कृतं ध्यानं विना कल्पेन सिध्यति । नानासिद्धिप्रदं स्थानं सिद्धिसिद्धेश्च हेतवे ॥ १ ॥ पठंते च सहस्रद्वयं महापंथेन गम्यते । दिव्यमार्गं स्कंददेव सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २ ॥ महापंथं महापुण्यं सत्यं सत्यं षडानन । भावेन पठते नित्यं गंगास्नानफलं लभेत ॥ ३ ॥

पहने कटि में कांची पहने और गहरी नाभि वाली और स्वर जिनका कोकिला के समान है ॥ १८ ॥ संपूर्ण गुण लक्षणों से युक्त ज्ञान ध्यान में तत्पर जाति स्मरण वाले गुह्यकों से सेवित ॥ १९ ॥ यह सब स्त्री जन्म मरण से रहित हैं यह कैलास स्थान योनिमार्गनिवृत्ति के लिए स्थापित है ॥ २० ॥ शिवजी बोले । जो साधक यहां प्राप्त होते हैं वे देवता के तुल्य होवैं यह मेरा बचन है इससे सिद्ध यहां पहुंचकर मेरे रूप को प्राप्त होते हैं यह सत्य २ है संदेह नहीं ॥ २१ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे कैलासगमने भाषाटीकायां सप्तचत्वारिंशः पटलः ।

शिवजी बोले । इस वृत्तांत को सुन और ध्यान कर बिना कल्प के ही सिद्धि को प्राप्त होता है यह स्थान केवल सिद्धि का कारण है ॥ १ ॥ जो दो सहस्र इसका पाठ करता है वह महापंथ में जाता है वह दिव्य मार्ग है सच २ है संदेह नहीं ॥ २ ॥ हे स्कंद ! महापंथ महापुण्य है जो एक भाव से इसका पाठ करता है वह गंगा स्नान का फल पाता है सत्य जानो ॥ ३ ॥

शिवशास्त्रं न ये मूढाः शिवनिंदां गुरोस्तथा । कुर्वन्ति सिद्धिर्नो तेषां सत्यं वच्मि न संशयः ॥ ४ ॥ गृहे यस्य सदा तिष्ठेत् शिवकल्पं महापथं । ब्रह्महत्यादिपापानि नश्यंति तस्य निश्चयम् ॥ ५ ॥ यद्गोप्यं च सुरैः सर्वैर्यद्गोप्यं मुनिमानवैः । यद्गोप्यं गणगंधर्वैस्तच्छास्त्रं कथितं मया ॥ ६ ॥ तेषां रुद्रपदे वासो कल्पकोटिसहस्रकम् । अंतकाले मनुष्याणां कल्पं शृण्वंति श्रद्धया ॥ ७ ॥ गयायां पिंडदानेन काशीदर्शनमुत्तमम् । दिव्ययोगेश्वरस्थानं केदारस्य च दर्शनम् ॥८॥ दृष्ट्वा बदरिकास्थानं सर्वदा च शिवालयम् । गवां कोटिसहस्राणि स्नानं भागीरथीजले ॥ ९ ॥ कल्पं शृण्वंति ये नित्यं भक्तियुक्तेन चेतसा । सर्वपापैर्विमुच्यंते हीच्छासिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ १० ॥ यज्ञो दानं तपश्चैव कल्पेन सदृशं न हि । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कल्पं नित्यं समाश्रयेत ॥ ११ ॥ वन्हिश्च शीततां याति नैव

जो मूढ शिव की शिवशास्त्र की गुरु की निंदा करते हैं उनको कभी सिद्धि नहीं होती है सच कहता हूं ॥ ४ ॥ जिसके घर में सदा केदारकल्प रहता है उसके ब्रह्महत्यादिक पाप भी नष्ट होते हैं निश्चय है ॥ ५ ॥ जो सब देवता गण गंधर्व मुनि मानवों ने बड़ा गुप्त कर रखा था वह मैंने तुमको कह दिया ॥ ६ ॥ जो मनुष्य कल्प को सुनते हैं उनको हजार करोड़ कल्प तक रुद्रलोक का वास मिलता है ॥ ७ ॥ जो फल गया में पिंडदान करने से मिलता हैं और काशी के दर्शन से मिलता है वह फल केदारनाथ के दर्शन से मिलता है ॥८॥ बदरिकाश्रम और शिवालय जो केदार और भागीरथी के दर्शन स्नान से करोड़ गोदान का फल है ॥ ९ ॥ जो भक्तियुक्त मन करके नित्य कल्प को सुनते हैं वे सब पापों से छूट जाते हैं और इच्छा पूर्ण होती है ॥ १० ॥ यज्ञ दान तप कोई भी कल्प के बराबर नहीं है तिससे सब यत्न करके कल्प का आश्रय करना ॥ ११ ॥ अग्नि शीतता को प्राप्त होजाय परंतु कल्प झूठा न

कल्पो मृषा भवेत् । सर्वतीर्थेषु संस्नात्वा कल्पतुल्यं भवेन्नच ॥ १२ ॥ महेशान्न परो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः । अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्वं गुरोः परम् ॥ १३ ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं स्वरभेदाविवर्जितम् । तत्सर्वं क्षम्यतां नाथ त्वं गतिः परमेश्वर ॥ १४ ॥ काव्यकर्त्ता यदा व्यासो लेखको गणनायकः । तदापि चलते बुद्धिरितरेषां तु का कथा ॥ १५ ॥ रजन्यां च यथा स्वप्नं अभ्रच्छाया यथा रविः । जले च बुद्बुदाकारं तथा संसारिणो जनाः ॥ १६ ॥ इदं कल्पं महापुण्यं ये शृण्वंति पठंति च । सर्वपापविनिर्मुक्ताः शिवसायुज्यमाप्नुयुः ॥ १७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे पंचयोगीन्द्रेच्छासिद्धिजीवन्मुक्तपरब्रह्मप्राप्तये महापथकैलासगमने केदारतीर्थफलश्रुतिवर्णनं नाम अष्टचत्वारिंशः पटलः ग्रंथश्च समाप्तः ॥

जाय सब तीर्थों में स्नान का फल भी केदारकल्प के सदृश नहीं होता है ॥ १२ ॥ शिव से बड़ा कोई देव नहीं महिमन् से उत्तम स्तुति दूसरी कोई नहीं अघोर मंत्र से अन्य मंत्र श्रेष्ठ नहीं ॥ १३ ॥ हे नाथ ! जो अक्षर पद स्वर भेद रहित है वह सब क्षमा कीजिए हे परमेश्वर! आपही गति हैं ॥ १४ ॥ जब काव्य ग्रंथ को रचने वाले व्यास हैं और लेखक गणेश रहें तौभी बुद्धि चलायमान हो जाती है और लोगों की क्या कथा है ॥ १५ ॥ रात्रि में जैसा स्वप्न मेघ की छाया में जैसा सूर्य जल में जैसे बुलबुले उठते हैं वैसे संसारी जीव हैं ॥ १६ ॥ जो इस महापुण्य केदारकल्प का श्रवण वा पाठ करते हैं वे सकल कलुष से मुक्त हो अंतकाल में शिव सायुज्य मुक्त के पात्र होते हैं ॥ १७ ॥ इति श्रीकेदारकल्पे शिवपुराणे शिवकार्त्तिकेयसंवादे पंचयोगीन्द्रेच्छासिद्धिजीवन्मुक्तपरब्रह्मप्राप्तये महापथ कैलासगमने भाषा टीकायां केदारतीर्थफलश्रुतिवर्णनंनाम अष्टचत्वारिंशः पटलः ग्रंथश्च समाप्तः ॥

पता—प० रामचंद्र नम्बूरी बद्रिकाश्रम गढ़वाल ।

नेत्र संजीवनी अवलेह ।

यह नेत्रों की महौषधि हिमालय की कई दिव्य वनस्पतियों के योग से इस माफिक तैयार की गई है कि बच्चों की दुखनी आंखों से लेकर फूली, माड़ा, रतौंधी, खुजली, नासूर, सूजन, लाली, पानी बहना, दृष्टि की कमी आदिक नेत्रों के यावत् रोग में थोड़े ही समय के व्यवहार से बहुत बड़ा फल दिखाती है, यद्यपि ग़मीरा, मोती आदिके सुरमे फलदायक होते हैं, परंतु यह "संजीवनी अवलेह" नेत्र रोगों की बेजोड़ दवा है । मूल्य १ डिबिया का ॥)

कैलास कीर्ति मसाला ।

यह मसाला केवल हिमालय की सुगन्धित जड़ी बूटियों के योग से तय्यार कियाजाता है, यह दाल, शाक, दही, रायता, चटनी आदिक में डालने से स्वादयुक्त पदार्थ बना डालती है, यह अत्यन्त रक्तशोधक अग्निप्रदीपक बलकारक चीज है, मनमुग्धकारी, गर्म मिजाज को शीतल करने-वाला यह परमोपकारी मसाले के १ बंडल का मूल्य ।।।)

द्यौधूप ।

यद्यपि इस समय तरह तरह के धूपों का व्यवहार होता है किन्तु यह द्यौधूप हिमालय की अनेक गुणवान सुगन्धविशिष्ट जड़ियों के द्वारा तय्यार की जाती है इसी हेतु देव, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर ऋषि मुनि आदिकों को प्राणप्रिय यह धूप सब में श्रेष्ठ है, इसकी सुगन्धि से परमानन्द ही प्राप्त नहीं होता है बल्कि निरंतर कुछ दिनके धूप सूंघने से असाध्य अपस्मार मूर्च्छा आदिक के रोगी इस भयानक रोग से मुक्त होजाते हैं, मृतवत्सा दोष अर्थात् बच्चा होकर मर जाना या मृतक संतान का होना, गर्भ खंडन होजाना, बालकों पर प्रेत का चिपटना, देव परियों की छाया, गाय आदिक पर दरिद्र-नरदृष्टि से दुग्धबाधा और महामारी आदिक वायु के भ्रष्ट होजाने से बीमारियों में इस धूप के व्यवहार से इष्ट सानुकूल के सदृश मदद मिलती है, प्रत्येक गृहस्थ मात्र को यह धूप अपने घरों में हरवक्त प्रस्तुत रखनी चाहिये । बद्रिकाश्रम प्रांत में जनार्दन, आशापुरी आदि कई तरह की धूप होती है परन्तु इसके सामने वह नाममात्र की ही धूप है और यह प्रत्यक्ष ही द्यौधूप यथा नाम तथा गुण है । वर्षों बालने योग्य धूप के १ बंडल का मूल्य १)

दंतवज्र मंजन ।

एक नहीं दो नहीं लाखों तरह के दांत के मंजन प्रचलित हैं, बेशक कोई दांतों को साफ करते हैं कोई मामूली दर्द वगैरह को दूर करते हैं परंतु यह नहीं कि जो हिलते हुये दांतों की जड़ को जमादे ।

कैलासी दंतवज्र मंजन में यह गुण है कि दांत दाढ़ गला मुंह मसूढ़े जिव्हा आदिक की जहां जहां यह पहुंचा सब बीमारियों को आराम कर दांतों को दृढ़, मजबूत और स्वच्छ बना डालती है । जो लोग छोटी उम्र से ही इसका व्यवहार करते हैं उनके दांतों में कोई बीमारी ही नहीं होती और दांतों के हिलने का तो उन्हें खौफ ही नहीं रहता, यह अपूर्व जड़ी का मंजन दांतों की बीमारी में १।२ बार के ही लगाने से अपना चमत्कार दिखाने लगती है विशेष क्या कहें व्यवहार कर खुद देखियेगा । मूल्य बड़ी डि. १) छोटी ।।)

कैलासकीर्ति चाय ।

यह बात प्रायः सब जानते हैं कि अंग्रेजी तथा तिब्बती (भोटानी) आदिक चाय क्रमशः बल वीर्य्य को नष्ट कर नपुंसकत्व दोष उत्पन्न करती है, यह सर्वश्रेष्ठ 'कैलासकीर्ति चाय' हिमालय शिखर की कई दिव्य २ पौष्टिक रक्तशोधक रसायनिक वनस्पतियों के योग से तय्यार की जाती है, इसके सेवन से सदा रक्त की शुद्धि तथा वृद्धि होकर धातुविकार, अंतरज्वर, वायुजनित गांठ और नसों का दर्द, मन्दाग्नि, सुस्ती आदिक दोष सहमूल नष्ट हो शरीर की पुष्टि, कोष्ठ की शुद्धि, अग्नि की दीप्ति, धातु की वृद्धि और सब इन्द्रियें तेज़ हो शरीर आरोग्य रहता है, सदा दुष्ट जल वायु से बचाकर स्वास्थ्य की रक्षा करती है, स्त्रियों की प्रसवांत पीड़ा में यह अद्‌भुत तरह से अपना गुण दिखाती है अर्थात् मृत्यु मुख से बचाती है तथा स्त्रियों के दुग्धदोष को हटाकर निर्दोष करती है जिससे बच्चे हृष्ट पुष्ट और दीर्घायु होते हैं क्योंकि यह हिमालय की बहुमूल्य वनस्पतियों के उपादान से बनी है जिस कारण यह समस्त कारणोद्‌भुत रक्तदुष्टि के दोषों को निवारण कर खून साफ़ करती है, इस महौषधि चाय के सेवन से बिगड़ा हुआ खून सुधर जाता है और उस खून के लालरवों की संख्या को बढ़ाने के सबब खून का तेज़ बढ़ता है, यह औषधि और चाय दोनों पदार्थ है, इसके शक्ति से शरीर यन्त्र और रोमकूपादि

का मल निर्गमद्वार साफ़ रहने के सबब पसीना के साथ शरीर का सब पदार्थ सहज में निकल जाता है, यह चाय की ही तौर बनाई जाती है और वैसे ही मीठा मिलाकर पीई जाती है, केवल इसे कुछ देर तक पकाना पड़ता है जबतक कि गुलाबी सुर्ख रंग न आजावे, यह (कैलास कीर्ति चाय) ऐसी दिव्य गुणवान वनस्पतियों के उपादान से बनाई जाती है कि इसे सब ऋतुओं में सब अवस्था में बालक, वृद्ध, वनिता, रोगी, अरोगी, सभी निर्विघ्न सेवन कर लाभ उठासक्ते हैं जो मनुष्य कुछ दिन सेवन कर इसकी महाउपकारिता शक्ति को जान चुके हैं वे दूषित चायों का नाम तक नहीं लेते और नित्य इसे पीकर आरोग्य रहते हैं ।

ब्राह्मी चूर्ण ।

स्मरणशक्तिवर्द्धक, मेधावी, बुद्धिप्रद, बलवीर्यदातृ, स्वरसुधारक, वाणीदाता यह इसके जगत्‌विख्यात गुण हैं । प्रायः हिमालय प्रांत की ब्राह्मी में ही यह गुण तत्काल दृश्यमान होते हैं । मूल्य बड़ी डिबिया ।।=)

कैलासी त्रिफला ।

यह त्रिफला चूर्ण यावत् रोग और अनुपानों में व्यवहृत होती है, विधिवत् संग्रह की हुई त्रिफला चूर्ण के आधपाव का मूल्य ।=)

अस्ली शुद्ध शिलाजतु ।

महाशयगण ! " शुद्ध शिलाजतु " के गुण जगत्‌विख्यात हैं । इस महौषधि के नियमित सेवन से रोगमात्र का हटना तो रहा ही परंतु मृत मनुष्य भी पुनः जीवित होसक्ता है । आजकल कई तरह की बिलायती अश्लील और अभक्ष्य गुणशून्य महौषधियों से भारतवासियों का चित्त हटकर अपनी चमत्कारिक शुद्ध धर्मानुकूल शुद्ध शिलाजतु सरीखी महौषधियों पर प्रेम और विश्वास होने लगा है यह भी हमारे भाग्योदय का मूल कारण है, किन्तु आजकल कई विश्वासघाती कपटी ऋषि मुनि पंडित नामधारी लोगों ने परलोक की बिलकुल सुध बुध बिसारकर हाय रुपया इतिकर्तव्यता मान झूठे सच्चे विज्ञापनों की वृष्टि से दुनियां को ऐसा वशीभूत करडाला है कि लोगों को झूठ और सच्च की परीक्षा करना ही मुश्किल होगया है, हा ! ऐसे कपटियों के जाल में एक बार फंसकर तो वे सज्जन दूसरी बार के लिये न फंसने की बार बार घोर

कसमें खाही लेते हैं परंतु एकबार उन्हें फंसजाना ही होताहै, इसके लिये हम उन्ह सज्जनों के प्रति महान शोक प्रकट करते हैं, भगवान ऐसे नीच प्रकृतियों की अवश्य खबर लेते हैं, बस यही संतोष करना चाहिये। यह बद्रिकाश्रम पुण्य पवित्र स्थल है और इसमें सदा काल भगवान प्रत्यक्ष विराजमान हैं, हम लोगों ने बड़े पुण्य फल से यहां का बास प्राप्त किया है, जबकि सुरीति से ही हम लोग द्रव्य की ढेर लगा सक्ते हैं तब क्योंकर कुरीति का व्यवहार किया जाय। इसी मूल मंत्र पर " कैलासकीर्ति औषधालय " स्थापन किया गया है और इस महौषधालय में यहां उत्पन्न होनेवाली " शिलाजतु " का विभाग खोला गया है, इस महौषधालय की शिलाजतु २० वर्ष से भारत और अन्यत्र देशों में विख्यात और विश्वासनीय है क्योंकि यह असली पहाड़ों से लाई जाकर विद्वान वैद्यवरों के हाथ से प्राचीन आयुर्वेद की क्रिया से रसायन पद्धति के अनुसार सूर्य्य की ताप में अनेक जड़ी और वनस्पतियों के क्वाथ में घृत और दुग्धादि में शोधन कर सिद्ध की जाती है इसीसे यह प्रत्यक्ष फल देनेवाली कही गई है, अशुद्ध, मिश्रित, कच्ची, शिलाजीत से क्या क्या अनिष्ट होते हैं यदि लिखा जाय तो एक ग्रन्थ ही बने, इसी लिये हमने ९० भारतीय श्रेष्ठ वैद्यों द्वारा आयुर्वेद की सम्मति मात्र से बंगाल के सुप्रसिद्ध राजवैद्य कविराज महामहोपाध्याय श्री द्वारिकानाथ यतीन्द्रनाथ सेन कविरंजन महोदय प्रोफेसर नेशल मेडिकल कालिज मंत्री आयुर्वेदीय विभाग कलकत्ता चिकित्सक फ्री हास्पिटल परीक्षक ने० मे० का० इत्यादि इत्यादि द्वारा संपादन कराकर "शिलाजतु चमत्कार " ग्रंथरत्न तय्यार किया है, इसको पढ़ने से शिलाजतु के विषय सब ज्ञात और प्रस्फुट हो जायंगे। हम सज्जन जनों से यही निवेदन करते हैं कि आपका स्वदेशी एक क्षुद्र मैंने इस महौषधि शिलाजतु को आप लोगों की स्वास्थ्य रक्षा के लिये किस काष्ठातक पहुंचाया है एक बार सेवन कर मेरा परिश्रम देखें जिससे कि मैं भी सफल होऊं। सर्वसाधारण के लिये मूल्य १ तोले विशुद्ध शिलाजतु का १।) १२ तोले के खरिददार को २ तोला उपहार दिया जाता है।

मिलने का पता—

गवर्नमेन्ट कन्ट्राक्टर शिलाजतु

कैलासकीर्ति औषधालय

बद्रिकाश्रम (गढ़वाल)।

सिद्ध अघोर कवच ।

इस ग्रन्थरत्न को पढ़ने से पाठकों को ज्ञात होगा कि अघोर मंत्र जाप से ही सिद्ध और साधकों ने देवताओं को दुर्लभ और अभेद्य मार्गों से प्रवेश करतेहुये सदेह कैलासगमन किया है, इसी महामंत्र ने उन्हें अनेक घोर आपत्तियों से मुक्त किया है, इसी मंत्रराज को हमने कुछ काल तक कैलास शिखर स्थित एक सिद्ध पीठ पर अनुष्ठान द्वारा सिद्ध कर अष्टधात "यंत्र" में सुशोभित किया है। भूतनाथ-भवानीपति देवदेव महादेवजी की कृपा से यह कवच परमसिद्धिदायक सर्वगुणसम्पन्न हुआ है। इसको पास में रखने से राजद्वार में सदा जय होती है, अनेक आपत्तियों से मनुष्य मुक्त होता है, दुष्ट स्त्री वशीभूत होती है, सदा धनधान्यादि से पुरुष सम्पन्न रहता है, शत्रु उसपर कदापि आक्रमण नहीं करसक्ते, यह सदा शत्रुओं का नाश करता है, भूतबाधा राक्षसबाधा, मृतवत्सा दोष दूर करने में तो यह परम सहायक है, स्त्रियों को नित्य धारण कराने से बंध्या भी पुत्रवती होती है। यह कवच श्रेष्ठ "अघोर कवच" पुरुषों को सर्व सिद्धिप्रदायक है। कैलासपति की पूजार्थ दक्षिणा १।) रुपया मात्र।

पं० रामचंद्र नंबूरी शर्म्मा
बद्रिकाश्रम (गढ़वाल)